महामति श्री प्राणनाथजी प्रणीत

श्री प्रकाश

(हिन्दी)

श्री राज श्यामाजी

प्रकाशक

श्री ५ नवतनपुरीधाम

जामनगर

निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराज

महामति श्री प्राणनाथजी महाराज

श्री प्रकाश प्रारम्भ

(हिन्दुस्तानी)

कछु इन विध कियो रास, खेल फिरे घर ।
खेल देखनके कारन, आईयां उमेदां कर ॥ १

इन्द्रावती कहती है, योगमाया द्वारा रचित वृन्दावनमें कुछ इस प्रकारसे रासलीला कर फिर हम ब्रह्मात्माओंकी सुरता (क्षण मात्रके लिए) अपने मूलघर-परमधाममें लौटी. मायावी खेल देखनेकी इच्छासे ही हम इस संसारमें आई थीं.

उमेदां न हुईयां पूरन, धाख मनमें रही ।
तब धनीजीऐं अंतरगत, हुकम कियो सही ॥ २

हमारी इच्छा (व्रज-रासमें) पूरी न हो सकी. इसलिए दु:ख का अनुभव करनेकी चाह मनमें शेष रह गई. तब धामधनीने अन्त:करणमें प्रेरणा कर (परोक्षरूपसे) पुन: आदेश दिया.

तब तीसरो रचके खेल, स्यामाजी आए इत ।
तब हम भी आईयां तित, स्यामाजी खेले जित ॥ ३

तब इस तीसरे ब्रह्माण्डकी रचना होने पर सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजीके रूपमें श्री श्यामाजीका अवतरण हुआ. श्रीश्यामाजी जहाँ पर लीला कर रहीं थीं, ऐसे जगतमें हम (ब्रह्मात्माएँ) भी सुरता रूपमें आईं.

स्यामाजीको धनिएं, आवेस अपनों दियो ।
सब केहेके हकीकत, हुकम ऐसो कियो ॥ ४

धामधनीने श्रीश्यामाजीको अपना आवेश दिया. उन्होंने उनको सब कुछ समझाया और मायावी जगतमें भ्रमित आत्माओंको जागृत करनेका आदेश दिया.

इन्द्रावती लागे पाए, सुनो प्यारे साथ जी ।
तुम चेतो इन अवसर, आयो है हाथ जी ॥ ५

इन्द्रावती चरणोंमें प्रणाम कर कहती है, हे प्यारे सुन्दरसाथजी ! सुनो, हाथमें आए हुए इस अवसरका लाभ उठाकर सचेत हो जाओ.

प्रकरण १ चौपाई ५

साथको प्रबोध-राग धन्यासरी

याद करो तुम साथजी, हाथ आयो अवसर जी ।
आप डार्‌या ज्यों पेहेले फेरें, भी डारियो निसंक फेर जी ॥ १

हे सुन्दरसाथजी ! स्मरण करो कि तीसरे ब्रह्माण्डमें आनेका अवसर हमें मिला है. जिस प्रकार प्रथम अवतरणमें व्रजसे रासमें जाते समय हमने स्वयंको श्रीकृष्णके चरणोंमें समर्पित किया था, उसी प्रकार जागनीके इस ब्रह्माण्डमें भी धनीके चरणोंमें निश्चित रूपसे समर्पित हो जाओ.

सुंदरबाई इन फेरे, आए हैं साथ कारन जी ।
भेजे धनिएं आवेस देयके, अब न्यारे न होए एक खिन जी ॥ २

श्रीसुन्दरबाईकी आत्मा सद्‌गुरु श्रीदेवचन्द्रजी सुन्दरसाथको जगानेके लिए जागनीके इस ब्रह्माण्डमें प्रकट हुए हैं. धामधनीने उन्हें अपना आवेश देकर भेजा है. अब वे हमसे एक क्षणके लिए भी अलग नहीं होंगे.

सुपनेमें भी खिन ना छोडे, तो क्यों छोडे साख्यात जी ।
दया देखो पीउजीकी हिरदे मांहें, विध विधकी विख्यात जी ॥ ३

स्वप्न (व्रज, रास) में भी उन्होंने हमें एक क्षणके लिए भी नहीं छोड़ा था,

तो अब वे हमें साक्षात् सद्गुरुके रूपमें आकर इस जागनीके ब्रह्माण्डमें कैसे छोड़ेंगे ? सद्गुरु धनीकी दयाको अपने हृदयमें देखो, वह विभिन्न प्रकारसे दिखाई दे रही है.

ऐसी बात करे रे पीउजी, पर ना कछु साथको सुध जी ।
नींद उडाए जो देखिए आपन, तो आए हैं आप ले निध जी ॥ ४

प्रियतम धनी हमें जगानेके लिए प्रेमसे बातें करते हैं, फिर भी सुन्दरसाथको कुछ भी सुधि नहीं होती. अज्ञान रूपी नींदको उड़ाकर देखेंगे तो हमें ज्ञात होगा कि सद्गुरु तारतमरूपी निधि लेकर आए हैं.

सुपनेमें मनोरथ किए, तो तित भी पीउजी साथ जी ।
सुंदरबाई ले आवेस धनी को, न छोडे आपना हाथ जी ॥ ५

स्वप्नवत् अवस्था (व्रज, रास) में हमने जब सुखकी इच्छा की थी, तो वहाँ पर भी प्रियतम धनी हमारे साथ रहे. इस जागनीके ब्रह्माण्डमें सुन्दरबाईके अवतार श्रीदेवचन्द्रजी धामधनीका आवेश लेकर आए हैं. अब वे हमारा हाथ नहीं छोड़ेंगे.

धनी न देवें दुख तिल जेता, जो देखिए वचन विचारी जी ।
दुख आपनको तो जो होत है, जो माया करत हैं भारी जी ॥ ६

धामधनी हमें थोड़ा-सा भी दुःख नहीं देते. यदि हम उनके वचनों पर विचार करें तो हमें ऐसा अनुभव होगा कि हम तो सांसारिक सुखोंको ही महत्त्व देकर उन्हींमें मग्न रहते हैं. इसलिए हमें दुःखका अनुभव होता है.

अंतरध्यान समें दुख दिए, ए आसंका उपजत जी ।
तिन समें संसार न किया भारी, साथें दुख देखे क्यों तित जी ॥ ७

रासलीलाके अन्तर्गत श्रीकृष्णजीके अन्तर्धान होने पर हमें दुःख हुआ था. इससे मनमें यह आशंका उठती है कि जब गोपियोंके रूपमें हम व्रजको छोड़कर श्रीकृष्णजीसे जा मिले थे, तब तो हम लोगोंने संसारको उतना महत्त्व भी नहीं दिया था, फिर वहाँ हम ब्रह्मात्माओंने दुःख क्यों देखा ?

दुख तो क्योंए न देवे रे पीउजी, ए विचारके संसे खोइए जी ।
याद वचन तो आवे रे सखियो, जो माया छोडते घनों रोइए जी ॥ ८

प्रियतम धनी अपनी आत्माओंको किसी भी प्रकारका दु:ख नहीं देते हैं. इस वास्तविकता पर तारतम ज्ञान द्वारा विचार कर अपने मनके सभी संशय दूर कर लो. जब हमें मायाको छोड़ते हुए बहुत रोना पड़ जाएगा, तभी हमें धामधनीके वचन याद आने लगेंगे.

खेल याद देनेको मेरे पीउजी, दुख दिए अति घनें जी ।
साथें मनोरथ एह जो किए, धनिएं राखे मन आपने जी ॥ ९

दुनियाँके खेल याद दिलानेके लिए ही धामधनीने हमें अन्तर्धानके समय विरहका घोर दु:ख दिया. क्योंकि हम सब ब्रह्मात्माओंने परमधाममें यही (दु:ख देखनेकी) इच्छा की थी. इसलिए धामधनीने दु:खका अनुभव करवा कर हमारी मनोकामनाएँ पूर्ण कीं.

आपन मायाकी होंस जो करी, और माया तो दुख निधान जी ।
सो याद देनेको रे साथ जी, पीउ भए अंतरध्यान जी ॥ १०

हे सुन्दरसाथजी ! हमने स्वयं ही माया का खेल देखनेकी तीव्र इच्छा व्यक्त की थी और यह माया तो निश्चय ही दु:खरूपिणी है. हमें इन दु:खोंको याद करानेके लिए ही अपने प्रियतम श्रीकृष्णजी रासलीला करते हुए अन्तर्धान हुए.

ना तो ए अपना रे पीउजी, अधखिन बिछोहा ना सहे जी ।
एह विचार जो देखिए साथजी, तो तारतम प्रगट कहे जी ॥ ११

अन्यथा हमारे धनी आधा क्षणके लिए भी हमारा वियोग सह नहीं सकते. हे सुन्दरसाथजी ! यदि इस बात पर विचार कर देखेंगे तो तारतम ज्ञान इस रहस्यको स्पष्ट कर देगा.

इन समें तारतमकी समझन, क्योंकर कहिए सोए जी ।
अनेक विधका तारतम इत, तब घर लीला प्रगट होए जी ॥ १२

इस समय हमें तारतम ज्ञानकी समझ प्राप्त हुई है. इसलिए कैसे कहें कि उस

समय धनीने हमें दुःख दिया. क्योंकि इस जागनीके ब्रह्माण्डमें तारतम ज्ञान अपने अखण्ड प्रकाशके द्वारा व्रज, रास, जागनी एवं परमधाम की विभिन्न लीलाओंको स्पष्ट कर रहा है.

पेहेचानवेकों पीउजी अपना, करूं तारतम विचार जी ।
साथ सकल तुम लीजो दिलमें, ना रहे संसे लगार जी ॥ १३

अपने धामधनी और परमधामकी पहचान करवानेके लिए मैं तारतमके वचनोंका विवेचन कर रही हूँ. हे सुन्दरसाथजी ! तुम सब अपने अपने मनसे इस पर विचार कर लो, अब थोड़ा-सा भी संशय शेष नहीं रहेगा.

पेहेली बेर तहां ए निध ना हुती, तारतम जोत रोसन जी ।
तो ए फेरा हुआ रे साथको, तुम देखो विचारी मन जी ॥ १४

प्रथम बार व्रज तथा रास लीलाके समय तारतम ज्ञानरूपी निधि नहीं थी और उसका प्रकाश भी नहीं था. इसीलिए हमें पुनः इस ब्रह्माण्डमें आना पड़ा है, इस बात पर विचार करो.

आसंका ना रहे किसीकी, जो कीजे तारतम विचार जी ।
सो रोसनाई ले तारतमकी, आए आपनमें आधार जी ॥ १५

यदि तारतम ज्ञान पर विचार करके देखें तो किसीके भी मनमें किसी भी प्रकारकी आशङ्का नहीं रहेगी. ऐसे तारतम ज्ञानका प्रकाश लेकर धामधनी हमारे बीच सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजीके रूपमें पधारे हैं.

अब इन उजाले जो न पेहेचाने, तो आपन बडे गुन्हेगार जी ।
चरने लाग कहे इन्द्रावती, पीउजीके गुन अपार जी ॥ १६

अब भी इस तारतम ज्ञानके प्रकाशमें अपने सद्गुरुको नहीं पहचान सके तो हम बहुत बड़े अपराधी होंगे. इन्द्रावती चरणोंमें प्रणाम कर कहती है, प्रियतम धनीके गुण असीम हैं.

प्रकरण २ चौपाई २१

साथ सकल तुम याद करो, जिन जाओ वचन बिसर जी ।
धनी मिले आपनकों मायामें, जिन भूलो ए अवसर जी ॥ १

हे सुन्दर साथजी ! याद करो, परमधाममें धामधनीके साथ जो बातें हुईं थीं उन्हें भूलना नहीं. धामधनी इस मायामें भी सद्गुरु के रूपमें पुनः प्राप्त हुए हैं. ऐसे सुअवसरको भूलना नहीं चाहिए.

सुंदरबाई अंतरगत कहे, प्रकास वचन अति भारी जी ।
साथ वचन ए चित दे सुनियो, देखियो तारतम विचारी जी ॥ २

सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी (सुन्दरबाई) मेरे हृदयमें बैठ कर इस प्रकाश ग्रन्थके मार्मिक वचन कहला रहे हैं. हे सुन्दरसाथजी ! इन वचनोंको ध्यानपूर्वक सुनो और तारतम ज्ञान पर भली भाँति विचार कर देखो.

एही चाल तुम चलियो साथजी, एही पांउ परवान जी ।
प्रगट मैं तुमको पहले कह्या, भी कहूं निरवान जी ॥ ३

हे सुन्दरसाथजी ! सद्गुरु द्वारा बताए गए इसी (व्रजसे रासमें जाते समयका) प्रेम मार्गका अनुसरण करो. यही मार्ग हमारे लिए योग्य है. यह बात मैंने पहले (रास ग्रन्थमें) भी स्पष्ट रूपसे की थी. अब पुनः निश्चय पूर्वक इसीकी पुष्टि कर रही हूँ.

अब जिन माया मन धरो, तुम देखी अनेक जुगत जी ।
कै कै बिध कह्या मैं तुमको, अजहूं ना हुए त्रपत जी ॥ ४

अब तुम मायाके प्रति रुचि मत रखो, क्योंकि तुमने इसे भली-भाँति देख लिया है. इसके विषयमें मैंने कितनी बार तुम्हें सचेत किया है तथापि अभी तक तुम इस मायासे तृप्त नहीं हुए.

जब लग तुम रहो मायामें, जिन खिन छोडो रास जी ।
पचीस पख लीजो धामके, ज्यों होए धनीको प्रकास जी ॥ ५

जब तक तुम इस मायावी संसारमें रहो तब तक रास ग्रन्थके वचनोंको एक क्षण के लिए भी भूलना नहीं. साथ ही परमधामके पच्चीस पक्षोंको भी

अपने हृदयमें धारण करना, जिससे हृदयमें धामधनीका प्रकाश फैल सके.

अनेक बिध कही मैं तुमको, ढील करो अब जिन जी ।
पांउ भरो ए वचन देखके, पेहेले व्रज रास चलन जी ॥ ६

मैंने इस विषयमें अनेक प्रकारसे तुम्हें समझाया है. अब एक क्षणके लिए भी देर मत करो. इन वचनोंको देख कर उसी मार्ग पर कदम रखो, जिस पर पहले व्रज और रासलीलाके समय चले थे.

रास प्रकास छोडो जिन खिन, जो बीतक अपनी परवान जी ।
ए छल तुमसे क्योंए न छूटे, पर मैं ना छोडों तुमें निरवान जी ॥ ७

रास तथा प्रकासको एक क्षणके लिए भी हृदयसे दूर मत करो. यही अपनी प्रामाणिक वीतक है. यह माया तुमसे किसी भी प्रकार छूट नहीं रही है फिर भी मैं तुम्हें इस मायामें लिप्त रहने नहीं दूँगी.

कहे इंद्रावती वचन पीउके, जिन देखाया धाम वतन जी ।
अब कोटक छल करे जो माया, तो भी ना छूटे धनीके चरन जी ॥ ८

इन्द्रावती कहती है, ये सद्‌गुरु धनीके वचन हैं जिन्होंने हमें परमधाम का मार्ग दिखाया है. माया अब भला करोड़ों बार हमें छलनेका प्रयास करे, तो भी सद्‌गुरु धनीके चरण हमसे नहीं छूटेंगे.

प्रकरण ३ चौपाई २९

लीलाको प्रकास होना-आत्माको प्रकास उपज्यो

ना कछू मनमें ना कछू चित, ना कछू मेरे हिरदें एती मत ।
एक वचन सीधा कह्या न जाए, ए तो आयो जैसे पूर दरियाए ॥ १

इन्द्रावती कहती हैं, इस दिव्यवाणीका वर्णन करनेका विचार मेरे मनमें नहीं था, मैंने यह बात कभी चित्तमें सोची भी नहीं थी और न ही कभी मेरे हृदयमें इतनी बड़ी बात ही आई थी. परमधामके विषयमें एक शब्द भी सीधा कहा नहीं जा सकता. धामधनीकी अपार कृपासे मेरे हृदयमें समुद्रकी लहरोंकी भाँति यह वाणी प्रवाहित होने लगी है.

श्री सुंदरबाई धनी धाम दुलहिन, इन्द्रावती पर दया पूरन ।
हिरदें बैठ कहे वचन एह, कारन साथ किए सनेह ॥ २

धामधनीकी अर्धाङ्गिनी श्रीश्यामाजी सुन्दरबाई सखीके साथ सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजीके रूपमें इस संसार में प्रकट हुई हैं. इन्द्रावती पर उनकी पूर्ण दया है. उन्होंने मेरे (इन्द्रावतीके) हृदयमें विराजमान होकर ये वचन कहलवाये हैं. सुन्दरसाथके लिए ही उन्होंने ऐसा स्नेहपूर्ण कार्य किया है.

वचन एक केहेते इन पर, हम घरों जाएके लेसी खबर ।
अद्रष्ट होएके कहे वचन, साथ जी द्रढ कर लीजो मन ॥ ३

सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी सुन्दरसाथको प्रायः यह (एक) बात कहा करते थे कि मैं इन्द्रावतीके हृदयरूपी घरमें बैठकर तुम्हारी सुधि लेता रहूँगा. अब वे अपने वचनके अनुसार इन्द्रावतीके हृदयमें अदृश्यरूपमें विराजकर ये वचन कहला रहे हैं. हे सुन्दरसाथजी ! इसलिए तुम ये वचन दृढ़ता पूर्वक ग्रहण कर लो.

आपन करी जो पेहेले चाल, प्रेम मगन बीते ज्यों हाल ।
ए सब किया अपने कारन, एही पैडा अपना चलन ॥ ४

पहले व्रज और रासलीलामें जैसा हमारा व्यवहार रहा कि हम प्रेममें मग्न रहकर अपना समय व्यतीत करते थे. धामधनीने हमारे लिए ही इन लीलाओंका विस्तार किया. वस्तुतः यही हमारा मार्ग है जिस पर चलकर हमें अभीष्ट स्थान (परमधाम) तक पहुँचना है.

देखलाया सब प्रगट कर, साथ सकल लीजो चित धर ।
ए जिन करो तुम हलकी बान, धनी कहावत अपनी जान ॥ ५

धामधनीने हमारे लिए इन लीलाओंको प्रकट किया है. हे सुन्दरसाथजी ! तुम इस बातको अपने चित्तमें ग्रहण करो. इस दिव्य वाणीको साधारण मत समझो. धामधनी अपनी अङ्गना जानकर ये दिव्य वचन मुझसे कहलवा रहे हैं.

कहिएत सदा प्रमोध वचन, पर कबूं न बानी ए उतपन ।
तिन कारन तुम सुनियो साथ, आपन में आए प्राणनाथ ॥ ६

परम्परागत उपदेशात्मक वचन तो सब लोग कहते आए हैं परन्तु ऐसी अखण्ड वाणी पहले कभी प्रकट नहीं हुई. इसलिए हे सुन्दरसाथजी ! ध्यान देकर सुनो ! हमारे बीच प्राणोंके नाथ सद्‌गुरु पधारे हैं.

बोहोत सिखापन विध विध कही, पर नींद आडे कछू हिरदें ना रही ।
नींद उडाओ देख नेहेचल रास, ज्यों हिरदे होए पीउको प्रकास ॥ ७

सद्‌गुरुने हमें आत्मा-परमात्मा सम्बन्धी अनेक प्रकारकी शिक्षा दी, परन्तु भ्रमकी नींदके कारण हमारे हृदयमें उनके उपदेश लेशमात्र भी नहीं रहे. अखण्ड रासलीलाका ध्यान करके अब तुम अपनी भ्रमरूपी निद्राको दूर करो, जिससे तुम्हारे हृदयमें सद्‌गुरुके ज्ञानका प्रकाश प्रकाशित हो सके.

अब नींद किए की नाहीं ए बेर, पीउ आए बुलावन उडाए अंधेर ।
पेहेले कह्या पीउ प्रगट पुकार, अंतर रेहे केहेलाया आधार ॥ ८

अब मायावी जगतमें सोए रहनेका समय नहीं है. अज्ञानरूपी अन्धकारको दूर कर धामधनी तुम्हें स्वयं बुलाने आए हैं. पहले भी उन्होंने प्रत्यक्ष प्रकट होकर पुकार-पुकार कर हमें जगाया. अब वे मेरे हृदयमें बैठकर यह वाणी कहलवा रहे हैं.

मोहे एक वचन ना आवे अस्तुत, पर सोभा दई ज्यों कालबुत ।
अस्तुतकी इत कैसी बात, प्रगट होने करी विख्यात ॥ ९

मुझे तो उनकी स्तुतिके लिए एक वचन भी कहना नहीं आता, परन्तु जैसे पाषाण मूर्तिमें दैवी शक्तिका आह्वान किया जाता है, उसी प्रकार उन्होंने इस नश्वर शरीरको यह वाणी कहनेकी शोभा प्रदान की है. अब धनीजीकी स्तुति करनेकी बात ही कहाँ रही ? अपना स्वरूप प्रकट करनेके लिए उन्होंने स्वयं ही यह सब कहलवाया है.

फल वस्त जो भारी वचन, जीव भी ना कहे आगे मन ।
सो प्रगट किए अपार, जो हुता अखंड घर सार ॥ १०

उनकी वाणीके फलस्वरूप सारगर्भित वचनोंका वर्णन तो जीव भी मनके

समक्ष नहीं कर सकता. ऐसे अपार वचन धामधनीने अखण्ड वाणीके द्वारा प्रकट किए हैं जिनका सार अखण्ड परमधाम है.

प्रगट करी मूल सगाई, कै दिन आपन राखी छिपाई ।
वचन बडा एक ए निरधार, श्री सुंदरबाई केहेते जो सार ॥ ११

परमधाममें श्रीराजजीके साथ हमारा जो मूल सम्बन्ध था उसे सद्गुरुने इस संसारमें प्रकट कर दिया, हमने उसको कई दिनों तक छिपाकर रखा था. सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी जिस अखण्ड वाणीका सार कहते थे, निश्चित ही उसका एक-एक शब्द बड़ा महत्त्वपूर्ण है.

ए लीला होसी विस्तार, सूरज ढांप्या ना रहे लगार ।
ए लीला क्यों ढांपी रहे, जाकी रास धनी एती अस्तुत कहे ॥ १२

वे कहते थे कि ब्रह्मात्माओंकी इस जागनी लीलाका विस्तार संसारमें होगा. तारतम ज्ञान रूपी सूर्यका प्रकाश छिपा नहीं रहेगा. यह अद्वैत लीला कैसे छिपी रहेगी ? जब रासके धनी सद्गुरु स्वयं इस लीलाकी इतनी महिमा गा रहे हैं.

ता कारन तुम सुनियो साथ, प्रगट लीला करी प्राणनाथ ।
कोई मनमें ना धरियो रोष, जिन कोई देओ महामतिको दोष ॥ १३

इसलिए हे सुन्दरसाथजी ! तुम सब ध्यानपूर्वक सुनो. प्राणनाथ सद्गुरुधनीने सुन्दरसाथके लिए यह लीला प्रकट की है. इसलिए कोई भी अपने मनमें रोष मत रखना और न ही महामतिको दोष देना.

ए तुम नेहेचे करो सोए, ए वचन महामति से प्रगट न होए ।
अपने घरकी नहीं ए बात, जो किव कर लिखिए विख्यात ॥ १४

यह निश्चित जान लो कि महामति द्वारा ये वचन प्रकट नहीं हो सकते. यह अपने लौकिक घरकी बात नहीं है, जो सहज ही कविताके द्वारा विस्तार पूर्वक लिखी जा सके.

ए बोहोत विध मैं जानूं घना, जो किव नहीं ए काम अपना ।
पर ए तो नहीं कछू किवकी बात, केहेलाया बैठ हिरदें साख्यात ॥ १५

मुझे इस बातका पूरा ज्ञान है कि कविता करना अपना काम नहीं है. अखण्ड

लीलाके वर्णनमें कविता करने जैसी कोई बात ही उपस्थित नहीं होती. यह सारा ज्ञान स्वयं सद्गुरुधनीने मेरे हृदयमें साक्षात् विराजमान होकर कहलवाया है.

ए वचन सब आवेसमें कहे, उत्तमबाइएं भली विध ग्रहे ।
यों कर कह्या आवेस दे, प्रगट लीला सबमें होसी ए ॥ १६

ये सभी वचन आवेश में कहे गए हैं. उत्तमबाई (उद्धव ठाकुर) ने इन वचनोंको भलीभाँति ग्रहण कर लिपिबद्ध किया है. अपना जोश प्रदानकर धनीने मुझे ऐसा कहा कि यह जागनी लीला समस्त संसारमें प्रकट हो जाएगी.

मैं मन मांहे जान्या यों, जो किव होसी तो खेलसी क्यों ।
किव भी हुई वचन विचार, खेली इन्द्रावती अनेक प्रकार ॥ १७

मैंने अपने मनमें ऐसा सोचा था कि यह वाणी छन्दोबद्ध कविताके समान हो जाएगी तो उसके द्वारा परमधामके सुखोंमें कैसे रमण करेंगे. किन्तु धामधनीकी प्रेरणासे यह वाणी कविता जैसी भी हुई और इन्द्रावतीने उसमें अनेक प्रकारसे आनन्द भी लिया.

कारज यों सब हुए पूरन, श्री सुंदरबाई की सिखापन ।
हिरदें बैठ केहेलाया रास, पेहेले फेरेके दोऊ किए प्रकास ॥ १८

इस प्रकार सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी (सुन्दरबाई) के उपदेशसे सभी कार्य पूर्ण हो गए. मेरे हृदयमें विराजकर उन्होंने रासका वर्णन करवाया और संसारमें हमारे प्रथम अवतरण (व्रज तथा रास) की दोनों लीलाओंको प्रकाशित किया.

सुनियो साथ तुम एह कारन, धनी ल्याए धामसे आनंद अति घन ।
ज्यों ना रहे मायाको लेस, त्यों धनिएं कियो उपदेस ॥ १९

इसलिए हे सुन्दरसाथजी ! सुनो, सद्गुरु धनी हमारे लिए परमधामसे अखण्ड आनन्द ले आए हैं. हमारे मनमें मायाका तनिक भी प्रभाव न रह जाए, इसीलिए सद्गुरु धनीने हमें बार-बार उपदेश दिया है.

ज्यों तुम पेहेले भरे पाउं, यों चलो जिन भूलो दाउ ।
भी देखो ए पेहेले वचन, प्रेम सेवा यों राखो मन ॥ २०

व्रजसे रासमें जाते समय तुम लोगोंने जिस प्रकार कदम उठाए थे अब भी उसी प्रेम मार्ग पर चलो. इस अवसरको व्यर्थ न करो. इससे पूर्व कहे गए व्रज और रासके वचनोंको भली प्रकार देखकर प्रेम-सेवामें अपना मन लगाओ.

अब कहूंगी तारतम रोसन कर, ए लीजो साथ नेहेचे चित धर ।
कहे इंद्रावती अब ऐसा होए, साथको संसे न रेहेबे कोए ॥ २१

अब मैं तारतम ज्ञानका प्रकाश पुनः प्रकट कर रही हूँ. हे सुन्दरसाथजी ! इन वचनों को निश्चत रूपसे चित्तमें धारण करो. इन्द्रावती कहती है कि ऐसा होने पर सभी सुन्दरसाथके मनमें कोई सन्देह नहीं रहेगा.

व्रज रास तुमको लीला कही, तारतमसे रोसनाई कर दई ।
अब इन फेरेके कहूं प्रकार, सब साथ ढूंढ काढों निरधार ॥ २२

तुम्हारे लिए मैंने तारतम ज्ञानके प्रकाशसे व्रज और रासलीलाका वर्णन किया है. अब मैं जागनी लीला (तीसरे ब्रह्माण्ड) का वृत्तान्त कहती हूँ. इस संसारमें बिखरी हुई सभी ब्रह्मात्माओंको निश्चय ही ढूँढ निकालना है.

प्रकरण ४ चौपाई ५१

श्रीसुन्दरबाईके अन्तरध्यानकी वीतक

श्री सुंदरबाई स्यामाजी अवतार, पूरन आवेस दियो आधार ।
ब्रह्मसृष्ट मिने सिरदार, श्री धाम धनीजी की अंगना नार ॥ १

सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी (सुन्दरबाई) श्रीश्यामाजीके अवतार हैं. धामधनीने उनको अपना पूर्ण आवेश दिया है. वे ब्रह्मसृष्टियोंमें शिरोमणि हैं और धामधनीकी अर्धाङ्गिनी हैं.

कै खेल किए ब्रह्मसृष्ट कारन, धनी दया पूरन अति घन ।
अनेक वचन सैयनकों कहे, पर नींद आडे कछू हिरदें ना रहे ॥ २

ब्रह्मात्माओंके लिए उन्होंने अनेक लीलाएँ कीं. उन पर धामधनीकी अधिक

कृपा है. उन्होंने अपनी आत्माओंके लिए अनेक प्रकारके वचन कहे हैं परन्तु भ्रमरूपी निद्राके कारण हमारे हृदयमें कोई भी वचन ठहर नहीं पाए.

तब भी अनेक विध कही, पर नींद पेडकी आडी भई ।
भी फेर अनेक दिए द्रष्टांत, पर साथ पकडके बैठा स्वांत ॥ ३

तब भी उन्होंने हमारे लिए अनेक प्रकारके वचन कहे, परन्तु मूलसे ही मन पर छाई हुई अज्ञानरूपी नींद अवरोध स्वरूप होनेके कारण हम कुछ समझ न सके. उन्होंने पुनः अनेक प्रकारके दृष्टान्त देकर समझाया परन्तु सुन्दरसाथ तो संसारमें ही शान्तिपूर्वक धैर्य धारण कर बैठे रहे.

तब अनेक धनिएं किए उपाए, पर सुभाव हमारा क्योंए न जाए ।
तब अनेक विध कह्या तारतम, तो भी अपना न गया भरम ॥ ४

तब सद्गुरुधनीने हमें समझानेके लिए अनेक उपाय किए फिर भी हमारा स्वभाव किसी भी प्रकार नहीं बदला. तब भी उन्होंने हमें अनेक प्रकारसे दृष्टान्त देकर तारतम ज्ञानका रहस्य समझाया किन्तु हमारा भ्रम फिर भी नहीं मिटा.

तब अनेक आपनको कहे विचार, कै विध कृपा करी आधार ।
तब अनेक पखे समझाए सही, तो भी कछू टांकी लागी नहीं ॥ ५

हमें जागृत करनेके लिए उन्होंने अनेक बार वचन कहे. इस प्रकार धामधनीने हम पर कई प्रकारसे कृपा की. वेद, पुराण तथा साधु सन्तोंकी वाणीकी साक्षी दे-देकर कई पहलुओं (पक्षों) से समझाया फिर भी हमारे मन पर कोई चोट नहीं लगी.

तब विध विध कह्या अनेक प्रकार, तो भी भई सुध न सार ।
अनेक सनंध केहे केहे रहे, पख पचीस आपनकों कहे ॥ ६

तब उन्होंने हमें विभिन्न प्रकारसे समझानेका प्रयत्न किया, तथापि हमें कोई सुधि नहीं आई. अनेक प्रमाण देकर समझाते हुए उन्होंने परमधामके पच्चीस पक्षोंका वर्णन भी किया.

सो भी सेहे कर रहे आपन, नींद ना गई मांहें जागे सुपन ।
तो भी धनीकी बोहोतक दया, अखंड व्रजका सुख सब कह्या ॥ ७

हम लोग धनीके उन सब वचनोंको सहन तो करते रहे पर वहन नहीं कर पाए और स्वप्नवत् संसारसे जागृत होकर हमारी निद्रा नहीं गई. फिर भी सद्गुरुधनीकी हम पर बड़ी अनुकम्पा बनी रही. उन्होंने हमें अखण्ड व्रज लीलाका सुख विस्तारपूर्वक समझाया.

भी वरन्यो सुख नेहेचल रास, पेहेले फेरेके दोऊ किए प्रकास ।
रास अखंड रात रोसन, व्रजलीला अखंड रात दिन ॥ ८

पुनः विशेषरूपसे अखण्ड रासका वर्णनकर पहली बार संसारमें हुई व्रज तथा रास दोनों लीलाओंको प्रकाशित किया. किस प्रकार रासकी रात्रि अखण्ड हुई और व्रजके रात-दिन दोनों अखण्ड हुए (इस रहस्यको प्रकट किया).

दोऊ जुदी लीला कही अखंड, तीसरी अखंड लीला ए ब्रह्मांड ।
किए तारतमे मन वांछित काम, भी देखाया सुख अखंड धाम ॥ ९

उन्होंने व्रज और रासकी दोनों लीलाओंको अखण्ड बताया और अब इस ब्रह्माण्डमें हुई यह तीसरी जागनी लीला भी अखण्ड होगी. इस प्रकार सद्गुरुने तारतम ज्ञानके द्वारा हमारी मनोकामनाएँ पूर्ण कीं और इस नश्वर जगतमें भी परमधामकी अखण्ड लीलाओंका अनुभव करवाया.

दया धनीकी है अति घन, कै विध सुख लिए सैयन ।
सेवा करी धनबाईएं पेहचानके धनी, सोभा साथ में लई अति घनी ॥ १०

धामधनीने हम पर अति कृपा की, जिससे ब्रह्मात्माओंने कई प्रकारके सुख प्राप्त किए. धनबाई (श्रीगांगजी भाई) ने सद्गुरुको धामधनीके रूपमें पहचान कर उनकी बहुत सेवा की. जिससे उनको सुन्दरसाथमें अत्यधिक शोभा प्राप्त हुई.

साथसों हेत कियो अपार, धन धन धनबाईको अवतार ।
कछुक लेहेर लागी संसार, ना दई गिरने खडी राखी आधार ॥ ११

गाङ्गजीभाईने सुन्दरसाथके प्रति असीम प्रेम प्रकट किया. धनबाईकी वासनाके अवतार स्वरूप गाङ्गजीभाई धन्य हैं. उनपर मायावी लहरोंका जरा आघात पहुँचा फिर भी धामधनीने अपनी शक्ति द्वारा उन्हें गिरनेसे बचाकर धर्ममें खड़ा रखा.

बेहेबट पूर सह्यो न जाए, कर पकरके दई पोहोंचाए ।
तो भी सुध न भई आपन, क्योंए न छूटे मोह जल गुन ॥ १२

मोहजलका प्रबल प्रवाह असह्य होता है, परन्तु इस परिस्थितिमें सद्गुरुने श्रीगाङ्गजीभाईका हाथ पकड़कर उन्हें किनारे तक पहुँचा दिया. यह सब जानते हुए भी हमें सुधि नहीं रही और मोहजल (संसार) की प्रवृत्तियाँ हमसे किसी भी तरह नहीं छूटीं.

तब लरे हमसों अपनाएत करी, तो भी नींद हम ना परहरी ।
कै विध कह्या आप आंझू आंन, पर या समे हमको सुध न सांन ॥ १३

तब सद्गुरु अपनापन दिखाते हुए हम पर क्रुद्ध भी हुए तथापि हमने मोहरूपी निद्राका परित्याग नहीं किया. उन्होंने आँखोंमें आँसू भरकर बड़े दुःखित मनसे भी हमें समझाया परन्तु उस समय हमें किसी प्रकारकी सुधि नहीं हुई.

तब फेर धनिएं कियो विचार, साथ घरों ले जाना निरधार ।
तब संवत सत्रे बारोतरे बरष, भादो मास उजाला पख ॥ १४

चतुरदसी बुधवारी भई, सनंध सबे श्रीबिहारीजीसों कही ।
मध्यरात पीछे कियो परियान, बिहारीजीको सुध भई कछू जान ॥ १५

पुनः सद्गुरुने विचार किया कि सुन्दरसाथको जागृत कर निश्चितरूपसे परमधाम ले जाना है. इसलिए सम्वत् सत्रह सौ बारहके भाद्र शुक्ल चतुर्दशी तिथि बुधवारके दिन विहारीजीको सभी (भविष्यकी व्यवस्थाकी) बातें कहीं और मध्यरात्रिके बाद प्रयाण किया. सद्गुरुके धामगमनके विषयमें विहारीजीको कुछ जानकारी भी हुई थी.

इन अवसर मैं भई अजान, मोहे फजीत करी गिनान ।
ना तो मोहे बुलाएके दई निध, पर या समे ना गई मोहजल बुध ॥ १६

मैं इस समय भी अनजान बनी रही. ज्ञानी होनेके अभिमानने मुझे बड़ा अपमानित किया. अन्यथा उन्होंने तो मुझे स्वयं बुलाकर अखण्ड निधि प्रदान की थी किन्तु उस समय मेरी ही सांसारिक बुद्धि मुझसे नहीं छूटी.

इन समे हुती मायाकी लेहेर, तो न आया आतमको बेहेर ।
तब मेरी निध गई मेरे हाथ, श्रीधाम तरफ मुख कियो प्राणनाथ ॥ १७

इस समय मुझ पर मायावी लहरोंका प्रभाव था, जिसके कारण मेरी आत्मामें पीड़ाका अनुभव नहीं हुआ. इसलिए मेरी अखण्ड निधि (सद्गुरु) मेरे हाथसे चली गई. मेरे प्राणनाथस्वरूप सद्गुरुने परमधामकी ओर मुख कर लिया.

तब हमसों इसारत करी, कह्या धाम आडे इन्द्रावती खडी ।
मैं पैठ न सकों वह करे बिलाप, तब मोहे बुलाएके कियो मिलाप ॥ १८

सद्गुरुने हम सबसे सङ्केतमें कहा था कि परमधामके द्वार पर इन्द्रावती खड़ी होकर विलाप कर रही है जिसके कारण मैं परमधाममें प्रवेश नहीं कर पा रहा हूँ. तब उन्होंने मुझे (ध्रोलसे) बुलाया और हमारा स्नेह पूर्वक मिलन हुआ.

ए केहेके साथको सुनाई, ए इसारत तब हम ना पाई ।
आप भी इत ब्रह कियो, पर मैं हिरदेमें कछू ना लियो ॥ १९

उपरोक्त वचन सब सुन्दरसाथको कह सुनाए, फिर भी हम इस सङ्केतको समझ नहीं पाए. उन्होंने स्वयं भी यहाँ विरह किया. परन्तु यह सब होते हुए भी मैंने इन बातोंको अपने हृदयमें ग्रहण नहीं किया.

तब अद्रष्ट भए हममेंसे इत, हम सारे साजे बैठे तित ।
जो कछू जीवको उपजे भाउ, तो क्यों छोडे हम पीउके पाउ ॥ २०

तब सद्गुरु हममें-से अदृश्य हो गए और हम सब मूक दर्शक बनकर बैठे रह गए. यदि हमारे जीवमें उनके प्रति कुछ भी भाव होता तो हम प्रियतम सद्गुरुके चरणोंको क्यों छोड़ते ?

सो तो सब मैं देख्या द्रष्ट, पर बैठा जीव होए कोई दुष्ट ।
ना तो क्यों सहिए धनीको बिछोह, जो जीव कछू जाग्रत होए ॥ २१

यह सब घटना मैंने स्वयं अपनी आँखोंसे देखी, परन्तु मेरा जीव दुष्ट होकर ज्योंका त्यों बैठा रहा. यदि आत्मा तनिक भी जाग्रत होती तो सद्गुरुका वियोग क्यों सहन करती ?

एक बचनका न किया बिचार, ना कछू पेहेचान भई आधार ।
सुनो हो रतनबाई ए कैसा फेर, कौन बुध ऐसी हिरदे अंधेर ॥ २२

मैंने सद्गुरुके किसी एक वचन पर भी विचार नहीं किया. न ही धामधनीके स्वरूपकी पहचान की. हे रतनबाई (विहारीजी) ! आप सुनिए, समयका यह कैसा चक्र है ? उस समय हमारी बुद्धि कैसी भ्रमित हुई जिससे हृदयमें अन्धकार छा गया.

ए बेसुधी कैसी आई, कछू पाई ना सुध मूल सगाई ।
देखो री सई ऐसी क्यों भई, ए सुख छोड मैं अकेली रही ॥ २३

उस समय चित्तमें कैसी बेसुधि छा गई जिससे परमधामके मूल सम्बन्धकी भी सुधि न रही. देखो तो सुन्दरसाथजी, ऐसा कैसे सम्भव हुआ ? अपने सद्गुरुसे प्राप्त सुख छोड़कर अब मैं अकेली रह गई.

ए दुखकी बातें हैं जो घनी, पर रह्यो जीव कछू आग्या धनी ।
इन समें जो निध न जाए, तो क्यों आवेस सरूप सहे अंतराए ॥ २४

ये दुःखभरी बातें तो अति अधिक हैं, परन्तु यह सद्गुरु धनीकी आज्ञा ही थी कि इतना दुःख सह कर भी मेरा जीव ज्योंका त्यों बना रहा. इस समय यदि अखण्ड निधि हमारे हाथोंसे नहीं निकल जाती तो धामधनीके आवेश स्वरूप (श्रीकृष्ण) का अन्तर्धान कैसे हो सकता ?

फिट फिट रे भूंडी तूं बुध, तें क्यों ना करी अखंड घर सुध ।
महादुष्ट तूं अभागिनी, ना सुध दई जीवको जाते धनी ॥ २५

हे मेरी बुद्धि ! तुझे धिक्कार है. तूने प्रियतम धनीके अखण्ड घरको याद क्यों नहीं किया ? तू महादुष्ट और अभागिनी है, क्योंकि सद्गुरुके परमधाम

जाते हुए तूने मेरे जीवको सचेत नहीं किया.

ए बातें तें क्योंकर सही, के या समें घर छोडके गई ।
के तूं विकल भई पापनी, विना खबर निध गई आपनी ॥ २६

यह घटना तूने कैसे सहन की ? क्या इस समय तू अपना घर (शरीर) छोड़कर चली गई थीं ? अथवा हे पापिनी ! क्या उस समय तू व्याकुल बनी हुई थी, जिसके कारण सद्गुरुरूपी अखण्ड निधि चली गई.

होए आवेस सरूप पेहेचान, पेहेचान पीछे न सहिए हान ।
तिन कारन जो यों न होए, तो प्रगट लीला क्यों करे कोए ॥ २७

यदि धामधनीके आवेश स्वरूप सद्गुरुकी पहचान हो जाती तो इतनी बड़ी हानि सहनी न पड़ती. किन्तु यदि ऐसा नहीं होता अर्थात् सद्गुरुका वियोग नहीं होता तो तारतम ज्ञानके द्वारा जागनी लीलाका प्रकाश कैसे फैल पाता ?

अब तोकों कहा देऊं रे गाल, तूं भूली अवसर अपनो इन हाल ।
फिट फिट रे भूंडे तूं मन, तें अधरम कियो अति घन ॥ २८

हे मेरी बुद्धि ! अब मैं तुझे कौन-सी गाली दूँ ? इस अवसरको खोकर तूने मेरा क्या हाल कर दिया है ? रे मूर्ख मन ! तुझे वारंवार धिक्कार है, तूने बहुत बड़ा अधर्म किया है.

जीव बराबर बैठा होए, क्यों बैठा तूं ए निध खोए ।
एती बढाई तुझ पर भई, तुझ देखते ए निध गई ॥ २९

हे मेरे मन ! अब तू जीवके समान होकर बैठ गया. इस अखण्ड निधिको खोकर तू क्यों बैठा रहा ? तुझे इतना महत्त्व दिया फिर भी तेरे देखते-देखते यह अखण्ड निधि हाथसे निकल गई.

तें ना दई जीवको खबर, नेठ झूठा सो झूठा आखर ।
ए क्रोध है बडा समरथ, पर आया न मेरे समे अरथ ॥ ३०

हे मन ! तब तूने जीवको इसकी जानकारी देकर क्यों सावधान नहीं किया ? तू निश्चय ही अन्त तक झूठाका झूठा रह गया. यह मेरा क्रोध तो बड़ा समर्थ था किन्तु मेरी आवश्यकता पड़ने पर वह भी काम नहीं आया.

गुन अंग इन्द्री सबे घारन, कोई न जाग्या जीवके कारन ।
इन सूरमों किनहूं न खोल्या द्वार, जीव बैठा पकड आकार ॥ ३१

मेरे समस्त गुण, अंग और इन्द्रियाँ मायाके नशेमें सो गईं. इनमें-से कोई भी जीवके लिए जागृत नहीं हुई. इन शूरवीरोंमें-से किसीने भी अज्ञानका आवरण हटा कर आत्माका द्वार नहीं खोला जिसके कारण यह जीव शरीरको पकड़कर बैठा रहा.

धिक धिक रे भूंडा जीव अजान, तेरी सगाई हुती निरवान ।
रे मूरख तोकों कहा भयो, धनी जाते कछू पीछे ना रह्यो ॥ ३२

हे अज्ञानी जीव ! तुझे वारंवार धिक्कार है, तेरा सम्बन्ध तो निश्चय ही सद्गुरुके साथ था. अरे मूर्ख ! तुझे क्या हो गया है ? धामधनी सद्गुरुके जाने पर अब शेष क्या रह गया है ?

एती अगनी तें क्योंकर सही, अनेक विध तोकों धनिए कही ।
निपट जीव तूं हुआ निठोर, झूठी प्रीत न सक्या तोर ॥ ३३

सद्गुरुके वियोगरूपी अग्निकी ज्वाला तू कैसे सह पाया ? सद्गुरुने तुझे अनेक प्रकारसे समझाया था. हे निर्लज्ज जीव ! तू इतना निष्ठुर हो गया कि इस संसारकी झूठी प्रीतिको नहीं तोड़ सका.

ऐसा अबूझ अकरमी हुआ इन बेर, कछु न विचार्‌या न छोडी अंधेर ।
ऐसी आपसे ना करे कोए, खोया अपना परबस होए ॥ ३४

तू अबोध और भाग्यहीन कैसे हो गया कि तूने कुछ भी विचार नहीं किया और इस अज्ञान रूपी अन्धकारको छोड़ा भी नहीं. इस प्रकार तो कोई भी अपना अहित नहीं करता. मायाके वशमें होकर तूने अपने आपको भी खो दिया.

ऐसा होए खांगडु जुदा पड्या, एती अगनिए अजूं न चुड्या ।
पांच बरसका होए जो बाल, सो भी कछुक करे संभाल ॥ ३५

हे जीव ! तू ऐसा कोडकू (न गलने वाला दाना) बनकर अलग ही रह गया. विरहकी इतनी आग जलने पर भी तू गला नहीं, पाँच वर्षका अबोध

बालक भी स्वयंको सम्हाल लेता है.

धनिएं तोकों बोहोतक कह्या, गए अवसर पीछे कछू ना रह्या ।
तेरी दोरी क्यों न टूटी तिन ताल, फिट फिट रे भूंडा कहां था काल ॥ ३६

सद्‌गुरु धनीने तुझे बहुत कुछ समझाया, किन्तु अवसर बीत जाने (सद्‌गुरुके अन्तर्धान होने) पर अब तेरे हाथमें कुछ नहीं रहा. तेरे जीवनकी डोरी उसी समय टूट क्यों नहीं गई ? हे दुष्ट काल ! तुझे वारंवार धिक्कार है. तू उस समय कहाँ गया था ?

ए तो केहेर बडा हुआ जुलम, जान्या ब्रह क्यों सहे खसम ।
सो मैं अपनी नजरों देख्या, धरम हमारा कछू ना रह्या ॥ ३७

यह तो हम पर बहुत ही बड़ा अनिष्ट हो गया है. इतनी विषम स्थिति होगी ऐसा जानते तो सद्‌गुरुका विरह कैसे सहन करते (अवश्य सद्‌गुरुको जाने नहीं देते). मैंने अपनी आँखोंसे यह सब (सद्‌गुरुको जाते) देखा. इस प्रकार हमारा अनन्य भावका धर्म ही नहीं रहा.

प्रकरण ५ चौपाई ८८

विलाप करे हैं - राग रामग्री

ओहि ओहि करती फिरों, और करों हाए हाए रे ।
पीउजी विछोहा क्यों सहूं, जीवरा टुक टुक होए न जाए रे ॥ १

मैं हाय हाय करती हुई रो-रोकर फिरती हूँ. (अब मैं) प्रियतम सद्‌गुरुका वियोग कैसे सहन करूँ ? मेरा जीव भी टुकड़े-टुकड़े क्यों नहीं हो रहा है ?

फिट फिट रे भूंडे तूं सबद, क्यों आई मुख बान रे ।
वाओ ना लगी तिन दिसकी, निकस ना गये क्यों प्रान रे ॥ २

हे दुष्ट शब्द ! तुझे भी धिक्कार है. तू वाणी बनकर मेरे मुखमें क्यों आ रहा है ? धामधनीकी ओरसे आती हुई हवा तकने भी तुझे स्पर्श नहीं किया ? सद्‌गुरुके जाते समय ये प्राण क्यों नहीं निकल गए ?

तूं रे जुबां ऐसी क्यों बली, केहेते एह बचन रे ।
खैंच निकालूं तोकों मूल से, जहांसे तूं उतपन रे ॥ ३

हे जिह्वा ! क्या तू "सद्गुरु चले गए" यह कहनेके लिए हिल रही है ? तुझे मूलसे खींचकर बाहर निकाल लूँ, जहाँसे तू उत्पन्न हुई है.

ए रे पीउजी सिधावते, वाचा क्यों रही तूं अंग ।
उजड ना पडे दंतडे, घन घाए मुख भंग ॥ ४

हे मेरी वाणी ! ऐसे सद्गुरुके चले जाने पर तू मेरे अंगमें कैसे रह गई. सद्गुरुके विरहरूपी हथौड़ेकी चोटसे मुख छिन्न-भिन्न होने पर भी ये दाँत उखड़ नहीं गए.

तें क्या सुने नहीं श्रवना, प्यारे पीउके बचन ।
ए रे लवा तुझे सुनते, क्यों ना लगी कानों अगिन ॥ ५

हे मेरे श्रवणेन्द्रिय ! क्या तुमने कभी धामधनी सद्गुरुके वचन नहीं सुने ? सद्गुरुके चले जानेका लवमात्र समाचार सुनने पर भी तुझे अग्नि क्यों नहीं लगी ?

चलना पीउका सुनते, तोहे सब अंगों अगिन ना आई ।
सुनते आग झाला मिने, दौडके क्यों न झंपाई ॥ ६

सद्गुरु धनीका धाम जाना सुनकर तेरे सभी अङ्ग जलकर भस्म क्यों नहीं हो गए ? ऐसे वचन सुनकर तू विरहाग्निकी ज्वालामें कूद क्यों नहीं गई ?

नीच नैंन ए तुझ देखते, आया न आंखों लोहू ।
पीउ लौकिक जिनों बिछुरे, ऐसे भी रोवे सोऊ ॥ ७

हे नीच नेत्र ! सद्गुरु धनीके धामगमनको देखकर भी तुम्हारे अन्दरसे रक्त क्यों नहीं निकला ? लौकिक जगतमें भी जिस प्रेमिकाका प्रियतमसे वियोग होता है वह (प्रेमिका) भी इतना तो रो लेती है.

रोवे लोहू आंखो आंझू चले, सो कहा भयो रोवनहारे रे ।
देखत ही पीउ चलना, निकस ना पडे तारे रे ॥ ८

जब तक रोते रोते आँखोंसे आँसूके रूपमें रक्त ही बहे तो केवल इतना ही

रोनेसे क्या होगा ? सद्गुरु धनीको जाते देखकर आँखके तारे तक भी क्यों नहीं निकल गए ?

क्यों ना आई बास नासिका, पेहेचान के प्रेमल ।
पीउ संग जीवरा न चल्या, अंदर लेता था सुगंध सकल ॥ ९

सद्गुरुकी पहचान करने पर भी हे नासिका ! उनके प्रेमकी सुगन्ध तुझे क्यों नहीं आई ? धनीके साथ ही जीव क्यों नहीं निकल गया, जो अन्तरमें उनकी सुवास लेता रहता था.

गुन अंग इन्द्रियों की, पीउ बांधते गोली प्रेम काम ।
पेहेचान करते पोहोंचावने, सनमंध देख धनी धाम ॥ १०

गुण, अङ्ग, इन्द्रियाँ एवं उनकी कामनाओंको सद्गुरु धनी अपनी प्रेमरूपी गोलीसे बाँधते ह्वुट्ठ (वश करते) थे तथा धामधनीके साथ मूल सम्बन्धकी पहचान करवाकर परमधाम पहुँचानेका उपाय करते थे.

गुन अंग इंद्री आकारके, आग पडो तुम पर रे ।
प्रेम न उपज्या तुमको, चलते धामधनी घर रे ॥ ११

हे मेरे शरीरके गुण, अंग, इन्द्रियो ! तुम्हें आग लग जाए. धामधनी सद्गुरुके धाम चलने पर भी तुम्हारे हृदयमें उनके प्रति क्यों प्रेम उत्पन्न नहीं हुआ ?

एती जोगवाई ले तूं आकार, धनी चलते पीछे क्यों रह्या रे ।
अब जलो रे उडो खाखडे, इन समे गल पिघल न गया रे ॥ १२

हे जीव ! शरीररूपी इतना सुन्दर साधन लेकर भी सद्गुरु धनीके जाते समय तू पीछे कैसे रह गया ? उस समय तू पिघल क्यों नहीं गया ? अब तू सूखे पत्तेकी भाँति उड़कर विरहाग्निमें जल कर राख हो जा.

अंग तोहे ब्रह अगिनकी, ना लगी कलेजे झाल ।
ए ब्रहा ले अंग खडा रह्या, फिट फिट करम चंडाल ॥ १३

इतना होने पर भी मेरे अङ्ग एवं कलेजेमें विरहाग्निकी ज्वाला क्यों नहीं भड़क उठी है ? इतना बड़ा विरह लेकर भी शरीर वैसेका वैसा रह गया. इसलिए हे चण्डालकर्म जीव ! तुझे धिक्कार है.

हाथ पांउ सब अंगके, सब उजड ना पडे संधान ।
अंग रोम रोम जुदे ना हुए, अस्त होते तेज भान ॥ १४

शरीरके हाथ-पाँव और सभी सन्धान टूटकर बिखर नहीं गए. सद्गुरुरूपी तेजोमय सूर्यके अस्त होने पर भी शरीरके रोम-रोम अलग नहीं हुए.

ए रे निमूना भानका, मेरे पीउजीको दिया ना जाए ।
ए जोत धनी इन भांत की, कोट ब्रह्मांडमें न समाए ॥ १५

मेरे प्रियतम सद्गुरुकी उपमा सूर्यसे नहीं दी जा सकती क्योंकि मेरे सद्गुरुका तेज ऐसा है कि वह करोड़ों ब्रह्माण्डोंमें भी नहीं समा सकता.

ए जोत पकडी ना रहे, चली इंड फोड सुंन निराकार ।
सदासिव महाविस्नु निरंजन, सब प्रकृत को कियो निरवार ॥ १६

यह तारतम ज्ञानकी ज्योति पकड़ी नहीं जा सकती. यह तो शून्य और निराकार सहित इस ब्रह्माण्डको फोड़कर आगे चली गई है. इसने तो ब्रह्मा, विष्णु, सदाशिव तथा निरंजन, निराकार और मूल प्रकृति आदि सबका निरूपण कर दिया है.

सबदातीत हुते जो ब्रह्मांड, जाए तिनमें करी रोसन ।
अक्षर प्रकास करके, जाए पोहोंची धामके बन ॥ १७

जो ब्रह्माण्ड (व्रज एवं रास) शब्दातीत कहे जाते थे, इस तारतम ज्ञानके प्रकाशने उनको पूर्णरूपसे प्रकाशित कर दिया और वह अक्षरब्रह्मको भी प्रकाशित (जानकारी) करते हुए परमधामके वनों तक पहुँच गया.

सब गिरदवाए बन देखाएके, किए धाम मंदिर प्रकास ।
ब्रह्मानंद ब्रह्मसृष्टमें, प्रगट कियो विलास ॥ १८

इस तारतम ज्ञानने परमधामके चारों ओरके वनोंकी शोभा दिखाकर धामके मन्दिरोंको भी प्रकाशित किया है. इसके साथ ही इसने परब्रह्म परमात्मा श्री राजजी तथा ब्रह्मात्माओंके बीचके ब्रह्मानन्दको भी प्रकट कर दिया है.

हां रे ए सुख सैयां लेवहीं, मेरे पीउजीकी बिरहिन ।
पीछे तो जाहेर होएसी, देसी अखंड सुख सबन ॥ १९

अपने धामधनीसे विछुड़ी हुई विरहिणी आत्माएँ ही इस तारतम ज्ञानके द्वारा संसारमें रहकर भी परमधामका यह अखण्ड सुख प्राप्त करतीं हैं. यह ज्ञानका सुख बादमें तो सारे संसारमें फैल जाएगा और समस्त जीवोंको अखण्ड सुख प्रदान करेगा.

ए रे धनी मेरे चलते, ना टूटी रगा क्यों रही खाल रे ।
रूप रंग रस लेयके, क्यों ना पडी आग झाल रे ॥ २०

ऐसे तारतम ज्ञान देने वाले मेरे सद्गुरु धनीके धाम चलते समय शरीरकी नसें टूट क्यों न गईं और चमड़ी भी वैसे ही क्यों रह गई ? यह नश्वर शरीर रूप, रङ्ग, रस लेकर विरहकी ज्वालामें क्यों नहीं जला ?

हडी मांस रगा भेली क्यों रही, ए पकडके अंग अंधेर रे ।
धनीका बिछोहा क्यों सह्या, लोहू ना सूक्या तिन बेर रे ॥ २१

शरीरकी हड्डियाँ, मांस और नसें इस नश्वर शरीरको पकड़कर इकठ्ठी क्यों रह गईं ? इन सबने सद्गुरुधनीका वियोग कैसे सहन कर लिया ? उसी समय शरीरका रक्त सूख क्यों नहीं गया ?

अंग मेरे आकारके, सातों धात ना गई क्यों सूक रे ।
एहेरन घनके बीचमें, क्यों ना हुई भूक भूक रे ॥ २२

मेरे शरीरके अङ्ग-प्रत्यङ्ग और सातों धातुएँ (रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि-मज्जा और शुक्र) सूख क्यों नहीं गईं ? विरहके कारण एहेरन एवं हथोड़ेके बीचमें पड़कर चूर-चूर क्यों नहीं हो गईं ?

नैन नासिका मुख श्रवना, भूंडी खोपडी पकड तूं क्यों रही ।
तोड इनोंको जुदे जुदे, तूं क्यों उजड ना गई ॥ २३

हे दुष्ट खोपड़ी ! आँख, नाक, मुख, श्रवणको पकड़कर तू क्यों रह गई ? इन सभी अङ्गोंको अलग-अलग तोड़कर, तू उजड़ क्यों न गई ?

ए रे पीउजी सिधावते, क्यों ना लग्या कलेजे घाए ।
काल मेरा कहां चल गया, क्यों न काढी खैंच अरवाए ॥ २४

ऐसे सद्गुरुधनीके परमधाम जाने पर कलेजेमें घाव क्यों नहीं लग गया ? उस समय मेरा काल कहाँ चला गया था. उसने मेरी आत्माको खींचकर बाहर क्यों नहीं निकाला ?

नेहेचल निध रे बिछडते, कहां गई वह बुध ।
धिक धिक रे चंडालनी, तें क्यों भई ऐसी असुध ॥ २५

सद्गुरुरूपी अखण्ड निधिके धाम जाते समय वह मेरी बुद्धि भी कहाँ चली गई थी ? हे चण्डालिनी बुद्धि ! तुझे धिक्कार है. उस समय तुझे ऐसी बेसुधि कैसे आई ?

ग्यान मेरा तिन समें, क्यों ना किया वतन उजास ।
तिन समें दगा दिया मुझको, मैं रही तेरे विस्वास ॥ २६

हे ज्ञान ! उस समय तूने हृदयमें परमधामका प्रकाश क्यों नहीं किया ? उस समय तूने मुझे बड़ा धोखा दिया. मैं तो तेरे विश्वास पर बैठी रही थी.

गुन अंग इन्द्री मेरे मुझसों, उलटे क्यों हुए दुसमन रे ।
जिन समे हुआ रे विछोहा, मेरे क्यों न हुए सजन रे ॥ २७

उस समय मेरे गुण, अंग, इन्द्रियाँ उलटी मेरी ही दुश्मन क्यों बन गईं ? जिस समय सद्गुरुसे मेरा वियोग हुआ उस समय मेरी गुण, अङ्ग, इन्द्रियाँ मेरी सहयोगी (स्वजन) क्यों नहीं बनीं ?

साहेब मेरा चलते, मेरी सकल सिन्या अंग माहें ।
सो काम न आए आतमके, अवसर ऐसो न क्यांहें ॥ २८

मेरे सद्गुरुधनी जब मुझसे अलग होकर जा रहे थे, तब मेरे गुण, अंग, इन्द्रियोंकी पूरी सेना मेरे शरीरमें ही सुसज्जित खड़ी थी किन्तु वे मेरी आत्माके किसी भी काममें नहीं आईं. अब ऐसा अवसर पुनः कहीं नहीं मिलेगा.

फिट फिट रे सिन्या तुमको, क्या न हुती तुमें पेहेचान ।
जाते जीवका जीवन, तुम क्यों ले ना निकसे प्रान ॥ २९

हे मेरे गुण, अंग, इन्द्रियोंकी सेना ! तुम्हें धिक्कार है. क्या तुम्हें मेरे धनीकी पहचान नहीं थी ? मेरे जीवके जीवन सद्‌गुरुके जाते समय तुम मेरे प्राणोंको लेकर क्यों नहीं निकल गईं ?

जीवन चलते जीवरा, क्यों छोड्या तें संग रे ।
अब कहुं रे तोकों करम चंडाल, तूं तो था तिनका अंग रे ॥ ३०

मेरे धनीके चलते समय हे जीव ! तुमने उनका साथ क्यों छोड़ दिया ? इसलिए मैं अब तुझे कर्मचण्डाल कह रही हूँ, क्योंकि तू तो उनका अङ्ग ही तो था.

नीच करम ऐसा चंडाल, तुझ बिना कोई ना करे रे ।
श्री धनी धाम चले पीछे, इन जिमीमें देह कौन धरे रे ॥ ३१

हे जीव ! ऐसा अधम कार्य तेरे बिना दूसरा कोई नहीं कर सकता. मेरे सद्‌गुरुधनीके परमधाम चले जानेके बाद इस संसारमें कौन इस प्रकार शरीर धारण करेगा ?

कौन विध कहूं मैं तुझको, कुकरमी करम चंडाल ।
तोहे अंग न उठी अगिन, तो तूं क्यों न झंपाया झाल ॥ ३२

हे जीव ! मैं तुझे कैसे समझाऊँ ? तू बड़ा चण्डाल और कुकर्मी है. तेरे अंगोंमें विरहकी अग्नि प्रज्ज्वलित क्यों नहीं हुई ? उसकी ज्वालामें तू कूद क्यों नहीं गया ?

झांप न खाई तें भैरव, क्यों काएर हुआ अवसर ।
तिल तिल तन न ताछिया, जाते ए सुख सागर ॥ ३३

हे जीव ! तूने भैरव झाँप क्यों नहीं लगाई ? ऐसे अवसर पर तू कायर क्यों हो गया ? जिस समय सुखके सागर (सद्‌गुरु) परमधाम जा रहे थे उस समय तूने अपने तनको छीलकर तिलके समान टुकड़े क्यों नहीं किए ?

गुन सागर धनी चलते, क्यों किया ऐसा हाल ।
बज्रलेपी रे स्वाम द्रोही, जीवरा क्यों चूक्या रे चंडाल ॥ ३४

गुणोंके सागर, सद्गुरुधनीके जाते समय तूने मेरी ऐसी दशा क्यों कर दी ? धामधनीके साथ द्रोहकर वज्रलेपके समान भूल करनेवाले हे चण्डाल जीव ! तू ऐसे अवसर पर क्यों चूक गया ?

दुष्ट अधरमी केता कहूं, हुआ बेमुख देते पीठ रे ।
ऐसा समया गमाइया, निपट निठुर जीवरा ढीठ रे ॥ ३५

हे दुष्ट अधर्मी जीव ! तुझे क्या कहूँ ? तू तो पीठ देकर सद्गुरुके वचनोंसे विमुख हो गया है. तूने ऐसा सुअवसर क्यों गवाँ दिया ? इसलिए तू निश्चय ही निष्ठुर एवं ढीठ है.

सबदातीतके पारके पार, तिन पार जोतका था तेज रे ।
यासों था तेरा सनमंध, पर तें कछुए न राख्या हेज रे ॥ ३६

शब्दातीत बेहद भूमिके पार अक्षरधाम और उसके भी पार परमधामकी ज्योतिका तेज तेरे पास आया था. ऐसे (सद्गुरु) धनीसे तेरा सम्बन्ध हुआ था, परन्तु तुमने उनसे तनिक भी प्रेम नहीं किया.

तुझमें भी तेज है उन जोतका, और वाही कमलकी बास ।
वह तेज फिरते रे तूं तेज, क्यों न पहोंच्या जोत प्रकास ॥ ३७

तेरे अन्दर भी उसी ज्योतिका तेज विद्यमान है, तू उसी कमलकी सुगन्ध है. किन्तु सद्गुरुरूप उस तेजके परमधाम लौटते समय हे तेज ! तू उस परमज्योतिके साथ क्यों समाहित नहीं हुआ ?

अब कहा करूं कहा जाऊं, ए बानी धनी ढूंढों कित ।
पीउ पोहोंचाए मैं पीछे फिरी, करने विलाप रही इत ॥ ३८

अब मैं क्या करूँ और कहाँ जाऊँ ? सद्गुरुकी वाणीको अब कहाँ खोजूँ ? सद्गुरुके पार्थिव शरीरको (समाधि स्थल) पहुँचाकर मैं विलाप करनेके लिए यहीं (संसार) पर बैठी रही.

अब ए बानी तूं कहां सुनसी, मेरे धाम धनीके बचन ।
बरनन करते जो श्रीमुख, सो अब काहूं न पाइए ठौर किन ॥ ३९

हे जीव ! अपने सद्गुरुके प्रेममय वचनोंको अब तू कहाँ सुनेगा ? सद्गुरुधनी जिस प्रकार अपने श्रीमुखसे परमधामका वर्णन करते थे, वैसा वर्णन अब कहीं भी सुननेको नहीं मिलेगा.

अब तारतम कौन केहेसी, कौन बिचार कर देसी हेत ।
चौदे भवनमें इन धनी विना, ए बानी कोई ना देत ॥ ४०

अब तारतमके वचन कौन कहेगा ? उन वचनोंको प्रेमपूर्वक विचार कर कौन सुनाएगा ? चौदह लोकोंमें ऐसे धनीके बिना परमधामकी वाणी तुम्हें कोई नहीं सुना पाएगा.

व्रजलीला रात दिन अखंड, रासलीला अखंड रात रे ।
पीउजी विना विवेक कौन केहेसी, हुआ प्रतिबिंब तीसरा प्रभात रे ॥ ४१

व्रज लीलाके रात-दिन अखण्ड हैं और रासकी रात भी अखण्ड हुई है. इन रहस्योंका विवेक पूर्वक स्पष्टीकरण तथा प्रभात होने पर हुई तीसरी प्रतिबिम्बलीलाका रहस्य सद्गुरुके बिना कौन प्रकट करेगा ?

भेष बागेका बेवरा, रह्या अग्यारे दिन ।
सात गोकल चार मथुरा, कौन केहेसी विवेक बचन ॥ ४२

उस प्रतिबिम्ब लीलामें श्रीकृष्णजीने ग्वाल वेषमें सात दिन गोकुलमें और चार दिन मथुरामें इस प्रकार ग्यारह दिनकी लीला की. इन लीलाओंके विवेक पूर्ण वचन कौन कहेगा ?

उतम बिचार उतम बंधेज, और कै विधके द्रष्टांत रे ।
इन धनी बिना रे दया कर, कौन देसी कर खांत रे ॥ ४३

मेरे धनीके बिना ऐसे श्रेष्ठ विचार और उत्तम बन्धेज (आड़िका लीला) एवं विविध दृष्टान्त कहकर दया पूर्वक कौन सुनाएगा ?

पन बांध बरस चौदेलों, सास्त्रको अरथ कौन लेसी ।
सोए प्रकास इन पीउ विना, एक साएतमें समझाए कौन देसी ॥ ४४

चौद वर्षतक नियम (प्रण) लेकर श्रीमद्भागवत शास्त्रका रहस्यमय अर्थ कौन ग्रहण करेगा ? सद्गुरु धनीके बिना तारतम ज्ञानका प्रकाश दिखाकर, एक क्षणमें कौन समझाएगा ?

दूध पानी रे जुदा कर, कौन केहेसी कर रोसन ।
मोहजल गेहेरेमें डूबते, कौन काढे या धनी बिन ॥ ४५

दूध और पानी (ब्रह्म और माया) को अलग-अलग कर इन दोनोंके भेदका निरूपण सद्गुरुके बिना कौन करेगा ? गहरे मोहके जलमें डूबती हुई ब्रह्मात्माओंको सद्गुरु धनीके बिना कौन बाहर निकालेगा ?

अठोतर सौ पखका, कौन काढ देसी सार रे ।
सुख अक्षर अक्षरातीतके, कौन देसी बिना आधार रे ॥ ४६

भक्ति साधनाके एक सौ आठ पक्ष (सोपान) का सार शास्त्रोंसे निकालकर कौन देगा ? अक्षर और अक्षरातीतके अखण्ड आनन्द हमें इन धनीके बिना कौन देगा ?

नरसैयां कबीर जाटीयके, और कै साधो सास्त्र बचन रे ।
काढ दे सार कौन इनका, करके एह मथन रे ॥ ४७

भक्त नरसिंह मेहेता, सन्त कबीर और जाट भगत जैसे अनेक सन्तोंकी वाणियों और धर्म-शास्त्रोंके रहस्य हमें कौन स्पष्ट करेगा ? इन सब वचनोंका मन्थन करके इनका सार निकालकर हमें कौन देगा ?

महाप्रलेलों जो कोई, सास्त्र पढ करे अभ्यास ।
बहु विध लेवें विवेकसों, कर मन द्रढ विस्वास ॥ ४८

तो भी न आवे ए विवेक, ना कछू ए मुख बान रे ।
सो संग धनीके एक खिनमें, कर देवें सब पेहेचान रे ॥ ४९

महाप्रलय तक भी यदि कोई शास्त्रोंको पढ़कर अभ्यास करता रहे और मनमें दृढ़ विश्वास लेकर उन शास्त्र वचनोंका विवेकपूर्वक मनन करता रहे फिर

भी उनमें यह विवेक नहीं आ सकता और न ही वे इस सम्बन्धमें एक शब्द भी बोल सकते हैं, किन्तु सद्गुरुका सङ्ग क्षणमात्रमें उन सबकी पहचान करा देता है.

अब अबूझ टाल सुबुध देयके, कौन करसी चतुर वचिखिन रे ।
नेहेचल निध धनी धामकी, सो कहूं पाइए न चौदे भवन रे ॥ ५०

अब अज्ञानताको मिटाकर ब्रह्मज्ञान द्वारा सुबुद्धि प्रदान करके हमें चतुर और विचक्षण बुद्धि वाला कौन बनाएगा ? सद्गुरु धनीके बिना इन चौदह लोकोंमें परमधामकी अखण्ड निधि कहीं भी प्राप्त नहीं की जा सकती.

दूजा कौन देसी रे लड के, ऐसी जाग्रत बुध सुजान रे ।
साथ धामका जानके, कौन केहेसी हेत चित आन रे ॥ ५१

ऐसे सद्गुरु धनीके बिना हमें इस प्रकार झगड़ कर जागृत बुद्धिका ज्ञान कौन देगा ? हमें अपने परमधामके सम्बन्धी जानकर आन्तरिक प्रेमसे ऐसे विवेकपूर्ण वचन कौन कहेगा ?

नींद उडाए जगाएके, कौन देसी घर आप पेहेचान रे ।
खेल देखाए आप देह धर, कौन काढसी होए गलतान रे ॥ ५२

अज्ञानरूपी निद्राको उड़ाकर, जागृत करते हुए परमधाम एवं स्वयंकी पहचान कौन कराएगा ? धामधनीने मायावी देह धारण कर हमें जगतका खेल दिखाया. इस प्रकार गलितगात्र होते हुए कौन हमें मायासे बाहर निकालेगा ?

त्रैलोकी त्रगुन माया मिने, हम बैठे थे रचके घर रे ।
सो नेहेचल धाममें बैठाएके, याको कौन देखावे खेल कर रे ॥ ५३

हम सब ब्रह्मात्माएँ तो तीनों लोकों (स्वर्ग, मृत्यु और पाताल) को अपना घर मानकर और त्रिगुणाधिपति (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) को परब्रह्म समझकर, मायामें ही रचे-पचे बैठे थे. हमें जागृतकर इन सबसे परे, अखण्ड परमधाममें बैठाकर द्रष्टाभावसे संसारका खेल कौन दिखाएगा ?

अब ए चरचा कहां सुनसी, मूल बचन तारतम रे ।
ए सुने बिना हम क्यों गलसी, बिना बानी इन खसम रे ॥ ५४

अब हम सद्‌गुरु धनीके बिना तारतमके मूल वचनोंकी चर्चा कहाँ सुन पाएँगे ? अपने प्रियतम सद्‌गुरुके ऐसे वचनोंको सुने बिना हमारा मन कैसे द्रवित होगा ?

और घाट बिना गले, क्यों जीव टल होसी आतम रे ।
तीन दिवाल आडी भई, सो उडे ना बिना खसम रे ॥ ५५

अहंभाव द्रवित हुए बिना जीवभावसे आत्मभावमें कैसे पहुँच पाएँगे ? आत्मभाव तक पहुँचनेमें (स्थूल, सूक्ष्म और कारण ये) तीन दीवारें (आवरण) बाधक हैं. सद्‌गुरुके बिना ये आवरण कैसे उड़ सकते हैं ?

पांच पचीस जो उलटे, होए बैठे दुसमन रे ।
सो नेहेचल घरमें बैठाएके, कौन कर देवे सीधे सजन रे ॥ ५६

पाँच तत्त्व और पच्चीस प्रकृतियाँ उलटी दिशामें जाकर हमारी ही शत्रु बन गईं हैं. तारतम ज्ञानके द्वारा हमें अखण्ड परमधामका अनुभव करवा कर सद्‌गुरु धनीके बिना कौन उन्हें (पाँच तत्त्व और पच्चीस प्रकृतिको) सीधा और सज्जन बना देगा ?

बैरी मारके कौन जिवावसी, उलटे भानके करे सनमुख रे ।
या दुखमें इन धनी बिना, कौन देवें सांचे सुख रे ॥ ५७

शत्रु (बैरी) बनी हुई दुष्ट वृत्तियोंको मारकर अचेत हो गई आत्माको फिरसे कौन जीवित करेगा ? आत्मासे विमुख हुए गुणोंको मोड़कर उन्हें आत्माके सन्मुख कौन करेगा ? इस दुःखमय संसारमें सद्‌गुरुके बिना हमें सच्चा सुख कौन प्रदान करेगा ?

बीच पट आतम पर आतमा, कौन उडाए कर दे संग रे ।
इन दुलहे बिना दुलहिंनसों, क्यों होसी रस रंग रे ॥ ५८

आत्मा और परआत्माके बीचका अन्तर दूर कर उन दोनोंको एक कौन कर देगा ? (सद्‌गुरुके ज्ञानके प्रतापसे ही आत्मा अपने परात्मा स्वरूपका

अनुभव कर पाएगी). अपने प्रियतम (धामके धनी) के बिना, दुलहिन (आत्मा) को आनन्द विहारका अनुभव कैसे होगा ?

मोहजल पूर अंधेर में, जित काहूं ना किसीकी गम रे ।
तहांसे काढ देवे सुख नेहेचल, ऐसा कौन बिना इन खसम रे ॥ ५९

जब अज्ञानरूप अन्धकारसे भरे हुए मोहजल (भवसागर) का भी कहीं अन्त नहीं है तो ऐसे अन्तहीन भवसागरमेंसे निकालकर ऐसे सद्‌गुरुके बिना हमें कौन अखण्ड सुख प्रदान कर सकेगा ?

इन भवसागर के जीवों में, बासना ढूंढ काढे छुडाए के फंद रे ।
आतम अपनी पेहेचानके, कौन पावे आनंद रे ॥ ६०

इस संसारके जीवोंमेंसे ब्रह्मात्माओंको खोजकर कौन बाहर निकालेगा एवं कौन उन्हें बन्धनमुक्त करेगा ? इन जीवोंमेंसे अपनी आत्माओं (ब्रह्मात्माओं) को पहचान कर (सद्‌गुरुके बिना) दूसरा कौन आनन्दित होगा ?

अब कौन रे करसी ऐसा बरनन, नेहेचल ब्रज रास धाम रे ।
ए कौन सुख सैयोंको देयके, कौन मिलावे स्यामाजी स्याम रे ॥ ६१

सद्‌गुरुधनीके बिना अखण्ड व्रज, रास और परमधामका ऐसा सुन्दर वर्णन अब कौन करेगा ? ब्रह्मात्माओंको परमधामका अखण्ड सुख प्रदान करते हुए उन्हें श्यामश्यामाजीसे कौन मिलाएगा ?

आतमको रे जगाएके, कौन खोले आतमके श्रवन रे ।
अंतर पट उडाएके, कौन केहेसी मूल बचन रे ॥ ६२

ब्रह्मात्माओंको जागृतकर उनके (आत्माके) श्रवण कौन खोलेगा ? हृदय पर पड़े हुए अज्ञानरूपी परदाको हटाकर परमधामके मूल वचन कौन सुनाएगा ?

फोड ब्रह्मांड आडे आबरन, ताए पोहोंचावे अक्षर पार रे ।
सुख अखंड अक्षरातीतको, कौन देवे बिना इन भरतार रे ॥ ६३

चौदह लोक ब्रह्माण्डको फोड़कर सभी आवरणोंको दूर करते हुए आत्माको अक्षरके पार अक्षरातीत धाममें कौन पहुँचाएगा ? ऐसे सद्‌गुरुधनीके बिना अक्षरातीत ब्रह्मका अखण्ड सुख कौन प्रदान करेगा ?

ऊपर वाडे बाट धामकी, कौन बतावे और रे ।
इन भेदी बिना भोम क्यों छूटही, क्यों पोहोंचिए अखंड ठौर रे ॥ ६४

परमधामकी ओर जानेके आत्मिक (आकाश) मार्गको सद्‌गुरुके बिना और कौन बताएगा ? इस संसारके रहस्य (भेद) को जाननेवाले सद्‌गुरुके मार्ग दर्शनके बिना इस झूठे संसारसे छुटकारा पाकर अखण्ड धाममें कैसे पहुँचा जा सकेगा ?

साथ अजान अबूझको, कौन लेसी सुधार रे ।
बासना सगाई पेहेचानके, कौन खोल दे नेहेचल द्वार रे ॥ ६५

अनजान एवं नासमझ सुन्दरसाथको सत्य मार्ग बताकर अब कौन सुधारेगा ? आत्माके सम्बन्धको पहचानकर उनके लिए अखण्ड धामके द्वार कौन खोल देगा ?

सत सागर सुतेजमें, बतावत नेहेचल धन रे ।
सो पूर लेहेरां चल गई, आवत अमोल अखंड रतन रे ॥ ६६

सद्‌गुरुधनी स्वतः प्रकाशमान तेजोमय सत्य सागर तारतम ज्ञानके द्वारा परमधामकी अखण्ड सम्पदा बताया करते थे. अब उनके चले जाने पर यह ज्ञानका प्रवाह भी उनके साथ चला गया. वह तो आत्माके लिए अमूल्य रत्नोंके भण्डारके समान था.

ए धन मेरे धनीयका, आया था मुझ कारन रे ।
सो धन खोया मैं नींदमें, धनी देते कर कर जतन रे ॥ ६७

धामधनीका ऐसा अखण्ड धन मेरे लिए ही इस संसारमें आया था. मैंने अज्ञानकी नींदमें सोते हुए उस अखण्ड निधिको खो दिया. सद्‌गुरु धनी तो मुझे यत्नपूर्वक यह धन (तारतम ज्ञान) दिया करते थे.

ए धन जाते मेरे धनीका, सो तूं देखके कैसे रही रे ।
फिट फिट भूंडी पापनी, तें एती पुकार क्यों सही रे ॥ ६८

हे आत्मा ! मेरे धनीके ऐसे अखण्ड धनको जाते हुए देखकर तू यहाँ कैसे पड़ी रह गई ? हे दुष्ट पापिनी ! तुझे धिक्कार है. सद्‌गुरुकी इतनी पुकार तू

कैसे सह सकी ?

फिट फिट रे मेरी आतमा, तें क्यों खोई निध आई हाथ रे ।
कर दै धनी धाम पेहेचान, तो तूं क्यों ना चली पीउ साथ रे ॥ ६९

हे मेरी आत्मा ! तुझे धिक्कार है, हाथमें आई हुई यह अखण्ड निधि (तारतम ज्ञान) तूने क्यों खो दी ? धामधनीने तुझे अपनी पहचान करा दी थी तो तू उनके साथ ही क्यों चली नहीं गई ?

संग पीउके ना चली, क्यों रही पीउसों बिछुर रे ।
अजहूं आहि तेरी ना उडी, याद कर अवसर रे ॥ ७०

ओ मेरी आत्मा ! तू सद्गुरुधनीके साथ ही चली नहीं गई, उनसे विछुड़कर तू कैसे रह गई ? ऐसे दारुण अवसरको याद करते हुए अभी तक तेरी श्वाँस (आहें) नहीं उड़ी ?

त्राहि त्राहि करूं रे सजनी, पीउजी दियो मोहे छेह ।
जल बल बिरहा झालमें, भसम ना हुई जीव देह ॥ ७१

हे सखियो ! मेरी आत्मा "त्राहि माम्, त्राहि माम्" कह उठती है क्योंकि सद्गुरुने मुझे वियोग दिया है, फिर भी उनकी विरहाग्निकी ज्वालामें जलकर मेरा जीव और यह देह भस्म नहीं हो रहे हैं.

कै विध कह्या मोहे पीउजी, पर मैं कछू न कियो सनेह रे ।
अब तो बैठी धन खोएके, हाथ आया था जेह रे ॥ ७२

सद्गुरुने मुझे अनेक प्रकारसे समझाया, परन्तु मैंने उनसे जरा-सा भी स्नेह नहीं किया. इसलिए अपने हाथमें आए हुए धनको खो कर अब मैं बैठी हुई हूँ.

धनिएं तो केहे केहे देखाइया, कर कर मुझसों एकांत रे ।
पर मैं चूकी चंडालन अवसर, अब पकड बैठी मैं स्वांत रे ॥ ७३

सद्गुरुने मुझे अनेक दृष्टान्त देकर कहा और एकान्तमें बैठाकर समझानेका प्रयास भी किया, परन्तु मैंने चण्डालिनके समान वह सुअवसर खो दिया और अब शान्त हो बैठी हूँ.

अब सबदातीत निध धामकी, ए कौन केहेसी मुख बान रे ।
श्री धामके सुखकी रे बीतक, कौन केहेसी बरतमान रे ॥ ७४

अब इस प्रकार अपने श्रीमुखसे परमधामकी शब्दातीत निधिके विषयमें कौन बताएगा ? परमधामके अखण्ड सुखोंकी वीतक वर्तमान समयमें प्रत्यक्षरूपसे कौन कहेगा ?

उठते बैठते खेलनकी, सुध कौन कहे एह सुकन रे ।
वन जाय अन्हाएके, कौन केहेसी सिनगार बरनन रे ॥ ७५

परमधाममें हम कैसे उठते, बैठते और खेलते थे, इन वचनोंको अब कौन कह सुनाएगा ? वनोंमें जाकर स्नान और शृङ्गार करनेकी लीलाका वर्णन अब कौन करेगा ?

बस्तर भूषनकी बिगत, पीउ बिना कौन लेवे रे ।
ए सुख अनभव अपना, सनमंध करके कौन देवे रे ॥ ७६

परमधामके चिन्मय वस्त्र और आभूषणोंका वर्णन सद्गुरुके बिना अब कौन करेगा ? इन अखण्ड सुखोंका अपना अनुभव हमें अपना सम्बन्धी जानकर अब कौन प्रदान करेगा ?

कै सुख अनभव बनके, कै सुख सातों त्रट रे ।
सुख ताल मंदिर मोहोलनके, कौन देवे उडाए अंतर पट रे ॥ ७७

परमधामके वनोंके सुखका अनुभव एवं यमुना नदीके सातों घाटोंके आनन्दका वर्णन अब कौन करेगा ? हौजकोसर ताल एवं उसके मंदिरोंका वर्णन कर हमारे अन्तरपट (पर्दा) को कौन हटाएगा ?

तीसरी भोम मोहोल सिनगार, और बैठक आरोग पौढन रे ।
सुखपाल बैठ बन सिधावते, कौन केहेसी पीछला पोहोर दिन रे ॥ ७८

परमधाममें रंग महलकी तीसरी भूमिका पर होने वाले शृङ्गार, बैठक, भोजन ग्रहण एवं विश्रान्तिके सुखका वर्णन हमें कौन सुनाएगा ? पिछले प्रहरमें सुखपालों (विमानों) में बैठकर वन परिभ्रमणके आनन्दका वर्णन कौन करेगा ?

सुख चौथी भोम निरतके, सुख पांचमी भोम पौढन रे ।
ए सुख अनभव कौन केहेसी, कै विध बिलास रैन रे ॥ ७९

चौथी भूमिकाके नृत्य और पाँचमी भूमिकाकी विश्रान्तिके विभिन्न सुख विलासका अनुभव अब कौन कहेगा ?

कै विध सुख तारतमके, जो कहे बचन सुख मूल रे ।
या विध हमें कौन कहे बरनन, सनमंध होए सनकूल रे ॥ ८०

मूल घर परमधामके अखण्ड सुख देनेवाले तारतमके वचन अब कौन कहेगा ? इस प्रकार वर्णन कर हमें कौन सुनाएगा, जिससे मूल सम्बन्धकी पहचानमें अनुकूलता होगी.

देत बिछोहा धनी धामके, तुम क्यों न किया एह बिचार रे ।
हुती आसा मुखी इन्द्रावती, सुख चाहती अखंड अपार रे ॥ ८१

हे सद्गुरु धनी ! अपनी अङ्गनाको वियोग देते हुए आपने ऐसे विचार क्यों नहीं किए ? इन्द्रावती तो आपसे अखण्ड और अपार सुख प्राप्त करनेकी आशा लेकर बैठी थी.

जाटी भाषामें विलाप - हिन्दी

मेरी सैयल रे, साह आए थे मेरे घर ।
मैं पेहेचान ना कर सकी, पीउ चले पुकार पुकार ॥ १

हे मेरी सखी ! प्रियतम धनी मेरे घर आए थे, मैं उनकी पहचान न कर सकी. वे मुझे बार-बार पुकारते हुए चले गए.

पीउ आए ना पेहेचाने, मोहे ना परी सुध ।
बचन कहे जो हेत के, भांत भांत कै विध ॥ २

प्रियतम धनी आए किन्तु मैंने उन्हें पहचाना नहीं. मुझे इसकी कुछ भी सुधि नहीं हुई. उन्होंने बड़े प्यारसे भाँति-भाँतिके वचन कहे (किन्तु मैंने उन पर ध्यान नहीं दिया).

नींद ऐसी भई निगोडी, ए तुम देखो रे सई ।
दिन दो पोहोरे जागते, मोहे काली रैन भई ॥ ३

हे सखियो ! जरा देखो तो, यह नींद ऐसी झूठी अपङ्ग और नशीली हो गई कि जिससे जागते हुए दिनका मध्याह्न भी मेरे लिए काली रातके समान हो गया.

घर आए ना पेहेचाने, कहे विध विध के बचन ।
कान आंखां फूटियां, और फूटे हिरदेंके नैंन ॥ ४

सद्गुरुधनी मेरे घर आए किन्तु मैंने उन्हें नहीं पहचाना. उन्होंने मुझे जगानेके लिए अनेक प्रकारके वचन भी कहे परन्तु मेरे कान और आँखें फूट गई थीं. इतना ही नहीं, हृदयके विवेकरूपी नेत्र भी फूट गए.

सजन मेरा चल गया, अब रहूंगी विध किन ।
बस्त गई जब हाथ थें, अब रोवना रात दिन ॥ ५

मेरे प्रियतम धनी चले गए. अब मैं उनके बिना किस प्रकार रह पाऊँगी ? हाथमें आई हुई वस्तुके चले जाने पर अब तो दिन-रात रोना ही शेष रह गया.

मैं तो तब ना उठ सकी, पीउ चले बखत जिन ।
क्यों खोऊं धनी अपना, जो तबहीं पकडों चरन ॥ ६

सद्गुरुधनीके जाते समय मैं उठ कर खड़ी भी नहीं हो पाई. यदि मैं उसी समय उनके चरण पकड़ लेती तो अपने स्वामीको क्यों खो देती ?

जो मैं तबहीं जागती, तो क्यों जावे मेरा पीउ ।
क्यों छोडों खसमको, संग पीउके मेरा जीउ ॥ ७

यदि उस समय भी मैं (इस मायावी नींदसे) जाग जाती तो मेरे प्रियतम धनी क्यों चले जाते ? मैं ऐसे धनीको कैसे छोड़ देती जिनके साथ मेरे प्राण (जीव) जुड़े हुए हैं.

अब तरफ दसों दिस देखिए, तो गेहेरे मोहके जल ।
मेर जैसी लेहेरों मिने, मांहें मछ गलागल ॥ ८

अब दशों दिशाओंमें दृष्टि डालने पर भी गहरा मोह सागर ही दिखाई देता है. भवसागरमें पर्वतके समान ऊँची लहरें उठतीं हैं और भयङ्कर जलके जीव एक दूसरेको निगलते हुए दिखाई देते हैं.

जल मांहें भमरियां, कै विध तीखे तान ।
कहूं सुख नहीं साएतका, ए दुख रूपी निदान ॥ ९

इस मोह जलके अन्दर अनेक प्रकारके भँवर हैं और तीव्र प्रवाह जीवको अपनी ओर खींच रहे हैं. इस संसारमें पल भर भी सुख चैन नहीं है. निश्चय ही यह दुःखसे भरा हुआ है.

एक घोर अंधेरी आंखां नहीं, और ठौर नहीं बुध मन ।
विषम जल ऐसे मिने, पीउ आए मुझ कारन ॥ १०

एक ओर यहाँ अज्ञानरूपी घोर अन्धकार छाया हुआ है, दूसरी ओर ज्ञानरूपी आँखें भी नहींवत् हैं. बुद्धि और मनको केन्द्रित करनेका स्थिर स्थान भी दिखाई नहीं देता है. ऐसे विषम मोहजल (मायावी संसार) में धामधनी मेरे लिए सद्गुरु बनकर आए हैं.

मांहें भभूके आगके, खाना अमल जेहेर अति जोर ।
पीउ पुकारे कै विध, मैं उठी ना अंग मरोर ॥ ११

इस भूमिमें विषय वासनाओंके शोले जलते हैं. यहाँका खान-पान भी नशीला और विषैला है. ऐसे विकट संसारमें सद्गुरुने मुझे अनेक प्रकारसे पुकारा परन्तु मैं अपने अंगोंको मोड़कर उठ नहीं सकी.

पीउ मेरा मुझ वास्ते, आए ऐसेमें आप ।
कै विध जगाई मोहे, मैं कर ना सकी मिलाप ॥ १२

मेरे धनी मेरे लिए ही ऐसी विषम परिस्थितिमें इस जगतमें प्रकट हुए. उन्होंने मुझे अनेक प्रकारसे जगाया परन्तु मैं उनका साथ न दे सकी.

अब कहा करूं कहां जाऊं, टूट गई मेरी आस ।
कहां वतन कौन बतावे, पीउ ना देखों पास ॥ १३

अब मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? मेरी तो आशा ही टूट गई. मेरा मूल घर परमधाम कहाँ पर है और इसे कौन बताएगा ? धामधनी तो कहीं आस पास दिखाई नहीं दे रहे हैं.

प्रकरण ७ चौपाई १८२

पुकार चले मेरे पीउजी, मैं तो नींदैमें उरझीय रे ।
अब ढूंढे मेरा जीव रे, सो सजन अब कित पाइए ॥ १

मेरे सद्गुरुधनी मुझे पुकारते हुए चले गए परन्तु मैं तो नींदमें ही उलझी हुई रह गई. अब मेरा जीव उन्हें ढूँढ़ रहा है किन्तु अब प्रियतम मुझे कहाँ मिलेंगे ?

सई रे पीउकी बातें मैं कैसे कहूं, मोसों आए कियो मिलाप ।
मेरे वास्ते माया मिने, क्यों कर डार्‌या आप ॥ २

हे सखी ! मैं अपने सद्गुरु धनीकी बातें कैसे कहूँ ? उन्होंने तो स्वयं आकर मुझसे मिलाप किया. उन्होंने मेरे लिए अपने आपको भी किस प्रकार इस मायामें डाल दिया (शरीर धारण किया).

आए वतनथें पीउ अपना, देखाएके चले राह ।
आधा गुन जो याद आवे, तो तबहीं उडे अरवाह ॥ ३

अपने धामधनी परमधामसे इस मायावी जगतमें आए और वे हमें परमधामका मार्ग दिखा कर चले गए. यदि उनके एक गुणमेंसे आधा भाग भी याद आ जाए तो आत्मा तुरन्त ही शरीर छोड़ सकती है.

साहेब चले वतन को, केहे केहे बोहोतक बोल ।
धिक धिक पडो मेरे जीवको, जिन देख्या न आंखां खोल ॥ ४

सद्गुरु धनी हमारे लिए तारतम ज्ञानकी अनेकों बातें कहकर अपने घर (परमधाम) चले गए. मेरे जीवको धिक्कार है कि उसने आँखें खोल कर उनको जाते हुए देखा तक नहीं.

सई रे अनेक भांत मोंसों कही, मोहे सालत हैं सो बैंन रे ।
सो भी कह्या आंझू आंन के, पर मैं पलक ना खोले नैन रे ॥ ५

हे सखी ! सद्‌गुरुने मुझे कई प्रकारसे उपदेश दिया. उनके उपदेशके वे वचन मुझे अब व्यथित कर रहे हैं. उन्होंने तो आँखोंमें आँसू भरकर भी समझाया परन्तु मैंने एक पलके लिए भी आँखें नहीं खोलीं.

आंखों पानी भरके, हाथ पकड किया सोर ।
आग परो मेरे जीवको, जाको अजहूं एही मरोर ॥ ६

अपनी आँखोंमें जल भरकर, मेरा हाथ पकड़ते हुए उन्होंने मुझे ऊँचे स्वरसे पुकारा. मेरे इस जीवको आग लग जाए, जो अभी तक मायाकी ओर ही मुड़ा हुआ है.

सई रे अब मैं कहा करूं, मेरा हाल होसी विध किन ।
वतन बैठ सैयनमें, क्यों कर करूं रोसन ॥ ७

हे सखी ! अब मैं क्या करूँ ? मेरी क्या दशा होगी ? परमधाममें ब्रह्मात्माओंके बीच बैठकर मैं अपनी इस दशाको कैसे प्रकट कर पाऊँगी ?

अब सुनो रे तुम सैयां, कहूं सो बीतक बात ।
पानी तो पीउजी ले चले, अब तलफूं मछली न्यात ॥ ८

हे सखियो ! अब सुनो, मैं तुमको अपनी आपबीती कह रही हूँ. सद्‌गुरु धनी प्रेमरूपी जल तो ले गए हैं. अब मैं बिना पानी मछलीकी भाँति तड़फ रही हूँ.

कर कर सोर जो वल्लभा, फिरे जो आप वतन ।
चले जो मेरे देखते, केहे केहे अनेक बचन ॥ ९

मेरे प्राणवल्लभ सद्‌गुरु मुझे पुकार-पुकार कर परमधाम लौट गए. मेरे देखते-देखते ही वे मुझे अनेक उपेदश देकर चले गए.

दुलहा मेरा चल गया, मेरी बले न जुबां यों ।
पल पल बचन पीउके, मोहे लगे कटारी ज्यों ॥ १०

'मेरे धामधनी चले गए' ऐसा कहनेमें मेरी जिह्वा मुड़ नहीं पाती. सद्‌गुरुके

वचन मुझे पल-पल कटारकी भाँति चुभ रहे हैं.

आग पडो तिन देसडे, जित पीउकी नहीं पेहेचान ।
तो भी सुध मोहे ना भई, जो हुई एती हान ॥ ११

उस देशको आग लग जाए जहाँ ऐसे सद्‌गुरु धनीकी पहचान नहीं होती. मेरी इतनी हानि हो गई तो भी मुझे होश नहीं आया.

काट जीव टुकडे करों, मांहें भरूं मिरच और लोंन ।
ए दरद पिया इन भांतका, अब ए मेटे कौन ॥ १२

सद्‌गुरुके विरहमें मैं अपने शरीरको काटकर टुकड़े-टुकड़े कर दूँ और उसमें नमक-मिर्च भर दूँ तो भी हे धनी ! आपके वियोगकी इस वेदनाको कौन मिटाएगा ?

आग लगी झालां उठियां, जीवरा जले रे मांहें ।
तलफ तलफ मैं तलफूं, पर ठंढक न दारू क्यांहें ॥ १३

मानों शरीरमें आग लगी हुई हो और उसकी लपटें चारों ओर फैल गई हों एवं जीव इसीमें जलकर छटपटा रहा हो ऐसा ही अनुभव मुझे होता है. मैं वारंवार तड़प रही हूँ परन्तु शीतलता प्रदान करनेवाली औषधि अब कहीं नहीं मिलेगी.

दुलहासों जो मैं करी, ऐसी करे न दूजा कोए ।
बिलख बिलख पीउजी चले, पर मैं मूंदी आंखां दोए ॥ १४

अपने धामधनीके साथ मैंने जैसा व्यवहार किया, वैसा अन्य कोई नहीं करता. सद्‌गुरु धनी मुझे जागृत करनेके लिए विलखते हुए चले गए, परन्तु मैंने अपने बाह्य और अन्तरकी दोनों आँखें बन्द कर लीं.

अब क्यों करूंगी मैं बातडी, सामी क्यों उठाऊंगी मोंह ।
मेरे हाथ ऐसी भई, खलडी उतारूं सिर नोंह ॥ १५

अब परमधाममें जागृत होकर मैं धनीके सन्मुख कैसे बात करूँगी और अपना सिर कैसे उठाऊँगी ? मुझसे ऐसा अनिष्ट हुआ कि मैं सिरसे पाँवके

नख तक (इस दोषके निवारणार्थ) अपनी खालको खींचकर निकाल डालूँ.

काटूं तन तरवारसों, भूक करूं हडियां तोर ।
खलडी उतारूं पेहेले उलटी, जीव काढूं यों जोर ॥ १६

तलवारसे मैं अपना शरीर काट दूँ और हड्डियोंको तोड़कर चूर्ण बना दूँ. पहले इसकी खालको उलटी खींच लूँ. इस प्रकार अपने जीवको बल पूर्वक बाहर निकाल दूँ.

तरवार भालें कटारियां, मोहे काट करी टूक टूक ।
मेरे अंग हुए मुझे दुसमन, जीव करे मिने कूक ॥ १७

तलवार, भाले और कटारोंके समान मेरे अवगुणोंने ही मुझे काटकर टुकड़े-टुकड़े कर दिया. इस प्रकार मेरे अपने ही अङ्ग मेरे शत्रु बन गए. अन्दर बैठकर मेरा जीव मात्र पुकारता ही रह गया.

धाम धनी पेहेचानके, सीधी बात न करी सनमुख ।
कबूं दिल धनीका मैं न रख्या, अब क्यों सहूंगी ए दुख ॥ १८

सद्गुरुके रूपमें पधारे हुए धामधनीको पहचानकर भी मैंने उनके सन्मुख सीधी बात नहीं की. मैंने कभी भी सद्गुरुधनीका दिल नहीं रखा (उनकी बात नहीं मानी). अब मैं यह वियोगजन्य दुःख कैसे सह पाऊँगी ?

दरद मीठा मेरे पीउका, ए जो आग दै मुझे तब ।
अति सुख पाया मैं इनमें, सो मैं छोड ना सकों अब ॥ १९

सद्गुरुधनीने मुझे विरहकी जो अग्नि दी है उसकी दाह भी मुझे अब मीठी लगने लगी है. इस विरह वेदनामें भी मुझे अधिक सुख प्राप्त हो रहा है. अब उसको मैं किसी प्रकार छोड़ नहीं सकती.

ऐसा सुख तेरे सूलमें, तो विलास होसी कैसा सुख ।
पर मैं ना पेहेचाने पीउको, मोहे मारत हैं वे दुख ॥ २०

हे धनी ! जब आपके विरहकी पीड़ामें मुझे ऐसा सुख प्राप्त हो रहा है तो आपके साथ विलास करनेमें कैसा सुख प्राप्त होगा ? किन्तु मैंने अपने प्रियतम धनीको पहचाना नहीं, वही दुःख मुझे बार-बार सता रहा है.

सब अंग मेरे टुकडे करूं, भूक करूं देह जीउ ।
सो वार डारूं तुम दिस पर, इत सेवा हुई कहां पीउ ॥ २१

अब मैं अपने सब अंगोंके टुकड़े-टुकड़े कर दूँ और इस देहको भी पीसकर चूर्ण बना दूँ, और उसे आपकी राहोंमें बिछा दूँ. फिर भी मुझसे आपकी क्या सेवा हो सकेगी ?

हडियां जारूं आगमें, मांहें मांस डारूं सिर ।
ए भूली दुख क्योंए ना मिटे, ए समया न आवे फिर ॥ २२

इस शरीरकी हड्डियोंको विरहकी अग्निमें जला दूँ और सिर एवं मांसको भी उसमें होम कर दूँ, फिर भी आपको भूल जानेका दुःख किसी भी उपायसे मिट नहीं सकता. ऐसा समय फिर कभी लौट कर आ नहीं सकता.

जरा जरा मेरे जीवका, विरहा तेरा करत ।
चरने ल्यो इन्द्रावती, पेहेले जगाएके इत ॥ २३

हे सद्गुरु ! मेरे शरीरका एक-एक रोम आपके विरहमें व्याकुल है. अपनी अङ्गना इन्द्रावतीको यहीं पर पहले जागृत करके फिर अपनी शरणमें ले लीजिए.

चौपाई प्रगटी है

एक लवो याद आवे सही, तो जीव रहे क्यों काया ग्रही ।
अब सुनियो साथ कहूं बिचार, भूले आपन समें निरधार ॥ १

सद्गुरु धनीके वचनोंका यदि एक अंश भी याद रहे तो यह जीव इस कायाको पकड़कर कैसे रह पाएगा ? हे मेरे सुन्दरसाथजी ! मेरी बातको विचारपूर्वक सुनो. हम इस समय धामधनीको निश्चय ही भूल गए हैं.

गयो अवसर फेर आयो है हाथ, चेतन कर दिए प्राणनाथ ।
तब जो वासना बाई रतन, लीलबाईके उदर उतपन ॥ २

बीता हुआ वह समय फिरसे लौट आया है. प्राणोंके नाथ सद्गुरुने हमें पुनः

सचेत कर दिया है. देखो, रतनबाईकी आत्मा-विहारीजी लीलबाईके गर्भसे उत्पन्न हुए हैं.

श्री देवचन्द्रजी पिता परवान, देखके आवेस दियो निरवान ।
बचन धनीके कहे निरधार, आवेस पीउजीको है अपार ॥ ३

श्रीदेवचन्द्रजी उनके पिता हैं. निश्चय ही सद्गुरुने हम दोनों (इन्द्रावती और रतनबाई) को परखकर योग्यतानुसार अपना आवेश प्रदान किया. सद्गुरुके ये वचन स्पष्ट करते हैं कि जागनीके लिए मुझे दिया गया उनका पूर्ण आवेश अपरम्पार है.

इन बानिएं ब्रह्मांड जो गले, तो बासना बानीसे क्यों पीछे टले ।
बासना कारन बांधे बंध, कै भांते अनेक सनंध ॥ ४

सद्गुरु प्रदत्त इस तारतम वाणीको सुनकर ब्रह्माण्ड भी द्रवित हो सकता है, तो फिर ब्रह्मात्माएँ उन वचनोंको सुनकर कैसे पीछे रह जातीं ? अपनी आत्माओंको जागृत करनेके लिए उन्होंने अनेक भाँति चामत्कारिक (आड़िका) लीलाएँ कीं.

ए बानी कही मेरे धनी, आगे कृपा होसी घनी ।
हरषें साथ जागसे एह, रेहेसे नहीं कोई संदेह ॥ ५

सद्गुरुने यह वाणी (तारतम ज्ञान) कही है. भविष्यमें (पूर्णवाणी उतरने पर) हम पर अधिक कृपा होगी. इस वाणीको पाकर सब सुन्दरसाथ प्रसन्न होते हुए जागृत हो जाएँगे. उनके मनमें कोई सन्देह शेष नहीं रहेगा.

साथको घरों ले जाना सही, कोई मायामें ना सके रही ।
खैंचे सबोंको ए बानी, फिरसी घरों धनी पेहेचानी ॥ ६

हमें सब ब्रह्मात्माओंको परमधाम ले जाना है, यह ध्यान रखना है कि कोई भी इस मायामें न रह जाए. सद्गुरुकी यह तारतम वाणी सबको परमधामकी ओर खींच रही है. इस वाणीके द्वारा धामधनीको पहचानकर सब आत्माएँ अपने घर परमधाम लौटेंगी.

भी वाही चरचाने वाही बान, बचन केहेते जो परवान ।
व्रज रास श्रीधामके सुख, साथको केहेते जो श्रीमुख ॥ ७

पख पचीस बरनवे जेह, भी सुख वल्लभ देवे एह ।
अंतरध्यान समे ज्यों भए, भी आए बचन पिया सोई कहे ॥ ८

सद्गुरु धनी तारतम ज्ञानकी जैसी चरचा किया करते थे, प्रमाण दे-देकर जैसे समझाते थे, अपने श्रीमुखसे व्रज, रास और परमधामके विविध प्रसंगोंका वर्णन सुनाया करते थे, परमधामके पच्चीस पक्षोंका जैसा वर्णन करते थे, प्राणवल्लभ धनी मेरे हृदयमें बैठ कर आज भी सबको पुनः प्रदान कर रहे हैं. रास लीलामें अन्तर्धान होनेके बाद, पुनः वही आनन्द प्रकट होकर जिस प्रकार आनन्द प्रदान किया था उसी प्रकार मेरे हृदयमें विराजमान होकर वे पुनः तारतमके वचन मेरेसे कहला कर वही आनन्द दे रहे हैं.

पेहेले फेरे हुआ है ज्यों, भी इत पियाने किया है त्यों ।
सोई पिया और सोई दिन, देखो तारतमके बचन ॥ ९

पहले रास लीलामें जैसे श्रीकृष्ण पुनः प्रकट हुए थे, इसी प्रकार यहाँ भी सद्गुरु धनीने मेरे हृदयमें प्रकट होकर पुनः वैसा ही किया. वही प्रियतम धनी हैं और वे ही आनन्दके दिन हैं. तारतमके वचनों पर विचार कर इस रहस्यको समझो.

सोई घडी और सोई पल, मायाएं बीच डार्‌यो बल ।
साथको छिन न्यारे ना करे, बिना साथ कहूं पांउ ना धरे ॥ १०

यह वही घड़ी और वही पल दिख रहा है परन्तु मायाने बीचमें वियोगका विक्षेप डाल दिया था. वस्तुतः धामधनी कभी भी अपने सुन्दरसाथको स्वयंसे अलग नहीं करते. सुन्दरसाथके बिना वे कहीं पर एक कदम भी नहीं रखते.

बेर ना हुई एक अधछिन, किया मायाएं बिछोहा घन ।
मारकंड माया द्रष्टांत, मांगी धनीपें करके खांत ॥ ११

आधे क्षण जितना भी विलम्ब नहीं हुआ है किन्तु मायाने ही धनीजीका

वियोग इतना बड़ा कर दिया. जिस प्रकार मार्कण्डेय ऋषिने भगवानसे माया देखनेकी इच्छा व्यक्त की थी, उसी प्रकार ब्रह्मात्माओंने भी धामधनीसे अक्षर ब्रह्मकी माया देखनेकी माँग की.

देखो मायाको बरतांत, ए दूर होए तो पाइए स्वांत ।
ततछिन कंपमान सो भयो, माया मिने भिलके गयो ॥ १२

मायाके वृत्तान्त (हाल) को तो देखो, जब यह हमसे दूर होगी तभी हमें शान्ति मिलेगी. मार्कण्डेय ऋषि मायाके प्रवाहमें आते ही काँपने लगे और स्वयं मायामें ही एकाकार हो गए.

कल्पांत सात छियासी जुग, कियो मायाएं बेसुध एते लग ।
कछुए ना भई खबर, अति दुख पायो रिषीस्वर ॥ १३

सात कल्प और छयासी युग तक मायाने उन्हें बेसुध कर दिया. उनको कुछ भी पता नहीं चला. इस प्रकार ऋषिवर मार्कण्डेयजीने बहुत दुःख पाया.

तब नारायनजीएं कियो प्रवेस, देखाई माया लवलेस ।
फिरी सुरत आये नारायण, याद आवते गये निसान ॥ १४

तब भागवान नारायणने उनके हृदयमें प्रवेश किया और उन्हें मायाके वास्तविक रूपका लेशमात्र आभास करवाया. जब भगवान नारायणकी प्रेरणासे उनका ध्यान भङ्ग हुआ तो उनको अपने सभी मूल चिह्न याद आने लगे.

याद आया सरूप बैठा जांहें, तब उड गई माया जानो हती नांहें ।
जाग देखे तो सोई ताल, बीच मायाएं कियो ऐसो हाल ॥ १५

जब उन्हें अपना मूल स्वरूप याद आया तो वे अपने ही स्थान पर जाग बैठे. तब माया ऐसे उड़ गई कि मानों वह कभी थी ही नहीं. जब ऋषिने जागृत होकर देखा तो उनके सामने वही घड़ी, वही क्षण और वही समय दिखाई देने लगा. बीचमें क्षणमात्रमें ही मायाने उनका ऐसा हाल बना दिया था.

मायाकी तो एह सनंध, निरमल नेत्रे होइए अंध ।
ता कारन कियो प्रकास, तारतमको जो उजास ॥ १६

मायाकी तो यही वास्तविकता है कि निर्मल दृष्टि वाले व्यक्ति भी इस तरह अन्धे हो जाते हैं. इसलिए सद्‌गुरुने इस प्रकाश वाणीका वर्णन कर तारतम ज्ञानका प्रकाश फैलाया.

सोए लेके आए धनी, दया आपन ऊपर है घनी ।
जाने देखसी माया न्यारे भए, तारतमके ऊजियारे रहे ॥ १७

इस प्रकार तारतम ज्ञानका प्रकाश लेकर हमारे सद्‌गुरु आए हैं. हम सुन्दरसाथ पर उनकी अपार कृपा है. मानों तारतमके प्रकाशमें सुन्दरसाथ मायासे अलिप्त होकर इसे देखेंगे.

भले तारतम कियो प्रकास, देखाया मायामें अखंड विलास ।
तारतम बचन उजाला कर्‌या, दूजा देह मायामें धर्‌या ॥ १८

यह अच्छा हुआ कि सद्‌गुरुने हमारे लिए इस ब्रह्माण्डमें तारतमका प्रकाश फैला दिया और इस मायामें भी अखण्ड सुखोंका अनुभव करवाया. इस प्रकार सद्‌गुरुने दूसरी बार मायामें शरीर धारण कर तारतम ज्ञानका प्रकाश (तारतमवाणी द्वारा) फैलाया.

बिनती

बिनती एक सुनो मेरे प्यारे, कहूं पीउजी बात ।
आए प्रगटे फेर कर, करी कृपा देख अपन्यात ॥ १

हे मेरे प्यारे सुन्दरसाथजी ! मेरी एक प्रार्थना सुनो, मैं सद्‌गुरु धनीकी बात कहता हूँ. वे हमें अपना समझकर हम पर कृपा करते हुए फिरसे हमारे बीच प्रकट हुए हैं.

श्री देवचन्दजी हम कारने, निध तुमारे हिरदें धरी ।
बचन पालने आपना, साथ सकल पर दया करी ॥ २

सद्‌गुरु श्रीदेवचन्द्रजी हमारे लिए ही आए हैं. उन्होंने सुन्दरसाथके लिए

अपने हृदयमें परमधामकी अपार निधि धारण की है. 'परमधाम जाकर भी सुन्दरसाथकी संभाल रखेंगे' इस प्रकार धामगमनके समय दिए हुए वचन पूरा करनेके लिए वे मेरे हृदयमें पुनः प्रकट हुए हैं; उन्होनें समस्त सुन्दरसाथ पर दया की है.

जनम अंध जो हम हते, सो तुम देखीते किए ।
पीठ पकड हम ना सके, सो फेर कर पकर लिए ॥ ३

हम तो जन्मसे ही अन्धे (अज्ञानी) थे. हे सद्गुरु ! आपने ही हमें तारतम ज्ञान देकर दृष्टि दी. हम तो आपके पीछे भी न चल सके, परन्तु आपने पुनः लौटकर हमारा हाथ पकड़ लिया.

अब जो कछू हममें, होसी मूल अंकूर ।
जो नींद उडाए तुम निध दई, सो क्यों छोडों पिया नूर ॥ ४

यदि अब भी हममें परमधामका कुछ अङ्कुर (सम्बन्ध) होगा, तो आपने हमें भ्रमरूपी निद्राको दूर कर तारतम ज्ञानकी जो अपूर्व निधि प्रदान की है, उस प्रकाश (नूर) को हम अब कैसे छोड़ पाएँगे ?

पेहेले तो हम न पेहेचाने, सो सालत है मन ।
चरचा कर कर समझाए, कहे विध विधके बचन ॥ ५

पहले तो हम आपको नहीं पहचान सके, अब भी वह बात मनमें खटकती है. अखण्ड परमधामका वर्णन करते हुए आपने हमें अनेक प्रकारके वचन समझाए.

ऐसे अनेक बचन कहे हमको, जिन एक बचने पेहेचाने तुमको ।
तुम दई पेहेचान विधविध कर, पर निरोध बैठा हिरदा पकर ॥ ६

आपने हमें ऐसे अनेक वचन कहे, उनमेंसे एक वचन भी समझमें आ जाता तो हम आपको पहचान लेते. आपने तो हमें कई प्रकारसे अपनी पहचान कराई, परन्तु मायावी मन एक अवरोधक बनकर बैठा रहा.

तब हंस लर आझूं आन के कह्या, पर तिन समे हम कछू ना लह्या ।
तब तारतम कहे देखाया घर, हम तो भी ना सके पेहेचान कर ॥ ७

उस समय आपने हँसकर, झगड़कर और आँखोंमें आँसू तक भरकर हमें समझाया परन्तु ऐसे समयमें भी हमने आपकी बातें नहीं सुनीं. फिर तारतमके वचन कहकर आपने हमें परमधाम दिखाया, तब भी हम आपको पहचान नहीं सके.

तब हममेंसे अद्रष्ट भए, कोई कोई बचन हिरदेमें रहे ।
जो या समें खबर ना लेते तुम, तो मोहजल दुख अति पावते हम ॥ ८

तब आप हमारे बीचसे अदृश्य हो गए फिर भी कोई-कोई शब्द ही हमारे हृदयमें रह सके. इस समय यदि आप पुनः प्रकट होकर हमारी सुधि नहीं लेते तो हम मोहजल (मायावी संसार) के घोर दुःखोंको भोगते रह जाते.

यों जानके आए हम मांहें, आए बैठे प्रगटे तुम जांहें ।
ज्यों आपन पेहेले व्रजमें हते, नित प्रतें पियासों प्रेमें खेलते ॥ ९

अनेक खेल किए आपन, पूरन मनोरथ सब किये तिन ।
अग्यारे बरसलों लीला करी, कालमाया इतहीं परहरी ॥ १०

ऐसा जानकर आप पुनः प्रकट होकर मेरे हृदयमें विराजमान हुए, जैसे हम पहले व्रजमें श्रीकृष्णजीके साथ नित्य प्रति प्रेममयी लीलाएँ करते थे. उस प्रकारकी प्रेममयी लीलाओंसे हमारी सभी मनोकामनाएँ पूर्ण हुईं. परब्रह्म श्रीकृष्णने ग्यारह वर्ष तक व्रजमें लीला की और कालमायाके ब्रह्माण्ड (व्रज) का वहीं परित्याग किया.

जोगमाया कर रास जो खेले, कै सुख साथ लिए पीउ भेले ।
करी अंतराए देनेको याद, हम दुख मांग्या पीउपें आद ॥ ११

फिर योगमायाका ब्रह्माण्ड बनाकर उसमें रास लीला की. इस लीलामें ब्रह्मात्माओंने श्रीकृष्णके साथ कई सुख प्राप्त किए. परमधामके वचनोंकी स्मृति दिलानेके लिए श्रीकृष्णजी रासलीलाके बीच अन्तर्धान हो गए क्योंकि परमधाममें हमने धामधनीसे दुःख ही माँगा था.

सोई देखके आए ज्यों, फेर अब प्रगट हुए हैं त्यों ।
धनी जब करे अपन्यात, मन चाह्या सुख देवें साख्यात ॥ १२

अन्तर्धानके समय हमारा विरह देखकर जिस प्रकार श्रीकृष्ण पुनः प्रकट हुए थे, उसी प्रकार अब भी सद्गुरु अदृश्य होकर पुनः मेरे हृदयमें प्रकट हुए हैं. धामधनी जब भी अपनापन दिखाते हैं तब साक्षात् प्रकट होकर सबको मनोवाञ्छित सुख प्रदान करते हैं.

तिन समें धाख रहीती जोए, अब इत सुख देत हैं सोए ।
अब सुनो पीउ कहूं गुन अपने, अवगुन मेरे हैं अति घनें ॥ १३

उस समय (व्रज और रास लीलाके बाद) दुःख देखनेकी जो अभिलाषा शेष रह गई थी, इस बार यहाँ आकर उसे पूर्ण करते हुए (हमें यहीं बैठाकर परमधामके) सुख दे रहे हैं. हे धनी ! अब आप सुनें, अब मैं आपके गुणोंकी चर्चा करती हूँ, मुझमें तो अधिक अवगुण हैं.

तुमारे मनमें न आवे लवलेस, पर मैं जानों मेरे मनके रेस ।
वार डारों तुम पर मेरी देह, तुम किए मोसों अधिक सनेह ॥ १४

आपके मनमें तो मेरे अवगुणोंका लेशमात्र भी प्रभाव नहीं है, किन्तु मेरे मनके सूक्ष्म तन्तुओंको मैं जानती हूँ. आपने मुझे इतना अधिक स्नेह दिया है कि इसके लिए मैं स्वयंको आपके चरणोंमें पूर्ण रूपसे समर्पित करती हूँ.

घोली घोली जाऊं मैं तुम पर, उरनी मैं होऊंगी क्योंकर ।
उरनी होना तो मैं कह्या, माया लेस हिरदेंमें रह्या ॥ १५

वारंवार मैं आप पर समर्पित हो जाऊँ फिर भी मैं कैसे उऋण हो सकूँगी ? उऋण होनेकी बात भी मनमें इसलिए आई कि अब भी मेरे हृदयमें मायाका कुछ अंश शेष रह गया है.

अनेक बार मैं लेऊं वारने, तुम अपनी जान गुन किए घनें ।
मैं वार डारूं आतम अपनी, पर सालत सोई जो करी दुसमनी ॥ १६

अनेक बार मैं आपके चरणोमें समर्पित होती हूँ. आपने मुझे अपनी अङ्गना समझकर कई बार कृपा की है. मैं अपनी आत्माको आप पर न्योछावर कर

देती किन्तु आपसे की हुई शत्रुता मुझे बार बार खटक रही है.

क्यों छूटूंगी ए गुन्हे हो नाथ, सांची कहूं मेरे धामके साथ ।
तुम साथ मिने मोहे देत बडाई, पर मैं क्यों छूटूंगी बज्रलेपाई ॥ १७

हे सद्गुरु ! इस अपराधसे मुझे कैसे मुक्ति मिलेगी ? हे मेरे धामके सुन्दरसाथ ! मैं यह सच्ची बात कह रही हूँ. हे सद्गुरु ! आप सुन्दरसाथमें मुझे (इन्द्रावतीसे जागनी होगी ऐसी) शोभा देते हैं किन्तु मैं अपने वज्रलेपी (अमिट) दोषोंसे कैसे छूट पाऊँगी ?

तुम गुन किए मोसों अति घन, पर अलेखे मेरे अवगुन ।
तुम गुन किए मोसों पहेचान कर, मैं अवगुन किये माया चित धर ॥ १८

हे सद्गुरु धनी ! आपने मुझ पर अनेक उपकार किए हैं, परन्तु मेरे अवगुण असंख्य हैं. अपने मूल सम्बन्धको पहचानकर आपने मुझ पर अनेक उपकार किए किन्तु मैंने मायामें लीन रहते हुए आपके गुणोंको हृदयमें धारण नहीं किया.

अब बल बल जाऊं मेरे धनी, मेरे मनमें हाम हैं घनी ।
असत मंडलमें हासल अति बडी, मैं पीउजीकी उमेद ले खडी ॥ १९

हे सद्गुरु ! मैं आप पर समर्पित होती हूँ, मेरे मनमें यह तीव्र इच्छा है. इस असत्य जगतमें बहुत कुछ पाया जा सकता है, मैं आपकी कृपाकी आशा मनमें लिए खड़ी हूँ.

जो मनोरथ किए मांहें श्रीधाम, सो पूरन इत होए मन काम ।
जो विध सारी कही है तुम, सो सब द्रढ करी चाहिए हम ॥ २०

परमधाममें हमने जो मनोरथ (माया देखनेकी इच्छा) किए थे वे सब यहाँ (इस जगतमें) पूर्ण हुए. आपने जिस प्रकार परमधामकी बातें कीं हैं, हमें उन सबको दृढ़ता पूर्वक ग्रहण करना चाहिए.

सुख धामके जो पाइए इत, सो कहूं मेरी आतम न देखे कित ।
इन अंगकी जुबां किन विध कहे, जो सुख कहूं सो उरे रहे ॥ २१

परमधामके जो सुख आपके द्वारा हमें यहाँ प्राप्त हैं, मेरी आत्माने उन्हें और

कहीं नहीं देखा. इस नश्वर जिह्वासे उन सुखोंका वर्णन कैसे होगा ? इस जिह्वासे जिन सुखोंका वर्णन होता है, वे तो (अपूर्ण होनेके कारण) इधर (मायामें) ही रह जाते हैं.

ए सोभा सबदातीत है घनी, और सबद मांहें जुबां आपनी ।
ए सुख विलसों होए निरदोस, होए फेरा सुफल दया तुम जोस ॥ २२

आपकी शोभा तो शब्दातीत है और हमारी जिह्वा शब्दमें ही बँधी हुई है. मैं निर्दोष होकर आप द्वारा वर्णित परमधामके सुखोंमें विलास करूँ. आपकी दया और जोशके कारण संसारमें मेरा आना सफल हो जाएगा.

इतने मनोरथ होए पूरन, तब जानों दया हुई अति घन ।
फेर फेर दयाको तो कह्या घना, जो कर ना सकी कछू बस आप अपना ॥ २३

यदि मेरे ये मनोरथ पूर्ण हो जाएँ तो मैं जानूँगी कि मुझ पर आपकी पूर्ण कृपा हुई है. आपकी दयाकी बात इसलिए वारंवार करती हूँ, क्योंकि मैं स्वयं अपने आपको वशमें नहीं कर सकी.

अब मनसा बाचा करमना कर, क्योंए ना छोडूं अखंड घर ।
नैंनों निरखूं करी निरमल चित, रुदे राखूं पीउ प्रेमें हित ॥ २४

अब मन, वचन और कर्मसे मैं अपना अखण्ड घर-परमधाम कदापि नहीं छोडूँगी. मैं चित्तको निर्मल बनाकर अपने नेत्रोंसे प्रियतम धनीको देखती रहूँ और प्रेमपूर्वक अपने हृदयमें उन्हें विराजित करूँ, यही अभिलाषा मनमें है.

कर परनाम लागूं चरने, करूं सेवा प्यार अति घनें ।
करूं दंडवत जीवके मन, देऊं प्रदछिना रात ने दिन ॥ २५

हे सद्गुरु ! मेरी इच्छा है कि मैं आपके श्रीचरणोंमें प्रणाम कर प्रेम पूर्वक आपकी सेवामें मग्न रहूँ. अपने अन्तर्मनसे रात-दिन आपकी दण्डवत परिक्रमा करती रहूँ.

कृपा करत हो साथ पर बडी, भी अधिक कीजो घडी घडी ।
इन्द्रावती पांउ परत आधार, धनी धामके लै मेरी सार ॥ २६

हे धनी ! आप अपने सुन्दरसाथ पर सदैव कृपा करते हैं, इसी प्रकार वारंवार

और भी कृपा करते रहें. इन्द्रावती अपने धनीके चरणोंमें प्रणाम करती है कि धामके धनीने यहाँ आकर मेरी सुधि ली है.

प्रकरण १० चौपाई २४९

आपनमें बैठे आधार, खेल देखाया खोलके द्वार ।
अब माया कोटान कोट करे प्रकार, तो इत साथको न छोडूं निरधार ॥ १

हे सुन्दरसाथजी ! धामधनी हमारे अन्दर आकर विराजे हैं, उन्होंने परमधामके द्वार खोलकर हमें अखण्ड लीला दिखाई है. अब माया चाहे करोड़ों यत्न करे तो भी मैं निश्चय ही अपने सुन्दरसाथको यहाँ नहीं छोडूँगी.

बुलाए सैयोंको चले वतन, क्यों न होए जो कहे बचन ।
मनके मनोरथ पूरन कर, नेहेचे धनी ले चलसी घर ॥ २

वे सब सुन्दरसाथको बुलाकर परमधाम चले. उन्होंने जो वचन कहे थे, वे अवश्य पूरे होंगे. हमारे सभी मनोरथ पूर्ण करके, निश्चय ही धामधनी हमें अपने घर परमधाम ले चलेंगे.

अब जो आपन होइए सनमुख, तो धनी बोहोत विध पावें सुख ।
कै विध दया साथ पर कर, सब विधके सुख देवें फेर ॥ ३

अब यदि हम धनीके अनुकूल होकर चलेंगे तो उन्हें अनेक प्रकारसे सुख प्राप्त होगा. अपने सुन्दरसाथ पर अनेक प्रकारसे अनुग्रह कर वे पुनः विभिन्न प्रकारके सुख प्रदान करेंगे.

फेर कर भलो आयो अवसर, खुले भाग धनी चितमें धर ।
आपन छोडने न करें संसार, पर धनी धाम बिछोहा न सहें लगार ॥ ४

अब पुनः शुभ अवसर प्राप्त हुआ है. यह हमारा सौभाग्य है कि सद्गुरुने हमें अपने हृदयमें रखा. हम तो इस संसारको छोड़नेका प्रयास ही नहीं करते, किन्तु धामधनी हमारा वियोग जरा-सा भी सहन नहीं कर सकते.

बिछोहा नहीं कछू पख तारतम, सुपनेमें माया देखें हम ।
सुपन बिछोहा धनी ना सहे, तारतम बचन प्रगट कहे ॥ ५

यदि तारतमकी दृष्टिसे देखें तो धामधनीसे कभी हमारा वियोग हुआ ही नहीं

है. हम तो परमधाममें बैठे हुए स्वप्नकी भाँति इस मायाको देख रहे हैं. तारतमके वचन स्पष्ट कह रहे हैं कि स्वप्नके वियोगको भी धामधनी सहन नहीं करते.

ल्याए बचन तारतम सार, खोले पारके पार द्वार ।
जानो जिन आसंका रहे, साथ ऊपर धनी एता ना सहे ॥ ६

सद्गुरु धनी अपने साथ तारतम ज्ञानके सार पूर्ण वचन लेकर आए हैं, जिनके द्वारा उन्होंने परमधामके द्वार खोल दिए. वे चाहते हैं कि सुन्दरसाथके मनमें किसी भी प्रकारकी आशंका न रहे. धनी सुन्दरसाथके लिए इतनी भी विमुखता सहन नहीं करते.

धनीके गुन मैं केते कहूं, मैं अबूझ कछू बोहोत ना लहूं ।
धनीके गुनको नाहीं पार, कर ना सके कोई निरवार ॥ ७

सद्गुरु धनीके गुणोंका कितना वर्णन करूँ, मैं तो अबोध हूँ इसलिए कुछ अधिक ग्रहण न कर सकी. किन्तु धनीके गुणोंका तो कोई पारावार ही नहीं है. उनकी गणना तो कोई कर ही नहीं सकता.

मैं केते नजरों देखे सही, पर गुन मुखसे न सके कही ।
ना कछू किनका भोम गिनाए, सागर लेहेर गिनी न जाए ॥ ८

मैंने सद्गुरु धनीके कितने ही गुण स्वयं अपनी आँखोंसे देखे हैं किन्तु उन गुणोंको जिह्वासे नहीं बता सकती. पृथ्वीके कणों और सागरकी लहरोंकी भाँति मेरे धनीके गुण गिने नहीं जा सकते.

मेघ की बूंदे जेती परे, ना कोई बनपत्र निरमान करे ।
जदिप याको निरमान होए, पर गुन धनीके ना गिने कोए ॥ ९

बादलोंसे जितनी भी बूँदे गिरतीं हैं उनका तथा वनस्पति (पेड़ पौधों) का निरूपण नहीं किया जा सकता. यह सम्भव है कि इनका भी अनुमान लगाया जा सके किन्तु धामधनीके गुण तो कोई भी गिन नहीं सकता.

इन बेरके भी कहे न जांए, तो और बेरके क्यों कहूं जुबांए ।
पेहेले फेरेकी क्यों कहूं बात, गुन जो किए धनी साख्यात ॥ १०

इस जागनी ब्रह्माण्डमें किए गए उनके गुणोंकी भी गिनती नहीं हो सकती

तो इसके पहलेके दोनों (व्रज, रास) ब्रह्माण्डोंके गुण इस जिह्वासे कैसे कहे जा सकते ? प्रथम अवतरण व्रज और रासकी लीलाकी बात अब किस प्रकार कहूँ ? धामधनी श्रीकृष्णजीने हमारे प्रति कितना उपकार किया.

क्यों धनी गुन गिनूं इन आकार, पर कछुक तो गिनना निरधार ।
इन्द्रावती कहे मैं गुन गिनों, कछुक प्रकासूं आपोपनों ॥ ११

इस नश्वर शरीरसे सद्गुरुके गुणोंको कैसे गिनूँ ? किन्तु कुछ तो निश्चय ही गिनने हैं. इन्द्रावती कहती है कि मैं धनीजीके गुण गिन कर उनके प्रति अपना अपनत्व प्रकट कर दूँ.

प्रकरण ११ चौपाई २६०

श्री धनीजीके गुन

मैं लिखूं श्रीधनीजीके गुन, जो किए मोसों अति घन ।
जोजन पचास कोट जिमी केहेलाए, आडी टेडी खडी सब मांहे ॥ १

मैं अपने धनीके गुणों (अनुग्रहों) का उल्लेख करती हूँ, जो उन्होंने मुझ पर किए हैं. इस धरतीका क्षेत्रफल पचास करोड़ योजन कहा गया है, उसमेंसे कितनी ही जमीन आड़ीटेड़ी (ऊँचीनीची) और सीधी है.

चौदलोक बैकुंठ सुंन जोए, जिमी बराबर करूं सोए ।
मैं प्रगट बिछाए करूं एक ठौर, टेढी टाल करूं सीधी दोर ॥ २

चौदह लोक, वैकुण्ठ और शून्य तक समस्तको समतल कर दूँ और उसकी विषमता (टेढ़ामेढ़ापन) दूरकर सबको एक समान बना दूँ.

कागद धरयो मैं याको नाम, गुन लिखने मेरे धनी श्री धाम ।
चौद भवनकी लेऊं बनराए, तिनकी कलमें मेरे हाथ गढाए ॥ ३

मैंने इसका नाम कागज रखा, क्योंकि इस पर मुझे सद्गुरु धनीके गुण लिखने हैं. चौदह लोकोंकी वनस्पति एकत्र कर उन सबको अपने हाथसे घड़कर कलम बना लूँ.

गढते सरफा करूं अति घन, जानो बडी छोही उतरे जिन ।
ए सरफा मैं फेर फेर करूं, अखंड धनी गुन हिरदें धरूं ॥ ४

घड़ते हुए मैं बहुत लोभ कर रही हूँ कि कहीं इसका छिलका अधिक न उतर जाए. इस प्रकार बार-बार ऐसी कञ्जूसी करते हुए मैं अपने धनीके गुण हृदयमें धारण कर रही हूँ.

बारीक टांक मेरे हाथों होए, ऐसी करूं जैसी करे न कोए ।
कोई तो केहेती हूं जो माया लागी तुम, बोहोतक कह्या जो पेहेले हम ॥ ५

मेरे हाथोंसे लेखनी (कलम) की नोंक इतनी तीक्ष्ण बने कि अन्य कोई इतनी सूक्ष्म बना न सके. 'कोई और' इसलिए कहना पड़ता है कि अब तक तुम लोग मायाके प्रभावमें हो. मैंने यह बात पहले भी अनेक बार कही है.

तुमको माया लागी होए सत, तुम बिना और सबे असत ।
इन जिमी पर के लेऊं सब जल, और लेऊं सात पातालके तल ॥ ६

हे सुन्दरसाथजी ! तुम सबको यह माया सत्य लग रही है किन्तु तुम्हारे बिना सब कुछ असत्य है. धनीजीके गुण लिखनेके लिए इस धरतीका सम्पूर्ण जल एकत्र कर लूँ और सातों पातालके जलको भी उसमें सम्मिलित करूँ.

जल छे लोकके लेऊं लिखनहारी, एक बूंद ना छोडूं कहूं न्यारी ।
सब जल मिलाए लेऊं मेरे हाथ, गुन लिखने मेरे श्री प्राणनाथ ॥ ७

इस पृथ्वीके ऊपरके छः लोकोंके जलको भी लेकर मैं लिखने बैठूँ. इस प्रकार एक बूँद भी कहीं अलग न छोडूँ. सम्पूर्ण जलको एकत्र कर अपने पास रख लूँ, क्योंकि मुझे अपने प्राणनाथ सद्गुरुके गुण लिखने हैं.

वाकी स्याही करूं मैं अति विगत, एक जरा न जाए समारूं इन जुगत ।
ए कागद कलम मस कर, मांहें बारीक आंक लिखूं चित धर ॥ ८

इस सम्पूर्ण जलको ढंगसे स्याही बना लूँ और इसका उपयोग युक्ति पूर्वक करूँ ताकि एक बूँद भी व्यर्थ न जाए. इस प्रकार ये सब कागद, कलम और स्याही लेकर सूक्ष्मसे सूक्ष्म अङ्कोंमें धनीजीके गुण ध्यानपूर्वक लिखूँ.

गुन जो किए पीउ तुम इत आए, सो इन जुबां मैं कहे न जाए ।
देह माफक मैं लिखूं परमान, एक पाओ लवेका काढूं निरमान ॥ ९

हे सद्‌गुरु धनी ! आपने यहाँ आकर हम पर जो उपकार किए हैं, उनको मैं इस जिह्वासे कह नहीं सकती. इस नश्वर देहकी सामर्थ्यके अनुसार मैं उन गुणोंको लिख रही हूँ, क्योंकि आपके गुणोंके थोड़े-से अंशके चौथाई भागका भी निरूपण करना है.

अब लिखती हूं साथ देखियो उजास, मैं गजे माफक करूं प्रकास ।
मैं बोहोत सकोडूं आंक लिखते ए, जिन जानों मीडे होंए बडे ॥ १०

हे सुन्दरसाथजी ! अब तुम धनीके गुणोंका प्रकाश देख लो. मैं अपनी बुद्धि (सामर्थ्य) के अनुसार धनीके गुण लिख रही हूँ. लिखते हुए अंकोंको सिकोड़कर रख रही हूँ, ताकि बिन्दु (शून्य) बड़े न हो जाएँ.

प्रथम एकडा करूं एक चित, लगता मीडा धरूं भिलत ।
मेरे हाथ अक्षर कुसादे ना होए, मैं डरूं जानों मिले ना दोए ॥ ११

सर्वप्रथम एकचित्त होकर मैं एकका अंक लिखती हूँ और उसके साथ लगता हुआ एक शून्य जोड़ दूँ. मुझे डर है कि मेरे हाथसे लिखे गए अंक बहुत फैल भी न जाएँ और दोनों मिल भी न जाएँ.

यों करते ए दस जो भए, मीडा धरके एक सौ कहे ।
भी एक धरके गिनूं हजार, धनी गुन दयाको नाहीं पार ॥ १२

इस प्रकार गुणोंकी संख्या दस हो गई. एक और शून्य जोड़ने पर गुण सौ हो गए. फिर एक और शून्य लगाकर मैं एक हजार गुण गिन लूँ, तो भी सद्‌गुरुके गुण तथा दयाका पार नहीं पाया जा सकता.

भी लगता मीडा धरूं एक, जीवसे गिनूं दस हजार बिसेक ।
भी एक धरके लाख गिनाए, भी धरूं ज्यों दस लाख हो जाए ॥ १३

उनमें एक और शून्य लगा दूँ और हृदयसे दस हजार विशेष गुणोंकी गिनती कर लूँ. एक शून्य और रखने पर लाखकी संख्या हो जाएगी. एक और शून्य रख दूँ तो दस लाखकी संख्या होगी.

कोट होवे मीडा धरते सातमां, दस कोट करूं मीडा धरके आठमां ।
नवमां धरके करूं अबज, गुन गिनती जाऊं करती कबज ॥ १४

अब सातवाँ बिन्दु (शून्य) जोड़ने पर गुण करोड़ हो जाते हैं और आठवाँ शून्य लगाते ही गुणोंकी संख्या दस करोड़ हो जाती है. नवमाँ शून्य जोड़कर एक अरब बना लूँ. इस प्रकार धनीके गुणोंको गिनते गिनते अपनी अन्तरात्मामें समाती जाऊँ.

दस धरके करूं अबज दस, गुन गिनते आवे मोंहें अति घनों रस ।
अग्यारे धरके करूं खरब एक, लिखते गुन धनी ग्रहूं बिसेक ॥ १५

दसवाँ शून्य रखकर दस अरब गुण गिन लूँ. इन गुणोंको गिनते हुए मुझे अत्यधिक रस मिल रहा है. ग्यारहवाँ शून्य रखकर मैं गुणोंको एक खरब कर लूँ. इस प्रकार सद्गुरुके गुणोंको लिखते हुए मैं उन्हें विशेष रूपसे ग्रहण करती हूँ.

बारे धरके दस करूं खरब, पेहेले यों गिनके किन कहे न कब ।
तारतम कहे और कौन गिने गुन, हुआ न कोई होसी हम बिन ॥ १६

फिर बारहवाँ शून्य और जोड़ने पर दस खरब गुण हो जाएँगे. इस प्रकार पहले कभी भी किसीने धामधनीके गुणोंका ऐसा वर्णन नहीं किया. मैं तारतमज्ञानके द्वारा कहती हूँ कि इस प्रकार धनीके गुणोंको और कौन गिन सकेगा ? ऐसा कोई व्यक्ति न हमसे पहले हुआ और न ही बादमें होगा.

मैं गुन गिनूं श्रीधाम धनीके रे, पर कमी कागद कलम मस मेरे ।
कमी तो केहेती हूं जो बैठी माया मांहें, ना तो कमी नहीं कछुए क्यांहें ॥ १७

धामधनीके गुणोंकी गिनती कर तो लूँ परन्तु मेरे पास कागज कलम और स्याहीकी कमी हो गई है. कमी इसलिए कहना पड़ रहा है कि मैं मायामें बैठी हूँ अन्यथा परमधाममें तो कोई कमी ही नहीं है.

साथ कारन मैं करूं पुकार, देखों वासना मोहजल वार पार ।
तेरे धरके गिनूं गुन नील, घनें समावें गुन हिरदें असील ॥ १८

सुन्दरसाथके लिए मैं पुकार कर रही हूँ क्योंकि वे सब इस मोहजलके

अन्तर्गत हैं. अब तेरहवाँ शून्य रखकर एक नील गुणोंको गिन लूँ. अभी भी मेरे हृदयमें उनके बहुत-से गुण समाए हुए हैं.

चौदे धरके करूं नील दस, गुन प्रकास लेऊं धनी जस ।
पंद्रे धरके करूं पदम, मेरे धनीके गुनकी मैं करूं गम ॥ १९

चौदहवाँ शून्य रखकर गुणोंकी संख्या दस नील गिन लूँ. ऐसे गुणोंको प्रकट कर मैं धनीजीसे यश प्राप्त कर लूँ. पन्द्रहवाँ शून्य रखकर मैं उनके गुणोंको एक पद्म तक गिन लूँ. इस प्रकार अपने धनीके गुणोंको मैं पहचान लूँ.

सोले धरके करूं पदम दस, गुन नजरों आवते हुए धनी बस ।
सत्रे धरके करूं गुन अंक, अठारे धरूं ज्यों होए गुन संक ॥ २०

सोलहवाँ शून्य जोड़कर मैं दश पद्म गुण गिन लूँ. सद्गुरुके गुण मेरी दृष्टिमें आते ही वे मेरे वशीभूत हो गए. सत्रहवाँ शून्य जोड़कर अंक और अठारहवाँ बिन्दु जोड़कर एक शंख गुण होते हैं.

सुरिता करूं धरके उनइस, पत गुन ग्रहूं धरके बीस ।
अंत करूं धरके इकैस, मध करूं गुन दोए धर बीस ॥ २१

उन्नीसवाँ शून्य रखकर मैं उनके गुणोंको सुरिताकी गणना तक गिन लूँ फिर बीसवाँ शून्य जोड़कर पति संख्या बना लूँ. इसी प्रकार एक्कीसवाँ शून्य रखने पर अन्त संख्याकी गणना हो गई, और बाईसवाँ शून्य लिखने पर उनके गुणोंकी संख्या मधकी हो जाती है.

एकडा ऊपर तेइस मीडे धरूं, परारध करके लेखा मेरा करूं ।
लौकिक लेखे गुन ना गिनाए, मेरे धनीके गुन यों गिने न जाए ॥ २२

इस प्रकार एकके आगे तेइसवाँ शून्य लगाकर धनीके गुणोंको परार्ध तक पहुँचाकर मैं अपनी गिनती पूर्ण कर लूँ. वस्तुतः लौकिक (सीमित) अंकोंसे सद्गुरु धनीके असीम गुण नहीं गिने जा सकते.

हिसाब करूं साथ देखियो बिचार, गुन जाहेर हुए प्रानके आधार ।
परारध गुने एक मीडेसों बडे, दूजेसों हर एक यों चढें ॥ २३

हे सुन्दरसाथजी ! जरा विचार कर देखो, इस प्रकार धनीजीके गुण संसारमें

प्रकट हुए हैं. इस परार्ध संख्यामें भी एक शून्य और लगा दूँ तो वे गुण और बढ़ जाते हैं. इस प्रकार एक-एक शून्य रखनेसे इसी प्रकार गुण बढ़ते चले जाते हैं.

यों करते ए होवे जेते, इन विध चढते जाए तेते ।
ए हिसाब मेरी आतम करे, गुन धनी हिरदें अंतर धरे ॥ २४

इस प्रकार जितने भी शून्य लगाते जाएँगे, धामधनीके गुण उतने ही बढ़ते चले जाएँगे. धनीजीके इन समस्त गुणोंकी गिनती करते हुए मेरी आत्मा उन्हें हृदयङ्गम करती है.

लिखते गुन धनी हिरदें आए, पर डरूं जानों कागदमें न समाए ।
कलमोंको मेरा जीव ललचाए, गढते गढते जानो जिन उतर जाए ॥ २५

इस प्रकार धनीजीके गुण लिखते-लिखते वे (गुण) मेरे हृदयमें अङ्कित हो गए, परन्तु मुझे डर है कि वे सभी गुण कागजमें नहीं समा सकते. कलमके प्रति भी मेरा मन इसलिए ललचाता है कि उसको गढ़ते हुए वह समाप्त ही न हो जाए.

सरफा करूं मैं लिखते स्याही, जिन लिखते अधबीच घट जाई ।
यों धरते धरते मीडे रहे भराए, वार किनार यों रहें समाए ॥ २६

और धनीजीके गुणोंको लिखते हुए मैं स्याहीका भी लोभ करती हूँ कि लिखते-लिखते वह कहीं बीचमें ही कम न हो जाए. इस प्रकार शून्य रखते रखते सारा कागज भर गया उसके कोने किनारे भी गुणोंसे भर गए.

ए कागद यों पूरन भया सही, स्याही कलमें कछू बाकी ना रही ।
अब ए गुन गिनूं मैं नीके कर, आतमके अंदर ले धर ॥ २७

इस प्रकार चौद लोकोंकी सम्पूर्ण धरतीका बना हुआ कागज समाप्त हो गया. लिखते-लिखते स्याही और कलम कुछ भी शेष न बचा. अब मैं सद्गुरुके इन गुणोंको अपनी आत्मामें धारणकर उन्हें भली प्रकार गिन लूँ.

ए तो गुन गिने मैं चित ल्याए, पर इन धनीके गुन यामें न समाए ।
भी करूं दूजे लिखनेका ठाम, गुन लिखने मेरे धनी श्री धाम ॥ २८

मैंने ये सब गुण ध्यानपूर्वक गिने हैं, किन्तु मेरे धनीके गुण ऐसे कागजमें

नहीं समा पाते. अब इन गुणोंको लिखनेके लिए किसी अन्य स्थानको ढूँढ लूँ क्योंकि मुझे मेरे धामधनीके और भी गुण लिखने हैं.

ए गुन मिल जमें भए जेते, या विध ऐसे कागद लिखे एते ।
ऐसे कागद ऐसी स्याही कलम, मांहे बारीक आंक लिखे हैं हम ॥ २९

ये सब गुण मिलकर जितने हो जाते हैं, उनसे ऐसे कई कागज भरे जा सकते हैं. ऐसी ही कलमों और स्याहीसे कागजों पर मैंने धनीजीके गुणोंकी संख्या सूक्ष्म अङ्कोंमें लिखी है.

इन कलमोंकी मैं देखी अनी, कछू कर ना सकी बारीक घनी ।
ए गुन गिन मैं एकठे किए, सो अपने हिरदेंमें लिए ॥ ३०

जैसे ही इन कलमोंकी नोंक देखी तो लगा कि इससे तीक्ष्ण नोंक तो मैं नहीं कर सकी फिर भी इन सब गुणोंको एकत्र कर मैंने गिना और उन्हें अपने हृदयमें धारण कर लिया.

कलमें समारी जोस बुध बल, घडूं रास कर काढके बल ।
एक जीव कहियत है कथुआ, ए जो जिमी पर पैदा हुआ ॥ ३१

कथुएके पांउका गुन जेता भाग, कलमोंकी टांक मैं देखी चीर लाग ।
इन अनियों आंक लिखे यों कर, ए जेता कागद एती बेर फेर फेर ॥ ३२

सद्गुरु धनी द्वारा प्रदत्त जोश, बुद्धि और बलसे मैंने कलमोंको संवारा. मैंने भरपूर बल और बुद्धि लगाकर उन्हें गढ़ा. इस जिमीं पर कथुआ नामका एक जीव होता है. धामधनीके जितने गुण गिने हैं, उस कथुएकी टाँगके उतने ही भाग कर लिए जाएँ तो एक भागमें कथुएकी टाँगका जितना हिस्सा आया, उतनी पतली कलमकी नोंक बना ली. इतनी सूक्ष्म नोंकसे मैंने अंक लिखे. जितना भी कागज था उस पर बार-बार उन गुणोंको लिखा.

यों लिख लिखके मैं गिने गुन, पर मेरे धनीके गुन है अति घन ।
ए गुन मिलाएके एकठे किए, सो नीके कर मैं चितमें लिए ॥ ३३

इस प्रकार लिख-लिखकर मैंने धनीके गुणोंको गिना, किन्तु मेरे धनीके गुण तो इतने अधिक (संख्यातीत) हैं. इन सब गुणोंको मिलाकर एकत्र किया

और उन्हें भली प्रकार अपने हृदयमें समा लिया.

ए लिखते मोहे केती बेर भई, तिनका निरमान काढना सही ।
जेते मिलके भए ए गुन, तेते बांटे किए एक छिन ॥ ३४

इन गुणोंको लिखते हुए मुझे जितना समय लगा, उसका भी निरूपण करना है. ऊपर जितने गुण गिनाए गए हैं, उतने ही भाग एक क्षणके कर उसके एक भागमें ही मैंने ये सारे गुण लिखे हैं.

बेर भई एक बांटे जेती, ए सब कागद लिखे मांहें बेर एती ।
ए लिख लिखके मैं लिखे अपार, अब ए बेर निरने करूं निरधार ॥ ३५

उस एक क्षणके परार्ध भागमें ही धनीजीके गुण कागज पर लिख लिए. लिख-लिखकर मैंने उनके अपार गुण लिखे हैं. मुझे निश्चित ही उस समयका सांसारिक दृष्टिसे निरूपण कर लेना है.

गुन जेते महाप्रले भए, वाही जोसमें लिख गुन कहे ।
बीचमें स्वांस न खाया एक, ढील ना करी कछू लिखते बिसेक ॥ ३६

सद्गुरु धनीके जितने गुण गिने गए हैं उतनी बार महाप्रलय हो भी जाए, तो भी मैंने उसी जोशमें धनीके गुण लिखे हैं. बीचमें एक सांस लेने जितना विलम्ब भी नहीं किया अर्थात् लिखते-लिखते विशेष देर नहीं की.

एह जमें मैं गुनकी कही, श्री सुन्दरबाईएं सिखापन दई ।
साथ जाने लेखा जोर किया अपार, परम मेरे जीवके दरदकी न दबी किनार ॥ ३७

सद्गुरु स्वरूपा सुन्दरबाईके उपदेशके कारण ही मैंने उन गुणोंको एकत्र किया. सुन्दरसाथको लगेगा कि मैंने अनन्त गुण लिख दिए हैं, किन्तु इससे मेरे हृदयकी पीडा (दर्द) का एक कोना भी नहीं भरा (गुण लिखनेकी थोड़ी-सी चाहना भी पूर्ण नहीं हो पाई).

जीव मेरा बडा वतनी पात्र, अजूं जीव जानें ए लिख्या तुछ मात्र ।
गुन तो बाकी भरे भंडार, सोई भंडार गुन गिनूं आधार ॥ ३८

मेरा जीव तो पूर्ण रूपसे परमधामका ही पात्र है, वह तो और भी बहुत कुछ जानता है. यहाँ तो केवल थोड़ा-सा ही लिखा है. अभी तो गुणोंके भण्डार

भरे हुए हैं. धामधनीके गुणोंके भण्डारकी भी गिनती करनी है.

ए गुन गिने मैं हिरदें बिचार, गुन जेते भंडार गिने निरधार ।
गिनते गिनते बाकी देखे अपार, तिनका भी करना निरवार ॥ ३९

ये गुण मैंने हृदयमें विचार कर गिने हैं. जितने गुण मैंने गिने हैं निश्चित ही उतने ही और भण्डार भरे पड़े हैं. गिनते हुए बाकी गुणोंके अपार भण्डार दिखाई दिए, उन सबका भी विवरण लिखना है.

मैं ना करूं तो दूजा करे कौन, कर निरवार ग्रहूं धनी गुन ।
बाकी भंडारका लेखा देऊं मेरे पीउ, ए मुस्किल नहीं कछू मेरे जीउ ॥ ४०

यदि मैं उन गुणोंका निरूपण न करूँ तो दूसरा कौन करेगा ? धामधनीके गुणोंका निरूपण कर अपनी आत्मामें ग्रहण कर लूँ. शेष गुणोंका विवरण अपने धनीको देनेमें मेरी आत्माके लिए कोई कठिनाई नहीं होगी.

ए गुन गिन किए जीवें अपने हाथ, पल पल पसरे गुन प्राणनाथ ।
ए सब तो कहूं जो गुन ठाढे रहे, ए गुन मनकी न्यात दौडे जाए ॥ ४१

इन सब गुणोंकी गिनती कर जीवने ग्रहण किया. प्राणनाथ सद्गुरु धनीके गुण तो पल-पल बढ़ते ही जाते हैं. इस गणनाको तो मैं तब पूरा करूँ जब ये गुण बढ़नेसे तनिक रुक जाएँ. मनकी भाँति ये गुण भी बढ़ते चले जा रहे हैं.

अब एता तो मैं किया निरमान, और बाकी कहूंगी मांहें फुरमान ।
एक छिनके मैं बांटे किए, गुन जेते भाग बिचारके लिए ॥ ४२

अब मैंने इतना तो निरूपण किया है. अन्य गुणोंके विषयमें भी और कहूँगी. मैंने एक क्षणके समयको भी उतने ही भागोंमें बाँट दिया जितने सद्गुरुके गुण गिनाए हैं.

तामें बेर एक बांटेकी कही, पिया गुन एतेमें तेते किए सही ।
ए गुन गिनते मेरे कारज सरया, आतम मूल सरूप हिरदें में धरया ॥ ४३

उन बाँटे हुए क्षणोंमें भी जो क्षण शेष रह गया उतने समयमें मैंने धनीके

गुण गिने हैं. इन गुणोंको गिनते हुए मेरा कार्य सफल हो गया और आत्माने सद्‌गुरुका मूल स्वरूप हृदयमें धारण कर लिया.

सारे जनमके क्यों कहूं गुन, पिया देह धर आए किए धंन धंन ।
गुन पांच जनमके क्यों कहूं सोए, धनी दया आई धनीकी खुसबोए ॥ ४४

सद्‌गुरुके पूरे जीवनके गुणोंको मैं कैसे गिनूँ ? उन्होंने शरीर धारण कर मुझे धन्य बनाया. इस मायावी जगतमें वे पाँच बार (व्रजके स्वरूप, रासके स्वरूप, हुकमके स्वरूप, सद्‌गुरु स्वरूप एवं महामति स्वरूपमें) आए हैं. उनके पाँच बारके प्राकट्यके गुणोंका मैं कैसे वर्णन करूँ, जब कि इस बारके ही गुणोंकी गणना नहीं हो सकी. अब यह तो सद्‌गुरु धनीने मुझ पर अपार कृपा की, जिससे उनके अन्य अवतरणोंकी सुवास मुझे मिल गई.

ए गुन गिने मैं अस्थिर आकार, ना तो यों क्यों गिनूं मेरे प्रानके आधार ।
अब बात करसी तुम अग्या केरी, मुझे आसा इत जाग उडाऊं अंधेरी ॥ ४५

धनीकी कृपासे ही इस नाशवान शरीर द्वारा मैंने उनके गुण गिने हैं अन्यथा मैं अपने प्राणाधार धनीके गुण कैसे गिन सकती ? अब मैं आपकी आज्ञाकी ही बात करती हूँ. मुझे आशा है कि यहाँ पर मैं स्वयं जागृत हो कर जगतके अज्ञानान्धकारको मिटा दूँ.

पीउ तुम आए माया देह धर, साथकी मत फिर गई क्यों कर ।
हांसी करसी पीउ साथ पर, क्या करसी माया जब मांगी घर ॥ ४६

हे धनी ! आप तो मायामें शरीर धारण करके आए हैं, परन्तु सुन्दरसाथकी बुद्धि क्यों भ्रमित हो गई ? जागृत होने पर हम ब्रह्मात्माओं पर परब्रह्म परमात्मा अवश्य हँसेंगे. हम अब कर भी क्या सकतीं हैं जब स्वयं ही हमने परमधाममें इसी मायाको देखनेकी माँग की थी.

तुम लई खबर हमारी ततछिन, ले आए तारतम देखाया वतन ।
पिया हांसी करसी अति जोर, भुलाए मायाए कर बैठाए चोर ॥ ४७

हे सद्‌गुरु धनी ! आपने तो उसी समय हमारी सुधि ली. हमारे लिए आप तारतम ज्ञान ले आए और हमें परमधाम दिखा दिया. धामधनी हम पर बहुत

हँसेंगे क्योंकि मायाने हमें भुलाकर अपने ही घरमें चोर बना दिया.

अब करेंगे जाए वतन बात, माया अमल चढ्यो निघात ।
पीउ कै विध तारतम कियो रोसन, तो भी क्योंए न भैयां चेतन ॥ ४८

अब अपने घर – परमधाममें पहुँचकर ही ये सारी बातें होंगी. यहाँ तो हम पर मायाका घोर नशा चढ़ा हुआ है. सद्गुरु धनीने अनेक प्रकारसे तारतमका प्रकाश दिखाया, तो भी हम किसी प्रकार सचेत नहीं हुए.

लेवे इन्द्रावती वारने गुन जेते, इत सुख दिए हमको एते ।
घरके सुखकी इत कैसी बात, घरके सुख घरों होसी विख्यात ॥ ४९

सद्गुरु धनीके जितने गुण हैं, उन पर इन्द्रावती उतनी ही बार समर्पित हो जाती है क्योंकि सद्गुरुने इस जगतमें हमें इतने अधिक सुख दिए हैं. परमधामके सुखोंकी बात इस नश्वर जगतमें कैसे की जाए, उनका विवरण तो परमधाममें ही हो सकता है.

चरनों लाग कहे इन्द्रावती, गुन ना देखे किन एक रती ।
धनी जगाएके देखावसी गुन, तब हांसी होसी अति घंन ॥ ५०

सद्गुरु धनीके चरणोंमें इन्द्रावती निवेदन करती है कि धनीके अनन्त गुणोंमें–से रत्तीमात्र गुण ही हम देख पाए हैं. इस स्वप्नसे जगाकर जब धनी अपने गुणोंको दिखाएँगे तब हमारी अल्पज्ञता पर अत्यधिक हँसी होगी.

प्रकरण १२ चौपाई ३१०

साथको प्रबोध

सुनो साथ मेरे सिरदार, बचन कहूं सो ग्रहो निरधार ।
एते गुन आपनसों कर, बैठे आपनमें माया देह धर ॥ १

हे मेरे शिरोमणि सुन्दरसाथजी ! मैं तुमसे जो वचन कह रहा हूँ, उन्हें निश्चित रूपसे ग्रहण करो. सद्गुरु धनीने हम पर इतने उपकार किए हैं कि वे पुनः इस मायामें शरीर धारण कर हमारे बीच आ विराजे हैं.

भानो भरम बचन देख कर, छोडो नींद रोसनी हिरदें धर ।
श्रीधामके धनी केहेलाए, सो बैठे आपनमें इत आए ॥ २

सद्‌गुरुके इन वचनों पर विचार कर, मायाके भ्रमको मिटा दो. तारतमका प्रकाश हृदयमें लेकर निद्राका त्याग कर दो. वे स्वयं परमधामके धनी कहलाते हैं और यहाँ आकर हमारे बीच विराजमान हुए हैं.

सेवा कीजे पेहेचान चित धर, कारन अपने आए फेर ।
भी अवसर आयो है हाथ, चेतन कर दिए प्राणनाथ ॥ ३

उनको पहचान कर हृदयसे उनकी सेवा करो. वे हमारे लिए ही पुनः प्रकट हुए हैं. सेवाका अवसर पुनः लौट आया है. हमारे प्राणनाथ सद्‌गुरुने हमें सचेत कर दिया है.

इन ऊपर और कहा कहूं, मैं श्रीधनीजीके चरने रहूं ।
कर जोर करूं बिनती, दूर ना होऊं बेर पाओ पल जेती ॥ ४

इस विषयमें और अधिक क्या कहूँ ? मुझे तो धनीजीके चरणोंमें ही रहना है. मैं हाथ जोड़कर विनती करती हूँ कि एक पलके चौथा भागके लिए भी उनसे मैं अलग न होऊँ.

प्रकरण १३ चौपाई ३१४

जीवको प्रबोध

मेरे अंध अभागी जीव, तूं क्यों सूता इत ।
विध विध धनिएं जगाइयां, अजहूं ना घर सूझत ॥ १

हे मेरे अन्धे अभागी जीव ! तू यहाँ पर क्यों सोया हुआ है ? सद्‌गुरु धनीने विभिन्न प्रकारसे तुझे जगाया, अब भी तुझे अपना घर नहीं दिखाई देता ?

आगे भी तें कहा कियो, चल गए पीउ जब ।
अवगुन ना देखे अपने, पीउ मेहेर करी फेर अब ॥ २

पहले भी सद्‌गुरुके धामगमनके समय तूने क्या किया ? तूने अपने अवगुणोंकी ओर ध्यान नहीं दिया. धाम धनीने पुनः हम पर कृपा की है.

धाम धनी तुझ कारने, आए मायामें दोए बेर ।
मेहेर ना देखे पीउकी, ऐसो हिरदें निपट अंधेर ॥ ३

धामधनी तेरे लिए परमधामसे इस मायावी जगतमें दूसरी बार आए हैं. तेरा हृदय इतना निपट अन्धकारसे भरा हुआ है कि तू अपने धनीकी कृपाको भी नहीं देख सकता ?

आप पकड तूं अपना, बल कर आंखां खोल ।
दूध पानी दोऊं जाहेर, देख नीके तारतम बोल ॥ ४

तू कुछ अपने आपको सम्हाल. स्वयंको पहचान कर बल पूर्वक अपनी आँखें खोल. सद्‌गुरुके वचनोंने दूध और पानी (ब्रह्म और माया) को अलग-अलग करके दिखा दिया है. तारतमके वचनोंसे तू इसे भली प्रकार देख ले.

पेहेले तो आंखां फूटियां, अब तो कछुक संभाल ।
ए जासी अवसर हाथ से, पीछे होसी कौन हवाल ॥ ५

पहले तो तेरी (ज्ञानरूपी) आँखें फूटी हुई थीं. अब तो अपने आपको कुछ सम्हाल ले. यह अवसर भी हाथसे चला जाएगा तो फिर बादमें तेरा क्या हाल होगा ?

आगे उलटा हुआ अकरमी, अजहूं ना करे कछू सुध ।
जागत नहीं क्यों जोर कर, ले हिरदें मूल बुध ॥ ६

हे अकर्मी जीव ! तू पहले ही उलटी चाल चल रहा है. अब भी तू कुछ सचेत नहीं होता. तू अपनी मूल बुद्धिको हृदयमें धारण कर यत्न-पूर्वक क्यों नहीं जाग जाता ?

पुकार सुनी दोऊं पीउकी, वतन देखाया नजर ।
उठी ना अंग मरोरके, अब आई नजीक फजर ॥ ७

तूने दो दो बार (एक बार प्रत्यक्ष और दूसरी बार हृदयमें बैठे हुए) सद्‌गुरुकी पुकार सुनी है. सद्‌गुरुने परमधामको प्रत्यक्ष दिखा दिया है. अब भी तू

अंगडाई लेकर नहीं उठ रहा है ? अब तो उठ, प्रभातका समय निकट आ गया है.

तारतम देख बिचारके, पीउ ल्याए बेर दोए ।
एती आग सिरपर जली, तूं रह्या खांगडू होए ॥ ८

तारतमज्ञानको विचार कर देख. तेरे लिए सद्‌गुरु दो बार (एक बार प्रत्यक्ष और दूसरी बार मेरे हृदयमें बैठकर) यह ज्ञान लेकर आए हैं. तेरे सिर पर इतनी आग जली, फिर भी तू कठोर (खांगडू) बना रहा, गला नहीं ?

प्रकरण १४ चौपाइ ३२२

मेरे जीव अभागी रे, जिन भूले तूं अब ।
इन मोहजलसे काढने वाला, ऐसा ना मिलसी कोई कब ॥ १

हे मेरे अभागे जीव ! अब तू भूल मत जा. इस मोहजलसे बाहर निकालने वाले ऐसे सद्‌गुरु तुझे कभी कोई नहीं मिलेंगे.

ए गुन तूं याद कर, जो किए अनेक सजन ।
तूं क्यों सूता जीव अभागी, देकर साहेबी मन ॥ २

सद्‌गुरुने जो उपकार (गुण) किए हैं उनको तू याद कर. हे मेरे अभागे जीव ! तू मनको महत्त्व देकर (उसकी अधीनतामें रहता हुआ) क्यों सो रहा है ?

पेहेले तें काढे बचन, सो क्या मनकी दोर ।
बुध मन तेरे बैठे रेहेसी, जीवको क्रोध काढसी जोर ॥ ३

तूने सद्‌गुरुकी स्तुतिमें पहले जो वचन कहे थे, क्या वे बाह्य मनसे ही कहे थे ? तेरी बुद्धि तथा मन ये सब यहीं पर रह जाएँगे. यह क्रोध तेरे प्राणोंको बल पूर्वक निकाल लेगा.

जीव तूं क्यों होत है निलज, तोहे अजूं ना लगे घाए ।
याद करके पीउको, क्यों ना उडे अरवाए ॥ ४

हे जीव ! तू इतना निर्लज्ज क्यों हो रहा है ? तुझे अब भी चोट नहीं लग रही है ? अपने सद्‌गुरुको याद कर तेरी आत्मा उड़ क्यों नहीं जाती ?

जो अब जीवरा भूलसी, तो देखी तेरी विध ।
काढूंगी तुझे जोरसे, करके बुरी सनंध ॥ ५

हे जीव ! तेरी विधि मैंने देख ली है. अब भी तू भूल जाएगा तो मैं तेरी दुर्दशा कर तुझे इस शरीरसे बल पूर्वक बाहर कर दूँगी.

पेहेले तो तें बुरी करी, अब जिन चूके अवसर ।
पीउ तोकों वतनमें, बुलावत हैं हंसकर ॥ ६

पहले तो तूने बहुत बुरा किया, अब इस अवसरको चूक मत जा. सद्गुरु तुझे हँसकर अपने घर-परमधाम बुला रहे हैं.

ससुई सो भी यों कहे, मैं हाथों अपना मार ।
पूनोंकी बधाईमें, देऊं कोट सिर उतार ॥ ७

सांसारिक प्रेममें लगी पुनुकी प्रेमिका ससी भी कहती थी कि यदि पुनुके आनेकी कोई मुझे बधाई दे, तो मैं अपने हाथोंसे अपने करोड़ों सिर उतार कर उस पर न्योछावर कर दूँ.

क्यों ना देखे ए बचन, भट परो मेरे जीउ ।
तूं लेत निमूना किनका, तूं कौन कौन तेरा पीउ ॥ ८

संसारके लोगोंकी ऐसी प्रेमकथा सुनकर भी तूने सद्गुरुके इन वचनों पर ध्यान नहीं दिया. हे मेरे जीव ! तुझे आग लगे. तू किसकी उपमा ले रहा है. (तुझे यह भी सोच नहीं कि) तू कौन है और तेरे धनी कौन हैं ?

दुनिया चौदे भवनमें, जो देखिए मूल अरथ ।
जो लेवें तेरा निमूना, ऐसा ना कोई समरथ ॥ ९

वास्तवमें मूल अर्थको देखा जाए तो चौदह लोकोंकी दुनियाँमें तेरी उपमा ले सके ऐसा समर्थ कोई नहीं है (सांसारिक जीव ब्रह्मात्माओंके लिए क्या उपमा बन सकते हैं).

तूं निमूना माया जीवका, क्यों कर लेवे इत ।
ए दाग तेरा क्यों छूट ही, ए तुझे लाग्या जित ॥ १०

मायाके जीवोंका उदाहरण तू क्यों ले रहा है ? इस संसारमें आकर अपने

प्रियतम धनीको भूल जानेका जो दाग तुझ पर लगा है वह तुझसे कैसे छूट पाएगा ?

अजूं सुध तोको ना होत, तेरी क्यों हुई ऐसी रसम ।
याद कर अपना वतन, जो तें सुनी बात खसम ॥ ११

हे जीव ! तुझे अब भी सुधी नहीं आ रही, तेरी ऐसी रीति क्यों बन गई है ? यदि तूने अपने धामधनीकी बातें सुनी हैं तो अपने घर परमधामको याद कर ?

तूं भूल जात क्यों बचन, जो श्रीधाम धनी कहे आप ।
एक आधा सुकन बिचारते, तो पलक ना छोडे मिलाप ॥ १२

धामधनी सद्गुरुके द्वारा स्वयं कहे हुए वचनोंको तू क्यों भूल जाता है ? उनके वचनोंमें-से एकाध वचन पर भी यदि तू विचार करता तो तू एक पलके लिए भी उनसे दूर नहीं हो सकता.

तोकों कहूं अभागी अकरमी, जो जागा ना एते सोर ।
सात बेर तोकों कहूं सोहागी, जो तूं उठे अंग मरोर ॥ १३

तुझे इसलिए अभागी और अकर्मी कहना पड़ता है कि तू इतना शोर होने पर भी जागृत नहीं हुआ. यदि तू अंगडाई लेकर खड़ा हो जाता तो मैं तुझे सात बार सौभाग्यशाली कहूँ.

प्रकरण १५ चौपाई ३३५

मेरे जीव सोहागी रे, जिन छोडे पीउ कदम ।
दूसरी बेर माया मिने, तुझ कारन आए खसम ॥ १

हे मेरे सौभाग्यशाली जीव ! अब तू प्रियतम धनीके चरणकमलको मत छोड़. धामधनी तेरे लिए ही इस मायावी संसारमें पुनः आए हैं.

गुन धनीके याद कर, पकड पीउके पाए ।
सुखें बैठ सुखपालमें, देसी वतन पोहोंचाए ॥ २

तू अपने धनीके गुणोंको याद कर और उनके चरण पकड़ ले. वे तुझे सुख

पूर्वक सुखपाल पर बैठाकर अपने घर परमधाम पहुँचा देंगे.

खेल हंस कर बातडी, पेहेचान अपना पीउ ।
दो बेर धनी तुझ कारने, आए जान अपना जीउ ॥ ३

तू अपने प्रियतमधनीको पहचानकर उनसे हँसकर बातें करते हुए आनन्द मग्न हो जा. प्रियतम धनी तुझे अपना जानकर तेरे लिए ही दो बार इस मायावी संसारमें आए हैं.

हैं कैसे धनी देख तूं, तोसों करी है ज्यों ।
आप ना रख्या आपना, सो याद ना कीजे क्यों ॥ ४

तू देख कि अपने धनी कैसे दयालु हैं और वे तेरे साथ कैसी दयालुताका व्यवहार कर रहे हैं. उन्होंने तेरे लिए अपने पास कुछ भी शेष नहीं रखा (सब कुछ तुझे दे दिया). ऐसे सद्गुरुको तू क्यों याद नहीं करता ?

कर हिंमत बांध कंमर, ले हुकम सब हाथ ।
पीउ पास हो पेहेचानके, और छोड सब साथ ॥ ५

तू (जगनेके लिए) साहस पूर्वक कमर कस कर सद्गुरुकी आज्ञा शिरोधार्य कर ले. प्रियतम धनीको पहचानकर उनकी शरण ग्रहण कर और सांसारिक मोह-मायाका परित्याग कर दे.

आप कहियो अपने साथको, जो तुझे खुले बचन ।
सुध तो नहीं कछू साथको, पर तो भी अपने सजन ॥ ६

यदि तुझे सद्गुरुके वचनोंका रहस्य समझमें आ जाए तो तू उसे अपने सुन्दरसाथको भी बता दे. सुन्दरसाथको इस समय कुछ भी सुधि नहीं है, फिर भी वे अपने स्वजन ही तो हैं.

प्रकरण १६ चौपाई ३४१

मेरे साथ सोहागी रे, पीउसों क्यों ना करो पेहेचान ।
पेहेलें चले पेहेचान बिना, फेर आए सो अपनी जान ॥ १

हे सुहागिनी आत्माओ ! तुम अपने प्रियतम धनीको क्यों नहीं पहचान लेती?

पहले भी वे पहचानके बिना ही चले गए थे. अब वे पुनः तुम्हें अपनी अङ्गना (आत्मा) समझकर इस संसारमें आए हैं.

सोई पीउ सोई बातडी, फेर सोई करे पुकार ।
कारन अपने पीउको, आंखों आवे जलधार ॥ २

वे ही सद्गुरु धनी अभी हैं, वही उनकी ज्ञानकी बातें हैं. हमें जागृत करनेके लिए वे वैसी ही पुकार कर रहे हैं, क्योंकि हमारे लिए ही उनके नेत्रोंसे अश्रुधारा बहने लगती है.

सोई नसीहत देत सजन, खैंचत तरफ वतन ।
पीउ पुकारें बेर दूसरी, अब क्यों होवें पीछे आपन ॥ ३

धनी आज भी हमें वही शिक्षा दे रहे हैं और परमधामकी ओर आह्वान कर रहे हैं. प्रियतम धनी पुनः दूसरी बार आकर हमें पुकार रहे हैं. इसलिए अब हम पीछे क्यों रहें ?

सोई कूका करे पेहेलेकी, सो क्यों ना समझो बात ।
ना तो दिन उजाले खरे दो पोहोरे, अब हो जासी रात ॥ ४

प्रियतम धनी हमें पहलेकी भाँति ही जोरसे बुला रहे हैं, तुम इस बातको क्यों नहीं समझते हो ? अन्यथा यह ज्ञानका मध्याह्न तत्काल ही अज्ञानरूपी रातमें परिणत हो जाएगा.

फेर पटकोगे हाथडे, और छाती देओगे घाउ ।
चल जासी पीउ हाथसे, पेर ना पाओगे दाउ ॥ ५

फिर तुम अपने हाथ-पाँव पटकोगे और छाती भी पीटोगे. प्रियतम धनी हाथसे निकल जाएँगे तो पुनः ऐसा अवसर नहीं मिलेगा.

बिलख बिलख कहे बचन, रोए रोए किए बयान ।
प्रेम करे अति प्रीतसों, पर साथकों सुध ना सान ॥ ६

सद्गुरु धनी तो विलाप करते हुए रो-रोकर तुम्हें जगानेके लिए कह रहे हैं. वे अत्यधिक प्रेम भी कर रहे हैं, परन्तु सुन्दरसाथको अब तक उनकी सुधि ही नहीं आई.

माया देखी बीच पैठके, पीउके उजाले तुम ।
विध विध खेल देखावने, पीउ ल्याए तारतम ॥ ७

सद्गुरुके ज्ञानके प्रकाशमें भी तुम मायामें गहरे पैठकर उसे देख रहे हो. इस जगतके विभिन्न मायावी खेल दिखानेके लिए सद्गुरु तारतमज्ञान लेकर आए हैं.

ए जो मांगी तुम माया, सो देखे तीन संसार ।
अब साथ पीउ संग चलिए, ज्यों पीउ पावें करार ॥ ८

यह मायाका खेल तुमने माँगा था, उसे तुमने तीन बार (व्रज, रास और जागनीमें) देखा. हे सुन्दरसाथजी ! अब तो प्रियतम धनीके साथ परमधाम चलो. जिससे उन्हें भी (हमें जागनेका) सन्तोष प्राप्त हो.

पीउ पांच बेर हम वास्ते, सागरमें डारया आप ।
सो नजरों न आवे प्रेम बिना, बिना मेहेर या मिलाप ॥ ९

प्रियतम धनी हमारे लिए पाँच बार इस मायावी संसारमें आए. परन्तु उनसे प्रेम किए बिना, उनकी कृपा प्राप्त किए बिना तथा उनसे मिलाप किए बिना यह बात दृष्टिमें नहीं आ सकती.

भले देखो तुम आकारको, पर देखो अंदरका तेज ।
धनी धामके साथसों, कैसा करत हैं हेज ॥ १०

यद्यपि तुम्हें (हमारा) यह मानवी शरीर दिखाई दे रहा है, किन्तु हमारे अन्दरमें विराजमान सद्गुरुके आवेश और ज्ञानके तेजको देखो. (तब पता चलेगा कि) धामधनी अपने सुन्दरसाथसे कैसा प्यार कर रहे हैं ?

अब कैसी विध करूं तुमसों, कछू ना पेहेचाने सजन ।
सोर हुआ एता तुम पर, क्यों आवे नींद आंखन ॥ ११

अब मैं तुमसे कैसा व्यवहार करूँ ? तुमने अपने धनीको किसी प्रकार भी नहीं पहचाना. तुम्हें सद्गुरु धनीने इतना पुकार कर कहा फिर भी तुम्हारी आँखोंमें नींद कैसे आ रही है ?

ना गई नींद अंदरकी, क्यों एते बान सहे ।
जाग चलो संग पीउके, पीछे करोगे कहा रहे ॥ १२

अब भी अन्तरात्माकी निद्रा नहीं. उड़ी सद्गुरु धनीके इतने वचन कैसे सहे गए ? जागकर प्रियतमके साथ चलो, पीछे यहाँ रहकर क्या करोगे ?

तुमें धनी बिना कौन दूसरा, ए उडावे अंधेर ।
तुम देखो साथ बिचारके, जिन भूलो इन बेर ॥ १३

धामधनीके बिना तुम्हारे हृदयका यह अन्धकार कौन मिटा सकेगा ? हे सुन्दरसाथजी ! इस बात पर विचार कर देखो और इस अवसरको मत भूलो.

एक बेर भूले आदमी, ताए और बेर आवे बुध ।
ए चोटां सहियां सिर एतियां, तो भी ना हुई तुमे सुध ॥ १४

एक बार व्यक्ति भूल भी जाए तो उसे दूसरी बार बुद्धि आ जाती है, किन्तु सिर पर इतनी चोटें सहनेके बाद भी तुम्हें सुधि नहीं हुई ?

अब ढील ना कीजे एक पल, इत नाहीं बैठनका लाग ।
एक पलकके कोटमें हिसे, हो जासी बडा अभाग ॥ १५

अब एक पलकी भी देर मत करो, यहाँ बैठनेका समय भी नहीं है. एक पलके करोड़वें भागमेंसे एक भाग जितने समयमें भी धनीको भूलने वाला बड़ा अभागा हो जाएगा.

कहूं गुसा कर बचन, सो ना बले मेरी जुबांए ।
पर इत नफा क्या होएसी, तुम रहे माया लगाए ॥ १६

क्रोधमें आकर कटु वचन बोलना चाहूँ तो भी मेरी जिह्वा ऐसा नहीं कर पाएगी. यदि मायामें ही लगे रहोगे, तो उससे तुम्हें क्या लाभ होगा ?

टेढे सुकन तुमे कहूं, सो काट करूं जुबां दूर ।
पर इन मायाका तुमको, कहा होसी रोसन नूर ॥ १७

यदि तुम्हें उलटे (कटु) वचन कहनेका विचार आ जाए तो मैं अपनी जिह्वाको काटकर फेंक दूँ, किन्तु इस मायाके घोर अन्धकारमें तुम्हें ज्ञानका प्रकाश कैसे प्राप्त होगा ?

ना पेहेचाने इन उजाले, ए दोए साख पूरन ।
पीछे पीउ आगे वतनमें, क्यों होसी मुख रोसन ॥ १८

सद्गुरुने पुनः शरीर धारण कर (मेरे हृदयमें बैठकर) इस तारतम ज्ञानकी साक्षी दी फिर भी तुम इस प्रकाशमें अपने सद्गुरुको नहीं पहचान सके, तो परमधाममें अपने प्रियतम धनीके आगे तुम्हारा मुख कैसे उज्ज्वल होगा ?

पेहेले नजरों देखते, गयो अवसर टूटी आस ।
निकस गए जब हाथसे, तब आपन भए निरास ॥ १९

पहले भी आँखोंसे देखते-देखते ऐसा अवसर हाथसे निकल गया और हमारी सब आशाएँ टूट गईं. सद्गुरु जब हाथसे निकल गए तब हम सब निराश होकर बैठ गए.

ए ठौर ऐसा विषम, नास होए मिने छिन ।
स्याने हो तुम साथजी, सब चतुर वचिछिन ॥ २०

यह संसार एक ऐसा विषम स्थान है कि एक पलमें सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है. हे मेरे सुन्दरसाथजी ! तुम सब बड़े विचक्षण (सुविज्ञ) और चतुर हो (इस बातको समझो).

तुम स्याने मेरे साथजी, जिन रहो विषे रस लाग ।
पाउं पकड कहे इन्द्रावती, उठ खडे रहो जाग ॥ २१

हे मेरे सुन्दरसाथजी ! तुम सब तो बहुत ही बुद्धिमान हो इसलिए विषयोंके रसमें लगे मत रहो. इन्द्रावती पाँव पकड़कर कहती है कि जागकर उठ खड़े हो जाओ.

प्रकरण १७ चौपाई ३६२

श्री धनीजी के लागूं पाए, मेरे पीउजी फेरा सुफल हो जाए ।
ज्यों पीउ ओलखाए मेरे पीउजी, सुनियो हो प्यारे मेरी बिनती ॥ १

इन्द्रावती कहती है, हे मेरे प्रियतम धनी ! मैं चरणोंमें लगकर प्रार्थना करती हूँ कि मेरा इस जगतमें जीवन धारण करना सफल हो जाए. मुझे मेरे प्रीतम परमात्माकी पहचान हो जाए, ऐसी मेरी प्रार्थनाको सुनो.

मैं पेहेले ना पेहेचाने श्रीराज, मोहे आडी भई मायाकी लाज ।
भवसागरकी किने पाई ना किनार, सो तुम सेहेजे उतारे पार ॥ २

हे श्रीराजजी (सद्गुरु) ! मैं पहले आपके स्वरूपकी पहचान न कर सकी. मायावी लोक-लाज मेरे मार्गमें रुकावट बन गई. जिस भवसागरका ओर-छोर किसीको नहीं मिला है, उससे आपने हमें सहज ही पार उतार दिया.

तुम अपनी जान दया कर, धनी लेवे त्यों लई खबर ।
माया गम सास्त्रों मांहें, सो त्रगुन भी समझत नांहें ॥ ३

आपने मुझे अपनी जानकर दयापूर्वक धनीकी भाँति मेरी सुधि ली. शास्त्रोंमें मायाकी शक्तिके विषयमें ऐसा बताया है कि इसे तो त्रिगुणाधिपति-ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी नहीं समझ सकते.

सो तारतम केहे करी रोसन, और देवाई साख सास्त्रों बचन ।
हम मांग लई जो माया, सो पेहेचानके खेल देखाया ॥ ४

हे सद्गुरु ! आपने तारतमके वचन कहकर मायाका स्वरूप स्पष्ट कर दिया और शास्त्रोंके वचनोंकी साक्षी भी दी. हमने जिस मायाको माँग लिया था उसकी पहचान कराकर आपने हमें यह खेल दिखाया.

उमेद करी जो सैयन, सो इत आए करी पूरन ।
तुम उमेद करते मने किए, तो भी खेल देखाए सुख दिए ॥ ५

ब्रह्मात्माओंने जो इच्छा की थी उसे आपने स्वयं यहाँ आकर पूर्ण की. यद्यपि माया देखनेकी चाहना करते हुए आपने हमें मना किया था, फिर भी आपने हमें खेल दिखाकर हमारी अभिलाषाओंको पूर्ण करते हुए हमें अखण्ड सुख प्रदान किया.

हमको खेल देखन की लागी रढ, सो इत आए देखाई कर मन द्रढ ।
तुम हमको खेल देखावन काज, हमसों आगे आए श्री राज ॥ ६

हमें तो खेल देखनेकी रट लगी थी, उसे आपने यहाँ आकर हमें दृढ़तापूर्वक दिखाया. हमें जगतका नाटक दिखानेके लिए आप हमसे भी पहले इस संसारमें आ गए.

तुम बिना लाड पूरन कौन करे, इन मायामें दूजी बेर देह कौन धरे ।
तुम मोसों गुन किए अनेक, सो चूभे मेरे हिरदेंमें लेख ॥ ७

हे धनी ! आपके बिना हमारे लाड-प्यारको कौन पूरा करेगा और इस संसारमें पुनः शरीर धारण कर कौन आएगा ? आपने मुझपर अनेक गुण (उपकार) किए. वे सभी मेरे हृदयमें अङ्कित हैं.

तुम पर वार डारूं जीवसों देह, तुम किए मोसों अधिक सनेह ।
मैं वारने लेऊं तुम पर, मैं सुरखरू होऊंगी क्योंकर ॥ ८

आप पर मैं अपने जीव सहित अपनी देहको न्योछावर कर दूँ. आपने मुझे अत्यधिक स्नेह दिया है. यदि मैं आप पर समर्पित हो जाऊँ तो भी मैं आपसे कैसे उऋण हो पाऊँगी ?

तुम हो हमारे धनी, तो पूरी आसा लाख गुनी ।
इन्द्रावती चरनों लागे, कृपा करो तो जागी जागे ॥ ९

आप हमारे धनी हैं इसलिए आपने हमारी अभिलाषाओंको लाख गुना पूर्ण किया है. इन्द्रावती आपके चरण छूकर विनय करती है कि आपकी कृपा प्राप्त होनेपर ही स्वयं जागृत होकर अन्य सब आत्माओंको जगा दूँ.

अखंड दंडवत करूं परनाम, हैडे भीडके भानूं हाम ।
प्रेमें देऊं प्रदछिना, बेर बेर अनेक अति घना ॥ १

हे प्रियतम धनी ! मैं चाहती हूँ कि आपके चरणोंमें अखण्ड दण्डवत प्रणाम करूँ और आपके चरणोंको हृदयसे लगाकर अपनी आकांक्षाओंको पूर्ण कर लूँ एवं प्रेम पूर्वक बार -बार आपकी अत्यधिक परिक्रमा करती रहूँ.

बल बल जाऊं मुखारके बिंद, बरनन करूं सरूप सनंध ।
वारने जाऊं नैंनों पर, देखत हो सीतल द्रष्ट कर ॥ २

आपके मुखारविन्दकी शोभा पर वारंवार समर्पित हो जाऊँ और आपके तेजोमय स्वरूपका अनेक प्रकारसे वर्णन करूँ. आपके नयनों पर बलिहारी जाती हूँ, जिस शीतल दृष्टिसे आप मुझे निहारते हैं.

वारने ऊपर लेऊं वारने, सुख दिए मोकों अति घने ।
बेर बेर मैं लागूं पाए, सेवा करूं हिरदें चित ल्याए ॥ ३

मैं आप पर बार-बार बलिहारी होती हूँ क्योंकि आपने मुझे अत्यधिक सुख दिए हैं. मैं बार बार आपके चरणोंमें प्रणाम करती रहूँ और चित्तसे समर्पित होकर हृदयसे प्रेम पूर्वक आपकी सेवा करती रहूँ.

वार फेर डारूं मेरी देह, इन्द्रावती कहे अधिक सनेह ।
बोहोत अस्तुत मैं जाए ना कही, अपने घरकी बात जो भई ॥ ४

इन्द्रावती अत्यधिक स्नेह पूर्वक कहती है, हे धनी ! मैं अपनी देहको भी आपपर न्योछावर कर दूँ. मैं अधिक स्तुति भी नहीं कर सकती क्योंकि यह तो मेरे अपने घरकी बात है.

अपनी बडाई आप मुख होए, ताको मूरख कहे सब कोए ।
पर जैसी बात तैसा बरनन, करसी बिचार चतुर अति घन ॥ ५

स्वयं अपनी प्रशंसा करने वालोंको लोग मूर्ख कहते हैं, किन्तु जैसी बात है मैंने उसे वैसा ही वर्णन किया है. समझदार सुन्दरसाथ इस पर अत्यधिक विचार करेंगे.

बचन धनीके कहे परवान, प्रगट लीला होसी निरवान ।
चौदे भवनका कहिए सूर, रास प्रकास उदे हुआ नूर ॥ ६

सद्गुरु धनीके स्पष्ट वचन हैं कि यह जागनी लीला अवश्य प्रकट होगी. वही हुआ. चौदह लोकोंके अन्धकारको दूर करनेके लिए सूर्यके समान 'रास और प्रकाश' का उदय हो गया है.

चौदे भवनमें जोत न समाए, ए नूर किरना किने पकडी न जाए ।
सबदातीत ब्रह्मांड किए प्रकास, देखसी साथ एह उजास ॥ ७

इनकी ज्योति चौदह लोकोंमें भी समा नहीं पाएगी. इनकी ये प्रकाशमयी (नूरमयी) किरणें किसीसे भी नहीं पकड़ी जाएँगी, इन्होंने तो शब्दातीत ब्रह्माण्ड (व्रज और रास) को भी प्रकाशित कर दिया, अब इस प्रकाशको समस्त सुन्दरसाथ देखेंगे.

प्रकासके बचन निरधार, बचन सब करसी विचार ।
आगे बडो होसी विस्तार, अखंड सब होसी संसार ॥ ८

प्रकाशके इन वचनों पर निश्चय ही सुन्दरसाथ विचार करेंगे. इस ज्ञानका आगे और बड़ा विस्तार होगा. इसके द्वारा समस्त संसारके जीव अखण्ड सुख प्राप्त करेंगे.

इन लीलाको करसी बिचार, क्या करसी ताको संसार ।
प्रगट नींउ बांधी है एह, बडी इमारत होसी जेह ॥ ९

जो भी इस अखण्ड लीला पर विचार करेगा उसे यह संसार क्या कर पाएगा ? अर्थात् यह माया उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकेगी. रास और प्रकाश ग्रन्थों द्वारा अखण्ड ज्ञानकी यह नींव बाँधी है, भविष्यमें उसी पर चौदह ग्रन्थयुक्त 'तारतम सागर' रूपी विशाल भवन खड़ा होगा.

सुनो बचन ब्रह्मसृष्टि जाग, इन्द्रावती कहे चरनों लाग ।
ए बानी मेरे धनिएं कही, फेर फेर तुमको कृपा भई ॥ १०

इन्द्रावती चरणोंमें झुककर कहती है, हे ब्रह्मात्माओ ! तुम जागृत होकर इन वचनोंको सुनो. मेरे सद्गुरु धनीने यह वाणी कही है. तुम पर बार-बार उनकी यह कृपा हुई है.

ऐसा पकव प्रवीन ना कछू हूं, तो सिखापन तुमको क्यों देऊं ।
मैं मनमें यों जान्या सही, जीव अपना समझाऊं रही ॥ ११

मैं स्वयं इतनी परिपक्व बुद्धि वाली तथा दक्ष नहीं हूँ, इसलिए तुम्हें शिक्षा भी कैसे दूँ ? मैंने तो मनमें यह सोचा कि मैं अपने ही जीवको भली प्रकार समझा लूँ.

पर साथ ऊपर दया अति घनी, फेर फेर कृपा करत हैं धनी ।
तो बचन तुमको कहे जाए, ना तो चींटी मुख कुम्हडा न समाए ॥ १२

किन्तु सुन्दरसाथ पर धामधनीकी अपार दया है. वे बार-बार इस प्रकार अनुग्रह कर रहे हैं. उनकी कृपासे ही ये दो चार शब्द तुम्हें कहे जा रहे हैं अन्यथा चींटीके मुँहमें कद्दू कभी समा नहीं सकता.

जिन तुम बचन बिसारो एक, कारन साथ कहे बिसेक ।
बचन कहे हैं कीजो त्यों, आपन पेहेले पांउ भरे हैं ज्यों ॥ १३

सद्‌गुरुका एक वचन भी तुम भूलना नहीं क्योंकि ये वचन सुन्दरसाथके लिए ही विशेष रूपसे कहे गए हैं. जैसा कहा है वैसा ही करना जिस प्रकार हमने पहले व्रजसे रास मण्डलमें जानेके लिए कदम उठाए थे.

फेर अवसर आयो है हाथ, चरने लाग केहेती हूं साथ ।
अब चरने लागूं धनी चित धरी, तुम खबर मेरी भली विध करी ॥ १४

हे सुन्दरसाथजी ! मैं चरण छूकर कहती हूँ कि फिर वही अवसर हमारे हाथ आया है. अब सद्‌गुरुधनीके चरणोंको हृदयमें रखकर प्रणाम करती हूँ क्योंकि आपने मेरी भली प्रकार सुधि ली है.

ए माया बोहोत जोरावर हती, दूर करी मेरे प्रानपती ।
मायाकों तजारक भई, तिन कारन ए बिनती कही ॥ १५

यह माया तो बहुत शक्तिशालिनी थी, मेरे प्राणपति सद्‌गुरुने इसे दूर कर दिया. मायाको इस प्रकार दण्ड मिला इसलिए मैं यह विनती कर सकी हूँ.

ए बिनती सुनियो तुम सार, माया दुख पायो निरधार ।
ए माया बातें हैं अति घनी, मोहे मुखथें काढी मेरे धनी ॥ १६

हे सुन्दरसाथजी ! तुम मेरी सारगर्भित विनती सुनो. निश्चित ही मायामें पड़कर हमने बहुत दुःख प्राप्त किया. मायाकी ऐसी बातें तो बहुत हैं. मेरे धामधनीने मुझे मायाके मुखसे बाहर निकाल लिया.

तुमारे गुनकी कहा कहूं बात, तुम लाड पूरे करके अपन्यात ।
पीउने अपनी जानी परवान, इन्द्रावती चरने राखी निरवान ॥ १७

हे मेरे सद्‌गुरु ! मैं आपके गुणोंकी चर्चा कहाँ तक करूँ ? आपने अपनापन दिखाकर मेरे सभी लाड़ पूर्ण किए. इन्द्रावतीको अपनी जानकर प्रियतम धनीने स्वीकारा और उसे अपने चरणोंमें स्थान दिया.

श्रीसुन्दरबाईके चरन पसाए, मूल बचन हिरदें चढि आए ।
चरन फले निध आई एह, अब ना छोडूं चित चरन सनेह ॥ १८

सद्‌गुरु (सुन्दरबाई) के चरणोंके प्रतापसे परमधामके मूल वचन मेरे हृदयमें प्रकट हुए. जिन चरणोंकी कृपाके फल स्वरूप यह निधि मुझे प्राप्त हुई है, उनका स्नेह अब मैं नहीं छोड़ सकती हूँ.

चरन तले कियो निवास, इन्द्रावती गावे प्रकास ।
भानके भरम कियो उजास, पावें फल कारन विस्वास ॥ १९

ऐसे सद्‌गुरुके चरणोंमें रह कर इन्द्रावती प्रकाशके वचनोंको इस प्रकार गा रही है. सद्‌गुरुने मेरी सभी भ्रान्तियोंको मिटाकर मेरे हृदयको प्रकाशित किया है. उनके चरणोंमें विश्वास करनेसे मुझे यह फल प्राप्त हुआ.

विस्वास करके दौडे जे, तारतमको फल सोई ले ।
तिन कारन करूं प्रकास, ब्रह्मसृष्टि पूरन करूं आस ॥ २०

जो पूर्ण विश्वासके साथ आगे बढ़ेंगे, उन्हें ही तारतम ज्ञानका फल प्राप्त होगा. इस प्रकार प्रकाश ग्रन्थके इन वचनोंको प्रकाशित कर ब्रह्मात्माओंकी आशा पूर्ण करूँगी.

इन्द्रावती धनीके पास, रासको कियो प्रकास ।
धनिएं दई मोहे जागृत बुध, तो प्रकास करूं तारतमकी निध ॥ २१

इन्द्रावतीने सद्‌गुरुके चरणोंमें रहकर रासके रहस्योंको इस प्रकार (प्रकाश ग्रन्थके द्वारा) प्रकट किया. सद्‌गुरु धनीने मुझे जागृत बुद्धि प्रदान की है. इसलिए उसके बल पर ही मैं तारतम ज्ञानरूपी अखण्ड निधिको प्रकट करती हूँ.

प्रकरण १९ चौपाई ३९२

अस्तुत कर गुन फिराए हैं

अब करूं अस्तुत आधार, वल्लभ सुनो बिनती ।
एते दिन मैं ना पेहेचाने, मोहे लेहेर माया जोर हुती ॥ १

हे मेरे प्राणवल्लभ सद्‌गुरुधनी ! अब मैं आपकी स्तुति करती हूँ. आप मेरी

विनय सुनिए. इतने दिनों तक मैंने आपको नहीं पहचाना क्योंकि मायावी लहरोंका प्रभाव मुझ पर अधिक पड़ा था.

भानूं भरम मोह जो मूलको, लेऊं सो जीव जगाए ।
करूं अस्तुत पियाकी प्रगट, देऊं सो पट उडाए ॥ २

भ्रम (अज्ञान)के मूल मोहको मिटाकर अब मैं अपने जीवको जागृत कर लूँ. प्रियतम धनीकी स्तुति कर इस अज्ञानरूपी पर्देको हटा दूँ.

सोभा पीउकी सबदातीत, सो आवत नहीं जुबांए ।
जोगवाई जेती इन अंगकी, सो सब मूल प्रकृति मांहे ॥ ३

मेरे प्रियतम धनीकी शोभा शब्दातीत है. इस जिह्वासे उसका वर्णन नहीं किया जा सकता, क्योंकि इस शरीरके सभी उपकरण (साधन) मूल-प्रकृतिके अन्तर्गत हैं.

अब किन बिध करूं मैं अस्तुत, मेरे जीवको ना कछू बल ।
जीव जोगवाई सब अस्थिरकी, क्यों बरनों सोभा नेहेचल ॥ ४

अब मैं किस प्रकार स्तुति करूँ ? मेरे जीवमें इतना बल भी तो नहीं है. मेरे जीवके सब साधन नश्वर जगत्के हैं. उनसे मैं अखण्ड स्वरूपकी शोभाका वर्णन कैसे करूँ ?

पेहेले जीवों करी अस्तुत, भली भांत भगवान ।
पंडिताई चतुराई महाप्रवीनी, किव कर हिरदें आन ॥ ५

पहलेके जीवोंने भी भगवानकी स्तुति भली प्रकारसे की. उन्होंने अपने हृदयमें पण्डिताई, चतुराई और प्रवीणता धारण कर भगवानकी स्तुतिमें काव्योंकी रचना की.

ए किव प्रवाही जब देखिए, तामें कोई कोई भारी बचन ।
ए तो देवें सोभा अचेतमें, पर मोहे सालत है मन ॥ ६

प्रवाहमें लिखी गई इन कविताओं (वाणी) को देखेंगे तो इनमें कहीं-कहीं गूढ़ शब्द मिलेंगे. उन्होंने तो समझे बिना ही अपने इष्टकी इतनी शोभा लिख दी है. किन्तु उनके ये वचन मुझे बींध जाते हैं.

बेसुध भए देवे एती सोभा, तो कहा करे कर पेहेचान ।
जो मुख बचन एक कहूं प्रवाही, तो सुन्या नहीं निरवान ॥ ७

(परम तत्त्वकी पहचान बिना) बेसुधिमें भी वे अपने इष्टको इतनी शोभा दे गए हैं तो पहचानने पर वे कैसी शोभा देते ? यदि मैं भी उन प्रवाहमें बहने वालोंकी भाँति ही कहूँ तो निश्चय ही मैंने सद्‌गुरुका विशिष्ट ज्ञान नहीं सुना.

ना कछू सुनिया वेद पुरान, ना कछू किव चातुरी ।
एक दोए बचन सुने मुख धनीके, तिनसे सुध सब परी ॥ ८

मैंने न तो वेद पुराणोंको ही सुना है और न ही कवियों जैसा चातुर्य मेरे पास है. सद्‌गुरुधनीके मुखसे मैंने एक दो शब्द ही सुने हैं. उसीसे मुझे सब सुधि हुई है.

सो भी ना सुन्या चित देयके, ना तो जोर गया पूर चल ।
पर जो रे गुन आडे मायाके, ताथें ले ना सकी बूंद जल ॥ ९

उन शब्दोंको भी मैंने ध्यान पूर्वक नहीं सुना था, अन्यथा उस समय तो ज्ञानका भरपूर प्रवाह बह रहा था. मेरे ये गुण, अंग, इन्द्रियाँ ही मेरे मार्गमें अवरोधक बन गईं. इसलिए मैं सद्‌गुरुके वचनामृतकी एक बूँद भी न ले सकी.

अब तिन गुनको कहा दीजे उपमा, धिक धिक पडो ए बुध ।
आगे तूं सिरदार सबनके, तें क्यों ना लई ए निध ॥ १०

अब उन अंगोंको मैं किसकी उपमा दूँ, हे मेरी बुद्धि ! तुझे धिक्कार है. तू तो सब अंगोंकी शिरोमणि है. तूने ज्ञानरूपी इस निधिको क्यों ग्रहण नहीं किया ?

अब जागी बुध कहूं मैं तोकों, तूं है बुधको अवतार ।
कर निरने तूं माया ब्रह्मको, खोल तूं पार द्वार ॥ ११

हे बुद्धि ! अब मैं तुझे जागृत बुद्धि कहूँ. तू तो अक्षर ब्रह्मकी मूल बुद्धिकी अवतार है. माया और ब्रह्मका निर्णय कर तू परमधामके द्वार खोल दे.

और ना कोई बुध मुझ जैसी, मैं ही बुध अवतार ।
धाम धनी ग्रहूं इन विध, और अखंड करूं संसार ॥ १२

अब जागृत बुद्धि (महामति) कहती है, संसारकी कोई भी बुद्धि मेरे समान नहीं है, क्योंकि मुझमें ही बुद्धावतारका अवतरण हुआ है. परमधामके धनीको मैं इस प्रकार ग्रहण करूँ कि जिससे समस्त संसारके जीवोंको भी अखण्ड कर दूँ.

ए बुध रही हमारे आसरे, जो सबथें बडा अवतार ।
बुधजी बिना माया ब्रह्मको, कोई कर ना सके निरवार ॥ १३

अक्षर ब्रह्मकी जागृत बुद्धि (रासके बाद अभी तक) हमारे आश्रयमें रही है जिसको सबसे बड़ा अवतार (बुद्ध अवतार) कहा गया है. बुद्धजीके बिना अन्य कोई भी माया और ब्रह्मका निरूपण नहीं कर सकता.

सुंन निराकार निरंजन, तिनके पार के पार ।
बानी गाऊं तित पोहोंचके, इन चरनों बुध बलिहार ॥ १४

चौदह लोकोंसे परे शून्य, निराकार और निरञ्जन है. उसके पार अक्षर ब्रह्म हैं तथा उनके भी पार पहुँचकर मैं परमधामकी वाणी गा रही हूँ. इसलिए मैं सद्गुरुके इन चरणों पर बलिहारी होती हूँ.

जो नहीं विस्नु महाविस्नुको, बुधजी पोहोंचे तित ।
मेरे हिरदें चरन धनीके, इन ए फल पाया इत ॥ १५

भगवान विष्णु और महाविष्णु भी जहाँ तक नहीं पहुँच पाए वहाँ सद्गुरु धनी पहुँचे हैं. मेरे हृदयमें सद्गुरुके चरण स्थित हुए. इसलिए उनकी अनुकम्पासे मैंने यह फल प्राप्त किया.

ए सार पाए सुख उपजे, धंन धंन ए बुध अवतार ।
अबलों इन ब्रह्मांडमें, किनों खोल्या ना ए दरबार ॥ १६

तारतम ज्ञानरूपी निधि प्राप्त होने पर अखण्ड सुख प्राप्त होगा. अक्षर ब्रह्मकी बुद्धिका यह बुद्ध अवतार धन्य है, आज तक इस ब्रह्माण्डमें परमधामके द्वारको किसीने नहीं खोला था.

लीला इन अवतारकी, करसी सब अखंड ।
धंन धंन इन अवतारकी, बानी गावसी सब ब्रह्मांड ॥ १७

इस अवतारकी लीलासे ब्रह्माण्डके समस्त जीव अखण्ड हो जाएँगे. यह अवतार धन्य है. ब्रह्माण्डके सभी जन अपनी वाणीमें इस अवतारकी महिमा गाएँगे.

अब कहूं तोको श्रवना, धनिएं कहे तोकों बचन ।
क्यों ना लई बानी बचिछिन, फिट फिट भूंडे करन ॥ १८

हे श्रवण अंग ! अब मैं तूझे कहती हूँ. सद्गुरु धनीने तुझे परमधामके वचन कहे हैं. तूने उनकी विचक्षण वाणीको क्यों ग्रहण नहीं किया ? हे मेरे मूढ श्रवण ! तुझे धिक्कार है.

मेरे तो मुदा तुम ऊपर, लेना तुमारे जोर ।
धनिएं तो धन बोहोतक दिया, पर तें लिया न हरामखोर ॥ १९

मैंने तुझ पर बड़ा भरोसा किया था कि मैं तेरे बल पर कुछ ग्रहण कर पाऊँगी. सद्गुरुने तो अथाह सम्पदा प्रदान की थी, परन्तु तुझ जैसे कृतघ्नके कारण मैं उसे ग्रहण नहीं कर सकी.

अब अपना तूं संभार श्रवना, हो बचिछिन वीर ।
बानी जो वल्लभकी, सो लीजो द्रढ कर धीर ॥ २०

हे मेरे श्रवण ! अब तू अपने आपको सम्हाल लें, विचक्षण वीर हो जा. सद्गुरुधनीकी वाणी (तारतम ज्ञान) को धैर्य और दृढ़तासे ग्रहण कर.

श्रवना कहे सुने मैं नीके, विध विध के बचन ।
पूरी पीउने आस हमारी, उपज्यो आनंद घन ॥ २१

श्रवण कहते हैं, हमने सद्गुरु द्वारा कहे हुए विविध वचनोंको भली-भाँति सुना. सद्गुरु धनीने हमारी आशा पूरी कर दी जिससे हमें बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ.

अब बचन लेऊं सब सारके, भी यों कहे श्रवन ।
इन विध बानी ग्रहूं मैं प्यारी, ज्यों सब कोई कहे धन धन ॥ २२

श्रवण अङ्ग यह भी कहने लगे कि अब हम सार वचनोंको ग्रहण करेंगे. धामधनीकी प्यारी बातोंको हम इस प्रकार ग्रहण करेंगे कि सब लोग हमें धन्य धन्य कहेंगे.

बेसुध नींद कहूं मैं तोकों, तूं निठुर नीच निरधार ।
हुई तूं सब गुनके आडे, ना लेने दई निध आधार ॥ २३

हे बेसुध नींद ! अब तुझे मैं क्या कहूँ ? तू निश्चित ही निष्ठुर और नीच है. तू सब गुणोंके मार्गमें अवरोधक बन गई और उन्हें परमधामकी निधि लेने नहीं दी.

तूं तो माया रूप पापनी, तें डबोई ले कर बाथ ।
तें श्रवना को सुनने ना दिया, आलस जम्हाई तेरे साथ ॥ २४

हे पापिन निद्रा ! तू तो मायाका ही दूसरा रूप है. तूने मुझे बलपूर्वक अपने अङ्कपाशमें भरकर दबोच लिया और मोहमें डुबा दिया. तूने ही कानोंको कुछ सुनने भी नहीं दिया, आलस्य और जम्हाई तेरे साथी हैं.

अनेक अंधेर दई तें जीवको, ज्यों मीन बांधे मांहें जाल ।
जिन नैनों निध निरखूं निरमल, तिन नैनों आडी भई पाल ॥ २५

तूने जीवको अनेक प्रकारसे अन्धेरेमें डाल दिया जैसे कोई मछली जालमें फँस जाती हो. जिन आँखोंसे मैं निर्मल निधि (प्रियतमधनी) को देख सकती हूँ उन्हीं पर तू परदा बनकर रह गई.

फिट फिट भूंडी दुष्ट पापनी, तोको दई अनेक धिकार ।
पेहेले अवसर गमाया, अब नीके निरखो भरतार ॥ २६

हे दुष्ट, पापिनी निद्रा ! तुझे अनेक लोगोंने धिक्कारा है. पहले भी तूने अपना अवसर खो दिया. अब तो अपने प्रियतम धनीको भलीभाँति देख ले.

तूं करत मृतक समान, ऐसी निपट निखर ।
अब तूं आव आडी मायाके, ज्यों निरखूं धनी निज घर ॥ २७

हे नींद ! तू ऐसी ढीठ है कि तू जीवको मृतकके समान कर देती है. अब तू मेरे और मायाके बीच व्यवधान बन जा, जिससे मैं अपने धनी और मूल घर परमधामको भली-भाँति देख सकूँ.

नींद कहे आतम जब जागी, तब क्यों रह्यों मैं जाए ।
नींद कहे मैं जात हों, लागूं तुमारे पाए ॥ २८

निद्रा कहती है, जब आत्मा जग जाती है तो मैं कैसे रह सकती हूँ ? चलो अब मैं तुम्हारे पाँव छूकर जा रही हूँ.

तब आई तूं अरूचडी, जब मिले मोहे श्री राज ।
ऐसी अंधी अकरमन, तूं सरजी किस काज ॥ २९

हे अरुचि ! तू तब आई जब मेरे प्राणप्रिय श्रीराजजी मुझे मिले थे. तू ऐसी अन्धी और अकर्मण्य है. तू किस कामके लिए बनाई गई है ?

फिट फिट भूंडी तें भुलाई, अब कर कछू बल ।
आतम दृष्ट जुडी पर आतम, हो माया मांहें नेहेचल ॥ ३०

हे दुष्ट अरुचि ! तुझे धिक्कार है. तूने मुझे भुला दिया, अब तो कुछ बल दिखा. अब जब आत्माकी दृष्टि पर आत्मासे जुड़ी है तब तो तू मायामें ही स्थिर हो जा.

अरुचडी कहे मैं बलवंती, मोको न जाने कोए ।
छानी होएके बैठूं जीवमें, भानूं सो साजा न होए ॥ ३१

अरुचि कहती है, मैं तो बहुत ही शक्तिशालिनी हूँ, मुझे कोई नहीं समझ पाया. मैं छिपकर जीवके अन्तरमें बैठ जाती हूँ. जिसे मैं तोड़ देती हूँ वह कभी जुड़ नहीं सकता.

धनी अपना जब आप संभारे, तब चोरी करे क्यों चोर ।
अब उलटाए करूं मैं सीधा, बैठूं मायामें जोर ॥ ३२

जब जीव (देहका धनी) अपने आपको सम्हाल लेता है, तब अरुचिरूपी

चोर कैसे चोरी कर सकता है. अब मैं इन सबको उलटा कर सीधा कर दूँगी और स्वयं (यत्नपूर्वक) मायामें बैठ जाऊँगी.

तलवे सेवा करूं सब अंगों, मोहे मिले धनी एकांत ।
तिन समे आए बैठी अंगमें, फिट फिट भूंडी स्वांत ॥ ३३

मैं चाहती थी कि जब मुझे प्रियतम धनी एकान्तमें मिले हैं तो मैं जल्दी-जल्दी उनके चरणोंकी सेवा करूँ. किन्तु हे शान्ति ! ऐसे समय तू आकर मेरे अँगोंमें बैठ गई, तुझे धिक्कार है.

धनी मिले स्वांत न कीजे, क्यों बैठिए करार ।
जाग दौड कीजे सब अंगों, स्वांत कीजे संसार ॥ ३४

धनीके मिलने पर शान्ति (तृप्ति) की भावना नहीं आनी चाहिए. तुझे शान्त होकर नहीं बैठना चाहिए. जागृत होकर सब अंगोंको एकाग्र करके प्रियतमधनीकी ओर दौड़ जाओ और संसारकी ओरसे उदासीन हो जाओ.

स्वांत कहे मैं तबलों थी, जोलों नींद हुती आतम ।
अब मैं बैठी तरफ मायाके, बिलसो अपना खसम ॥ ३५

शान्ति कहती है, मैं तब तक ही थी जब तक आत्मामें निद्रा छाई हुई थी. अब मैं मायाकी ओर प्रवृत्त हो गई हूँ. हे जीव ! अब तुम जागकर अपने धनीके साथ विलास करो.

अब कहूं तोकों लोभ लालची, फिट फिट मूरख अजान ।
लोभ न लागा चरन धनीके, जासों पाइए घर निरवान ॥ ३६

हे लोभ और लालच ! अब मैं तुमको कहती हूँ. तुम अज्ञानी और मूर्ख हो, तुम्हें धिक्कार है. जिससे निश्चित ही अखण्ड घरकी प्राप्ति हो जाती है, ऐसे धामधनीके चरणोंमें तुम नहीं लगे.

अब जिन जाओ तरफ मायाके, मेरे लोभ लालच दोऊ जोड ।
जोर पकडो दोऊ पांउ पीउके, करो रात दिन दौड ॥ ३७

हे मेरे लोभ लालच ! तुम दोनों जुडवाँ (जोड़ी) हो. अब तुम मायाकी ओर

मत जाओ. धामधनीके दोनों चरणोंको यत्नपूर्वक पकड़ो और रात-दिन उसी दिशाकी ओर दौड़ करो.

कहे लोभ लालच क्या गुनाह हमारा, जोलों जीव ना करे खबर ।
अब तुम पीउ देखाया हमको, तो देखो पीउ ग्रहें द्रढ कर ॥ ३८

लोभ और लालच कहते हैं कि भला हमारा क्या अपराध है ? जब तक जीव सावधान ही नहीं होगा (तब तक हम कर भी क्या सकते हैं.) तुमने हमें प्रियतमका मार्ग दिखा दिया है तो अब देखना कि हम उनको किस प्रकार पकड़कर रखते हैं.

भट परो त्रस्ना कहूं तोकों, तूं निपट निठुर निरधार ।
और सबे गुन त्रपत होवें, पर तोमें कोई भूख भंडार ॥ ३९

हे तृष्णा ! तुझे धिक्कार है. वस्तुतः तू बड़ी निष्ठुर और नीच है. सभी गुण तो तृप्त हो जाते हैं किन्तु तुझमें तो कोई भूखका ही अक्षुण्ण भण्डार है.

अब तोकों क्यों काढूं रे त्रस्ना, तोसों बडा मोहें काम ।
त्रस्ना लाग तूं पूरन पीउसों, ज्यों बस करूं धनी श्री धाम ॥ ४०

हे तृष्णा ! तुझे मैं क्यों निकाल दूँ ? तुझसे तो मुझे बड़ा भारी काम है. हे तृष्णा ! तू पूर्ण रूपसे धनीकी ओर लग जा, जिससे मैं अपने धामधनीको वशमें कर लूँ.

त्रस्ना कहे मैं क्योंए ना छोडूं, जो आतमाए देखाया आधार ।
तुम जाए गुन और फिराओ, मैं छोडूं नहीं निरधार ॥ ४१

तृष्णा कहती है, आत्माने मुझे जो आधार (धनी) दिखा दिया है मैं उन्हें कदापि नहीं छोड़ूँगी. तुम जाकर और गुणोंको लौटाओ. निश्चय ही मैं आत्माके आधारको कभी नहीं छोड़ूँगी.

मूरख मोह कहूं मैं तोको, जब आतम धनी घर आया ।
इन अवसर तूं चूक्या चंडाल, जाए बैठा मांहें माया ॥ ४२

हे मूर्ख मोह ! मैं तुझे क्या कहूँ ? जब आत्माके धनी घरमें आए थे तब तू चण्डाल बनकर अवसर चूक गया और मायामें जाकर बैठ गया.

अब आव तूं वालाजीमें, मायासों कर बिछोह ।
देखूं जोर करे तूं कैसा, सांचे सिपाही मेरे मोह ॥ ४३

हे मोह ! अब तू मायासे नाता तोड़कर धामधनीकी ओर लग जा. तू मेरा सच्चा सिपाही हो जा. मैं भी देखूँ तू कैसा प्रयत्न करता है.

बात बडी कहे मोह मेरी, मोको जाने प्रेमी सोए ।
मैं बैठत हूं जित आएके, तितथें उठाए न सके कोए ॥ ४४

मोह कहता है, मेरी बात तो बहुत बड़ी है. प्रेमीजन ही मुझे जानते हैं. मैं जहाँ भी जाकर बैठ जाऊँ, वहाँसे मुझे कोई उठा नहीं सकता.

जो तुम धनी देखाया मोको, होए लागूं मूरख मूढ अंध ।
एकै विध है मेरी ऐसी, और न जानूं सनंध ॥ ४५

यदि तुमने मुझे अपने धनीको दिखा दिया है तो मैं मूर्ख और अन्धेकी भाँति उनकी ओर लग जाऊँगा. मेरी तो एक ही रीति है, मैं दूसरा कुछ नहीं जानता.

हरष सोक तुम भए मायाके, धिक धिक तुमको अजान ।
आए धनी हरष न आया, चले सोक न आया निदान ॥ ४६

हे हर्ष और शोक ! तुम मायाके वशमें हो गए हो. तुम अज्ञानियोंको धिक्कार है. जब धामधनी आए तो तुम्हें कोई हर्ष नहीं हुआ और उनके चले जाने पर भी कोई शोक नहीं हुआ.

हरष सोक कहे हम निठुर, भए सो अंध अभागी ।
धनी बिगर करे कहा हम, जोलों जीव न कहे जागी ॥ ४७

हर्ष और शोक कहते हैं, सचमुच हम बड़े निष्ठुर हैं और अन्धे तथा अभागे भी बन गए हैं. किन्तु जब तक जीव जागृत होकर हमें नहीं कहता तब तक धनी (जीव) के बिना हमारा क्या वश चलता है ?

अब तुम आओ नेहेचल सुखमें, जिन भूलो अवसर ।
मायामें लाहा लेऊं धनीका, हरष ले जागों घर ॥ ४८

हे हर्ष और शोक ! अब तुम अखण्ड सुखकी ओर आ जाओ, ऐसे

अवसरको मत भूलो. मायामें बैठकर भी मैं अपने धनीसे मिलनेका लाभ लूँ और प्रसन्नता पूर्वक अपने घरमें जाग जाऊँ.

हरष कहे मैं क्या करूं, जो जीवको नहीं खबर ।
सोक कहे ना पेहेचान पीउकी, तो बिछुरे जाने क्योंकर ॥ ४९

हर्ष कहता है, जब तक जीव अपनी संभाल नहीं करता तब तक मैं भी क्या करूँ ? शोक कहता है, जीवको धनीकी पहचान ही नहीं है तो मैं कैसे जानूँ कि उसका धनीसे वियोग हो गया है.

हरष सोक कहे हम बलिएं, दोऊ जोधा बडे जोरावर ।
अब पेहेचान करी तुम पीउकी, अब क्योंए ना भूलें अवसर ॥ ५०

हर्ष और शोक कहते हैं, हम दोनों बड़े शक्तिशाली योद्धा माने जाते हैं. हे जीव ! अब तुमने अपने धनीको पहचान लिया है तो इस अवसरको हम कभी नहीं भूलेंगे.

फिट फिट जोधा जोरावर तुमको, मद मत्सर अहंकार ।
तुम अंतराए करी धनीसों, दौड करी संसार ॥ ५१

हे मद, मत्सर और अहंकार ! तुम जैसे शूरवीर योद्धाओको धिक्कार है, क्योंकि तुमने धनीसे तो मुझे अलग कर ही दिया और स्वयं संसारकी ओर दौड़ने लगे.

तुम तीनों जोधा भए क्यों उलटे, भए मायाके दास ।
जब जीवनजी मिले जीवकों, तब क्यों ना कियो उलास ॥ ५२

तुम तीनों योद्धा मुझसे प्रतिकूल होकर मायाके दास कैसे बन गए ? जब जीवको (प्राण स्वरूप सद्गुरु) जीवन मिल गए, तब तुम उल्लसित क्यों नहीं हुए ?

अब तुम संगी हूजो मेरे, धनिएं कियो मोसों मिलाप ।
सिर ल्यो सोभा धनी धामकी, दूर हो मायाथें आप ॥ ५३

अब तुम मेरे साथ हो जाओ क्योंकि धामधनी इस मायामें आकर मुझे मिले हैं. तुम मायासे दूर होकर मेरे धामधनीकी शोभा प्राप्त करो.

तीनों जोधा बडे जोरावर, हम तीनोंकी राह एक ।
धनी आतमसे क्योंए न छूटे, जो पडे विघन अनेक ॥ ५४

मद, मत्सर और अहंकार कहते हैं, हम तीनों बड़े शूरवीर योद्धा हैं तथा हम तीनोंका एक ही मार्ग है. अब चाहे कितनी भी विघ्न-बाधाएँ क्यों न आएँ, हम आत्माको उसके स्वामीसे अलग होने नहीं देंगे.

सेहेज सुभाव फिट फिट तुमको, ऐसे सूर सुभट ।
सांचे तुम हुए मायासों, मोसों मिले कपट ॥ ५५

हे मेरे सहज स्वभाव गुण ! तुम्हें धिक्कार है. तुम बड़े ही कुशल शूर-वीरके समान हो. तुम मायाके तो सच्चे मित्र बन गए किन्तु मुझसे कपट भाव लेकर मिले.

मूरख मूढ करी तुम दुष्टाई, हुए नहीं स्वाम धरमी ।
मूरख मूढ करी तुम ऐसी, धिक धिक चंडाल अकरमी ॥ ५६

हे मूर्ख और मूढ़ सहज स्वभाव गुण ! तुमने सचमुच बड़ी दुष्टता की है, तुम स्वामीधर्मी (कृतज्ञ-भक्त) नहीं हुए. तुमने ऐसा क्यों किया ? हे चण्डाल दुष्टकर्मी मूर्ख तथा मूढ़ सहज स्वभाव ! तुम्हें धिक्कार है.

जोधा दोऊ जोरावर मेरे, तुम तरफ हो जिनकी ।
अनेक उपाए करे जो कोई, पर जीत होए तिनकी ॥ ५७

तुम दोनों ही मेरे बलशाली योद्धा हो. तुम जिसकी ओर जाते हो उसीकी जीत होती है दूसरा कोई चाहे कितने ही उपाय क्यों न कर ले.

अब तुमको कहूं खीजके, तुम हूजो सावधान ।
प्रेमें पीउ रूदे लपटाओ, जिन करो किन की कान ॥ ५८

अब मैं तुम्हें खीजकर कह रही हूँ कि तुम दोनों सावधान हो जाओ. प्रेमपूर्वक पीउके हृदयसे लिपट जाओ, किसी औरकी परवाह मत करो.

सेहेज सुभाव दोऊ हम बलिए, कोई करे जो कोट उपाए ।
पकडें बात जो हम सांची, सो लोपी किनहूं न जाए ॥ ५९

सहज स्वभाव गुण कहते हैं, हम दोनों बड़े बलवान हैं. चाहे कोई करोड़ों

उपाय क्यों न करे, हम जिस बातको सत्य मानकर ग्रहण कर लेते हैं वह किसीसे मिटाई नहीं जा सकती.

अब देखियो जीव जोर हमारा, पीउ पकड देवें एकांत ।
पूरा पास देऊं रंग लाखी, क्योंए ना उचटे भांत ॥ ६०

हे जीव ! अब तुम हमारा बल देखना. हम धनीको एकान्त (हृदय) में ग्रहण करेंगे और प्रेमका ऐसा लाल रङ्ग चढ़ा देंगे ताकि कभी भी वह फीका न हो जाए.

ममता तूं भई माया की, हलाक किए हैरान ।
फिट फिट भूंडी चंडालन, तें बडी करी मोहे हान ॥ ६१

हे ममता ! तूने मायाकी बनकर मुझे हैरान किया. हे दुष्ट चण्डालिनी ! तुझे धिक्कार है. तूने मुझे बड़ी हानि पहुँचाई है.

अब ममता आव मेरे पीउमें, तोकों पेहेले दई धिकार ।
अब संगातन हूजो मेरी, मोहे मिले पीउ सिरदार ॥ ६२

हे ममता ! अब तू मेरे धनीकी ओर आ जा. तुझे मैंने पहले ही बहुत धिक्कारा है. अब तू मेरी संगिनी बन जा. मुझे शिरोमणि सद्गुरु मिल गए हैं.

अब मैं चेरी हुई तुमारी, ले देऊं सांची निध ।
अबके ए निध क्योंए ना छूटे, करो कारज तुम सिध ॥ ६३

ममता कहती है, अब मैं तुम्हारी दासी बन गई हूँ. मैं तुम्हें सच्ची निधि दिला दूँगी. अब यह निधि तुमसे कभी नहीं छूटेगी. तुम अपने सभी काम सिद्ध कर लो.

अब फिटकार देऊं कलपना, उलटी तूं अकरमन ।
फिराए खाली करी फजीत, आतमको अति घन ॥ ६४

हे कल्पना ! अब मैं तुझे फटकारती हूँ. तू उलटी और अकर्मण्य है. तूने आत्माको मायाकी ओर फिराकर अत्यधिक अपमानित कर दिया है.

अब करमन तूं हो कलपना, कर सेवा मांहें बिचार ।
धाम धनी मोहे मिले मायामें, लाभ लेऊं मांहें संसार ॥ ६५

हे कल्पना ! अब तू कर्मशील बन जा. दिलमें सेवा करनेका विचार रख. धामधनी मुझे मायामें मिल गए हैं. इसलिए संसारमें रहते हुए भी मैं उनका लाभ ले लूँ.

कहे कलपना ए काम मेरा, करूं नए नए अंग उतपन ।
विध विधकी सेवा देखाऊं, धनी बिलसो होए धन धन ॥ ६६

कल्पना कहती है, मेरा यही काम है कि मैं नए-नए भाव उत्पन्न करती हूँ. मैं सेवाकी विभिन्न रीति दिखा दूँ ताकि धामधनीसे विहार कर तुम धन्य हो जाओ.

बैर राग तुम दोऊ जोधा, सूर साम सामें सिरदार ।
बैर किया तुम वल्लभजीसों, राग किया संसार ॥ ६७

हे बैर और राग ! तुम दोनों बड़े योद्धा हो. एक दूसरेके सामने शूर-पराक्रमी हो किन्तु तुमने धामधनीसे बैर किया और संसारसे राग किया.

बुरी करी तुम अति मोसों, अब मारूं जमधर घाव ।
अब अवसर फेर आयो मेरे, जो भूलाए दियो तुम दाव ॥ ६८

सचमुच तुमने मेरे साथ बहुत बुरा किया है. अब मैं तुम्हें तलवारसे घायल कर दूँ. तुमने जिस अवसरको भुला दिया था वह अब पुनः मेरे हाथ आ गया है.

तुम पर मेरे है मुदार, ऐसी पीठ क्यों दीजे ।
आतम संग मिलाए धनीजी, धन धन मोहे कीजे ॥ ६९

तुम दोनोंसे मुझे बड़ी आशाएँ हैं, किन्तु ऐसे पीठ क्यों फिरा रहे हो ? आओ, आत्माको धनीजीके साथ मिलाकर मुझे धन्य बना दो.

जुध करो तुम दोऊ जोधा, राग आओ धनी धाम पाया ।
विध विध बैर कर कठनाई, जाए बैठो मांहें माया ॥ ७०

तुम दोनों योद्धा बनकर (संसारके साथ) युद्ध करो और प्राप्त हुए धामधनीके

प्रति राग उत्पन्न करो. संसारके साथ कठिनाई पूर्वक बैर कर तुम मायामें जाकर बैठो.

बैर राग कहे क्या गुनाह हमारा, जो जीव ना राखे घर ।
जो ना देखावें धनी विवेकें, तो हम पकडें क्यों कर ॥ ७१

बैर और राग कहते हैं, यदि जीव ही अपने घरको भूल जाए तो हमारा क्या दोष है ? जब हमारा स्वामी ही हमें विवेक न दिखाए तो हम सत्यको कैसे पकड़ सकते हैं ?

राग कहे मैं भली भांते, पीउजीसों करूं रस रीत ।
जीव धनी बीच अंतर टालूं, गुन देऊं सारे जीत ॥ ७२

राग कहता है, मैं भली-भाँति प्रियतमके साथ रमण करूँगा. जीव और उसके धनीके बीचका अन्तर मिटा कर अन्य समस्त गुणोंको जीतकर उन्हें वशीभूत कर दूँगा.

बैर कहे देखियो विध मेरी, संग ना आवे संसार ।
कोई गुन जीवसों करे लडाई, तो मोकों दीजो धिकार ॥ ७३

बैर कहता है, अब मेरी भी रीति देख लो. अब संसार (माया) तुम्हारे निकट भी नहीं आएगा. अब यदि कोई भी गुण जीवके साथ लड़ाई करे तो तुम मुझे धिक्कार देना.

धिक धिक स्वाद कहूं मैं तोको, मोहे मिल्या था मीठा जीवन ।
सोए स्वाद छोड अभागी, जाए पड्या संसार विघन ॥ ७४

हे स्वाद ! मैं तुझे धिक्कार देती हूँ. प्रियतम धनीके साथका मधुर जीवन मुझे प्राप्त हुआ था. हे अभागा स्वाद ! उस स्वादको छोड़कर तू संसारके विघ्नोंमें फँस गया.

अब तूं स्वाद हो सोहागी, ले धनीकी मिठास ।
इन रंग रस आयो जब स्वाद, तब जेहेर होसी सब नास ॥ ७५

हे स्वाद ! अब तू सुहागी बनकर धामधनीकी मधुरता प्राप्त कर. जब तुझे धामधनीके सङ्गका स्वाद आ जाएगा, तब मायाका विष स्वतः नाश हो जाएगा.

स्वाद कहे जब ए सुख आया, तब अभख हुआ मोहजल ।
झूठा रंग सब उड गया, रस रंग भया नेहेचल ॥ ७६

स्वाद कहता है, जब मुझे धामधनीके सुखका आभास मिला तो मोहजलके सब सुख अभक्ष्य हो गए. संसारका झूठा रंग छूट गया और मैं अखण्ड आनन्दमें एकरस हो गया.

फिट फिट भूंडे दुष्ट अभागी, मोहे करायो धनीसों ब्रोध ।
मैं जान्या था सखा मेरा, पर तें कमल फिराया क्रोध ॥ ७७

हे दुष्ट क्रोध ! तू बड़ा अभागा है क्योंकि तूने ही धनीसे मेरा विरोध करवा दिया. मैंने तो तुझे अपना सखा माना था किन्तु तूने मेरे हृदयकमलको उलटी दिशाकी ओर फिरा दिया.

आया नहीं मायाके आडे, तें किया न मेरा काम ।
अवसर आए चूक्या चंडाल, रेहे गई हैडे में हाम ॥ ७८

हे क्रोध ! तू मायाका अवरोधक क्यों नहीं बना ? तूने मेरा कोई भी काम नहीं किया है. हे चण्डाल ! आए हुए अवसरको तू चूक गया. धनी मिलनकी उत्कट अभिलाषा मेरे मनमें ही रह गई.

अब क्रोध तूं कमल फिराओ, उलटाए दे संसार ।
जोधा जोरावर अब क्या देखे, कर दे जै जै कार ॥ ७९

हे क्रोध ! अब तू मेरे हृदय कमलको संसारकी ओरसे उलटा कर परमात्माकी ओर फिरा दे. हे शक्तिशाली योद्धा ! तू अब क्या देख रहा है ? कुछ ऐसा कर जिससे तेरी जय-जयकार हो जाए.

क्रोध कहे मैं अति बलवंता, पर क्या करूं धनी बिन ।
अब उलटाए देऊं कर सीधा, फेर कबहूं ना होवें दुसमन ॥ ८०

क्रोध कहता है, मैं अति शक्तिशाली हूँ परन्तु अपने स्वामी (जीव) के बिना मैं क्या कर सकता हूँ ? अब मैं हृदय कमलको उलटकर सीधा (परमात्माकी ओर उन्मुख) कर दूँ कि फिर सारे गुण कभी भी तुम्हारे दुश्मन नहीं बनेंगे.

अब तोकों कहूं चाक चकरडा, तूं चढ बैठा जीवके सिर ।
तें खाली ऐसा फिराया, रेहे ना सके क्योंए थिर ॥ ८१

कुम्हारके चाककी भाँति घूमने वाले हे मन ! तू तो जीवके सिर पर ही चढ़ बैठा है. तूने मुझे व्यर्थ ही ऐसे फिराया कि मैं कहीं भी स्थिर नहीं रह सका.

अंध अभागी क्यों हुआ ऐसा, तें क्या सुने ना धनी के वचन ।
धनी मिले तूं थिर ना हुआ, फिट फिट भूंडे मन ॥ ८२

हे मन ! तू ऐसा अन्धा और अभागी क्यों हो गया ? क्या तूने सद्गुरुके वचनोंको नहीं सुना था ? धामधनीके मिलने पर भी तू स्थिर न हुआ. हे दुष्ट मन ! तुझे बार-बार धिक्कार है.

समरथ मन तूं बडा जोरावर, क्या कहूं तेरो विस्तार ।
तुझमें फैल विध विधके, अलेखे अपार ॥ ८३

हे मन ! तू तो बड़ा शक्तिशाली है. तेरा क्षेत्र भी बड़ा विस्तृत है. तेरे कार्य भी विभिन्न प्रकारके हैं जो असंख्य तथा अपार कहलाते हैं.

तोसों तो काम बडा है मेरा, मद मस्त मेवार ।
फिर तूं पख पचीस मांहें, बलवंता बेसुमार ॥ ८४

हे मन ! मुझे तुझसे तो बहुत बड़ा काम है. तू मेरा बड़ा मदमस्त पड़ोसी है. हे असाधारण शक्तिशाली मन ! अब तू परमधामके पच्चीस पक्षोंमें विचरण कर.

संकलप विकलप है तुझमें, सेवा कर धनी धाम ।
उमंग अंग आन निसबासर, कर पूरन मन काम ॥ ८५

तुझमें संकल्प और विकल्प दोनों ही हैं. तू तो केवल धामधनीकी ही सेवा कर. दिन-रात अङ्गोंमें उमङ्ग भरकर सभी कामनाओंको पूर्ण कर.

बात बडी कहे मन मेरी, मैं सकल विध जानों ।
मूल बिना करूं सिरदारी, जीवको भी बस आनों ॥ ८६

मन कहता है, मेरी बात तो बहुत ही बड़ी है. मैं सभी विधियाँ (तौर-तरीके)

जानता हूँ. बिना आधारके ही मैं सबका शिरोमणि बन जाता हूँ और जीवको भी अपने वशमें कर लेता हूँ.

जोलों जीव जागे नहीं, तोलों कहा करें हम ।
जोर हमारा तबहीं चले, जब जाग बैठो तुम ॥ ८७

जब तक जीव जागृत नहीं होता तब तक मैं भला कर ही क्या सकता हूँ? हमारा वश तो तभी चल सकता है जब तुम जागृत होकर बैठ जाओगे.

अब तुम विध मेरी देखियो, सब विध करूं रोसन ।
धामधनी आन देऊं अंगमें, तो कहियो सिरदार सबन ॥ ८८

अब तुम जागकर मेरी (मनकी) कार्य-विधिको देखो. मैं सब प्रकारसे तुम्हारे जीवनको प्रकाशित कर दूँगा. यदि मैं धामधनीको तुम्हारे हृदयमें विराजमान करवा दूँ तो तुम मुझे सबका शिरोमणि समझना.

कोई जो कदर जाने मेरी, अंग अंदर आनूं वतन ।
अनेक विध सेवा उपजाऊं, धनी न्यारे ना होवे छिन ॥ ८९

यदि कोई मेरा मूल्य समझेंगे तो मैं उनके हृदयमें परमधाम प्रकट कर दूँ. अनेक प्रकारसे सेवाकी ऐसी विधियाँ प्रकट कर दूँ कि जिससे एक क्षणके लिए भी धनी उनसे अलग न हो सकें.

बुरी करी तुम भरम भ्रांतडी, यों ना करे दूजा कोए ।
तारतम जोत उदोत के आगे, संसे कबूं ना होए ॥ ९०

हे भ्रम और भ्रान्ति ! तुमने मेरे साथ बड़ा ही बुरा व्यवहार किया है. ऐसा तो कोई भी किसीके साथ नहीं करता. तारतम ज्ञानकी ज्योतिके प्रखर तेजके समक्ष कोई संशय ही नहीं रह सकता.

संसे भ्रांतके आकार, जो कदी होत तुमारे ।
टूक टूक करूं मैं तिल तिल, फेर फेर तीखी तरवारे ॥ ९१

हे संशय और भ्रान्ति ! यदि तुम दोनोंका कोई आकार होता, तो मैं बार-बार तलवारकी तीक्ष्ण धारसे काटकर तिलके समान टुकड़े-टुकड़े कर डालता.

अब जोर कर जाओ मायामें, इनके संग होए तुम ।
उजाले तारतमके पेहेचान, ज्यों मूल सरूप देखें हम ॥ ९२

अब तुम यत्नपूर्वक मायाकी ओर जाओ और सदैव मायाके ही संग रहो, जिससे तारतमके प्रकाशमें धामधनीको पहचान कर हम अपना मूल स्वरूप (पर आत्मा) देख लें.

अंतर भ्रांत कहे तुम फेर फेर, मार मार देखाओ डर ।
नींद कर बैठे इन जिमी में, सो आप ना करो खबर ॥ ९३

संशय और भ्रान्ति कहते हैं, तुम मुझे बार-बार मारनेका भय दिखा रहे हो जबकि तुम स्वयं यहाँ पर भ्रमकी गहरी निद्रामें पड़े हो और स्वयंकी भी सुधि नहीं रख रहे हो.

घर का धनी अखंड सुख पावे, सो इत क्यों सोवे करारे ।
गफलतको न छोडे आपे, फेर फेर हमको मारे ॥ ९४

इस शरीररूपी घरका स्वामी (जीव) इस संसारमें अखण्ड सुख प्राप्त कर सकता हो तो वह यहाँ चैनसे कैसे सो सकता है ? तुम स्वयं तो झूठी नींदको छोड़ते ही नहीं हो और बार-बार मुझे मार रहे हो.

अब इन तारतमके उजाले, करूं तारतम रोसन ।
नेहेचल सुख लेओ तुम सांचे, और भी देऊं सबन ॥ ९५

भ्रम व भ्रान्ति कहते हैं, हे जीव ! तुम जागृत हो गए हो. इसलिए अब तारतमके प्रकाशसे सबको ज्ञान प्रदान करो. स्वयं भी अखण्ड सुख ग्रहण करो एवं दूसरोंको भी इससे लाभान्वित करो.

फिट फिट लज्या तूं भई लौकिक, बांधे कबीले सो करम ।
धनी मेरे मोहे आये बुलावन, तित तोहे न आई सरम ॥ ९६

हे लज्जा ! तुझे भी फटकार है. तू लौकिक हो कर अपने ही परिवारजनोंके कर्मोंसे बँध गई. मेरे स्वामी जब मुझे बुलाने आए तब तो तुझे लाज तक नहीं आई ?

कहा कियो तें दुष्ट पापनी, ऐसी ना करे कोए ।
घर धामधनी के आगे, करी सरमंदी मोहे ॥ ९७

हे दुष्ट पापिनी ! तूने यह क्या किया ? ऐसा तो कभी कोई नहीं करता. तूने तो मुझे अपने ही घर-परमधाममें धामधनीके सामने लज्जित कर दिया.

अब सरमंदी कहूं मैं तोकों, तूं देख पर आतम सगाई ।
बडा अवसर पहलें तूं चूकी, अब फेर आई जोगवाई ॥ ९८

हे लज्जा ! अब मैं तुझे क्या कहूँ ? अब तो तू अपनी आत्माके सम्बन्धको पहचान ले. पहले तू बड़ा अवसर चूक गई है. अब पुनः ऐसा सुअवसर प्राप्त हुआ है.

कहे लज्या मैं पहेले भूली, अब सरन धनी ना छोडूं ।
सिर मायाका भानके, पीउ सों मुख ना मोडूं ॥ ९९

लज्जा कहती है, मैं पहले धामधनीको भूल गई थी परन्तु अब धनीकी शरण कदापि नहीं छोडूँगी. मायाका अस्तित्व मिटाकर धामधनीसे कभी मुँह नहीं मोडूँगी.

फिट फिट आसा तूं भई माया की, बैठी मोहजलमें आए ।
मैं माया में अखंड फल पाया, सो मोहे दियो हराए ॥ १००

हे आशा ! तुझे धिक्कार है. तू मायाकी होकर मोहजल (संसार) में आकर बैठ गई. मैंने मायामें सद्गुरुरूपी अखण्ड फल प्राप्त किया था, किन्तु तूने तो मुझे उससे वञ्चित ही कर दिया.

अखंड धनी फल छोडके, निरफल माया झूठ लई ।
ए सिर गुनाह हुआ जीव के, तोको सिखापन ना दई ॥ १०१

तुमने धामधनीरूपी अखण्ड फलको छोड़कर व्यर्थ ही झूठी मायाकी आशा रखी है. तुझे समय पर शिक्षा न देनेका दोष इस जीवको लग गया है.

कहे आसा मोहे दई जगाये, निकट न जाऊं मोहजल ।
इन बल मांहे कमी न राखूं, लागी आतम आसा सुफल ॥ १०२

आशा कहती है, तुमने मुझे जागृत कर दिया है. अब मैं मोह जल (संसार)

के पास कभी नहीं जाऊँगी. मैं अपने प्रयासमें कुछ कमी नहीं रखूँगी. आत्माकी आशाको सफल बनानेमें लग गई हूँ.

गुन गरीबन आई अकरमन, ना भई सनमुख सावधान ।
लाहा लीजे दौड धनीका, सो दिया गरीबी भान ॥ १०३

हे गरीबी दीनता ! तू अकर्मण्य होकर मेरे पास आई. धामधनीके सामने आकर भी तू सावधान नहीं हुई, दौड़कर धनी मिलनका लाभ लेनेके समयमें हे दीनता ! तूने वह सुअवसर गँवा दिया.

किन विध कहूं या सुख की, फिट फिट भूंडे अचेत ।
तुझ बैठे न आई तिवरता, ना तो ए सुख लेत ॥ १०४

हे दुष्ट अचेतना ! मैं तुझे धनी मिलनके सुखकी बात क्या बताऊँ ? तेरे रहते मुझमें तीव्रता न आ पाई, अन्यथा मैं यह सुख अवश्य प्राप्त कर लेती.

कहे गरीबी मैं माया की, मैं बैठों माया माहें ।
लीजो लाह सुख नेहचल का, श्री धाम धनी है जांहें ॥ १०५

दीनता कहती है, मैं तो मायासे ही उत्पन्न हूँ और मायामें ही बैठी रहूँगी. हे जीव ! तुम उस अखण्ड घरका लाभ प्राप्त करो जहाँ स्वयं धामधनी बैठे हैं.

फिट फिट भूंडी न आई तिवरता, मोहे मिले थे धामधनी ।
ऐसा विलास खोया तें मेरा, बोहोत बुरी करी घनी ॥ १०६

हे तीव्रता ! तुझे फटकार है. जब धामधनी मुझे मिले थे तब तू न आई. तूने उनकी निकटताके सारे आनन्दको खोकर मेरा बहुत अहित किया.

फेर अवसर आयो है मेरे, चित चेतन कीजे बल ।
रात दिन जागाये जीव को, जिन दे मिलने पल ॥ १०७

अब पुनः वह अवसर आया है. तू यत्नपूर्वक मेरे जीवको जागृत कर. रात-दिन उसे जगाए रख और उसकी पलकें भी मुँदने न दे.

तुझ में बल है सावचेती, चित चेतन अति रोसन ।
पर आतम बस कर दे आतमां, ना होए अन्तराय एक छिन ॥ १०८

हे सतर्कता ! तुझमें इतनी अधिक शक्ति है कि तुझसे प्रकाशित होकर मेरा चित्त सचेतन बन सकता है. अब तू मेरी आत्माको जगाकर पर-आत्माके वशमें कर दे, अर्थात् इसे पर- आत्मामें जागृत कर, जिससे एक पलके लिए भी मुझे धामधनीसे दूरी (अन्तराय) का अनुभव न हो.

सील संतोष आओ ढिग मेरे, बांधो सागर आडी पाल ।
गुन सारे हुए अग्यामें, पीछे रह्या न कछू जंजाल ॥ १०९

हे मेरे शील और संतोष ! तुम मेरे निकट आओ. भवसागरके प्रभावको रोकनेके लिए बाँध बना लो. अब तो सभी गुण मेरी आज्ञामें आ गए हैं, पीछे कोई जञ्जाल शेष नहीं रहा.

सील कहे संतोष सुनो, आपन हुए माया के पाल ।
कै बहावे पहाड पूर सागरके, मांहें लेहेरें बेहेवट नताल ॥ ११०

शील कहता है, हे सन्तोष ! सुनो, अब हम मायाका आवेग रोकने वाले बाँध बन गए हैं. भवसागरका यह प्रबल प्रवाह जैसे अनेकों पहाड़ोंको बहा सकता है, उसी प्रकार हृदयकी काम,क्रोध रूपी लहरें भी गहन एवं विकट हैं.

भवरियां मांहें बेसुमार, लेहेरां मेर समान ।
मछ लडे बडे मोहजलके, करनी पाल इस ठाम ॥ १११

इस भवसागरमें असंख्य भँवर हैं और पर्वतके समान ऊँची लहरें उठतीं हैं. इसमें काम, क्रोधरूपी बड़े-बड़े मगरमच्छ लड़-झगड़ रहे हैं. ऐसे समुद्रमें हमें बाँध बनाना है.

अब बांधनी पाल खरी करनी, ज्यों ना खसे लगार ।
पीछे जल जोर बडा ऊपर अपने, तब सामी सोभा होसी अपार ॥ ११२

अब इस बाँधको भली प्रकारसे बाँधना है, जिससे यह जरा भी खिसक न सके. अपने ऊपर जोरसे बढ़ रहे जल प्रवाहको रोक दिया जाए तभी सबके

सामने हमारी अत्यधिक शोभा होगी.

एह पाल हम बांधी जीव जी, पर तुम जाग करो सावचेत ।
फेर नहीं आवे ऐसा समया, सोभा ल्यो साथमें इत ॥ ११३

हे जीव ! हमने यह बाँध (पाल) बाँध ली है, किन्तु तुम स्वयं भी जागकर सावचेत हो जाओ. पुनः ऐसा अवसर नहीं आएगा. यहीं पर सुन्दरसाथमें अधिक शोभा प्राप्त करो.

जाग जीव तूं जोरावर, क्या देऊं तोकों गारी ।
तें होए चांडाल अवसर खोया, जीती बाजी हारी ॥ ११४

हे शक्तिशाली जीव ! तू जाग जा. अब मैं तुझे क्या गाली दूँ ? तूने चण्डाल बनकर ऐसा सुअवसर (मानव जीवन) खो दिया, जिससे जीती हुई बाजीको हारना पड़ा.

कठनाई मैं देखी तेरी, तूं निठुर निपट अपार ।
थके धनी तोहे धम धम के, पर तें गल्या नहीं निरधार ॥ ११५

मैंने तेरी कठोरता देख ली है. तू तो निपट कठोर और निष्ठुर है. धामधनी तुझे कह-कहकर थक गए किन्तु तू जरा भी द्रवित नहीं हुआ.

प्रकरण २० चौपाई ५०७

जीवको प्रबोध

सुन मेरे जीव कहूँ बरतांत, तोकों एक देऊं द्रष्टांत ।
सो तूं सुनियो एकै चित, तोसों कहत हों करके हित ॥ १

हे मेरे जीव ! तू सुन, तुझे मैं एक दृष्टान्त देकर अपना वृत्तान्त कहती हूँ. तू एकचित्त होकर उसे सुन. मैं तुझे स्नेह पूर्वक यह बात कह रही हूँ.

परीछतें यों पूछ्यो प्रस्न, सुकजी मोंको कहो वचन ।
चौदे भवनमें बडा जोए, मोंको उत्तर दीजे सोए ॥ २

राजा परीक्षितने श्री शुकदेवमुनिसे इस प्रकार प्रश्न पूछा, मुनिजी मुझे कहिए कि चौदह लोकोंमें सबसे बड़ा कौन है ?

तब सुकजी यों बोले परमान, लीजो वचन उत्तम कर जान ।
चौदे भवनमें बडा सोए, बडी मतका धनी जोए ॥ ३

तब शुकदेवजीने प्रमाण देकर इस प्रकार कहा, मेरे इन वचनोंको तुम अति उत्तम समझकर ग्रहण करो. चौदह लोकोंमें वही व्यक्ति बड़ा है जो महान बुद्धि (मति) का धनी (स्वामी) है.

भी राजाऐ पूछा यों, बडी मत सो जानिए क्यों ।
बडी मतको कहूं विचार, लीजो राजा सबको सार ॥ ४

राजा परीक्षितने पुनः पूछा, हे मुनिजी ! बड़ी मति (बुद्धि) वालेको कैसे जाना जाए ? तब शुकदेवजीने कहा, हे परीक्षित ! मैं बड़ी मतकी बात विवेकपूर्वक कहता हूँ, तुम उन सब वचनोंका सार ग्रहण करो.

बडी मत सो कहिए ताए, श्रीकृस्नजीसों प्रेम उपजाए ।
मतकी मत तो ए है सार, और मतको कहूं विचार ॥ ५

हे राजन ! महान बुद्धि (बड़ी मति) वाला उसे ही कहा जाए जिसके मनमें श्री कृष्णजीके प्रति प्रेम उत्पन्न हो. सबसे बड़ी बुद्धिका सार यही है. अब मैं अन्य बुद्धिकी बात करता हूँ.

बिना श्रीकृस्नजी जेती मत, सो तूं जानियो सबे कुमत ।
कुमत सो कहिए किनको, सबथें बुरी जानिए तिनको ॥ ६

श्रीकृष्णजीके बिना जितनी भी मति हैं उन सबको तुम कुमति ही जानो. कुमति उसीको कहना चाहिए जो सबसे बुरी (निन्दित)होती है.

ऐसो तिनको कहा बरतांत, सो भी राजा तोकों कहूं द्रष्टांत ।
सुन राजा कहूं सो जुगत, जासों पेहेचान होवे दोऊ मत ॥ ७

श्री शुकदेवजीने राजा परीक्षितको एक वृत्तान्त सुनाते हुए कहा, हे राजा ! मैं तुझे एक और दृष्टान्त देता हूँ. मैं तुझे ऐसी युक्ति कहता हूँ, जिससे दोनों प्रकारकी मतिकी पहचान हो जाए.

श्रीकृस्नजीसों प्रेम करे बडी मत, सो पोंहचावे अखंड घर जित ।
ताए आडो न आवे भवसागर, सो अखंड सुख पावे निज घर ॥ ८

श्रीकृष्णजीसे प्रेम करने वाली बुद्धि बड़ीमति (महामति) है. वह जीवको अखण्ड घरमें पहुँचा देती है. उसकी राहमें भवसागर बाधा नहीं बनता. नित्य ही वह अपने घरका अखण्ड सुख प्राप्त करती है.

ए सुख या मुख कह्यो न जाए, याको अनभवी जाने ताए ।
ए कुमत कहिए तिनसे कहा होए, अंधकूपमें पडिया सोए ॥ ९

इन सुखोंका वर्णन इस मुखसे नहीं हो सकता. अनुभवी व्यक्ति ही इस सुखको जान सकते हैं, जिसे कुमति कहा गया है उसके वशीभूत होनेसे क्या होता है ? ऐसी बुद्धि वाला अन्धकूप (नामक नरक) में पड़ जाता है.

सब दुखोंमें बुरा ए दुख, कुमत करे धनीसों बेमुख ।
केतो कहूं या दुख को विस्तार, जाके उलटे अंग इंद्री विकार ॥ १०

सब दुःखोंसे बुरा दुःख यही है कि कुमति परमात्मासे विमुख कर देती है. इस दुःखका मैं विस्तारसे कितना वर्णन करूँ ? इसके कारण सभी गुण अंग इन्द्रियाँ उलटी होकर विकारी हो जातीं हैं.

दोऊ मतको कह्यो प्रकार, ए ब्रह्मसृष्टि करें विचार ।
जाको जाग्रत है बडी बुध, चेते अवसर जाके हिरदे सुध ॥ ११

मैंने दोनों प्रकारकी मतिका विवेचन कर दिया है. ब्रह्मसृष्टि उन पर विचार करेंगी. जिसमें बड़ी बुद्धि (महामति) जागृत हो जाएगी वह हृदयमें सुधि प्राप्तिकर इस सुअवसरमें सचेत हो जाएगी.

ए सुकजीके कहे वचन, नीके फिकर कर देखो मन ।
बोहोत फिकरकी नहीं ए बात, ए समया हाथ ताली दिए जात ॥ १२

शुकदेवमुनिके कहे हुए ये वचन हैं. इनको भली-भाँति विचार कर आत्मसात् करो. इस पर अत्यधिक सोचनेकी भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि समय तो हाथ ताली देकर (थोड़ा-थोड़ा कर) बीतता जा रहा है.

तेरी गिनती बांधी स्वांसों स्वांस, तिनको भी नाहीं विस्वास ।
केते रहे बाकी तेरे स्वांस, एक स्वांसकी भी नाहीं आस ॥ १३

तेरी आयुकी गिनती श्वासोंसे बँधी हुई है. इन श्वासोंका भी भरोसा नहीं है. अब तेरे श्वास कितने बचे हैं ? जबकि अगले एक श्वासकी भी आशा नहीं है.

स्वांस तो छिनमें कै आवे जाए, गए अवसर पीछे कछू न बसाए ।
तिन कारन सुन रे जीव सही, बडी मत मैं तोकों कही ॥ १४

श्वास तो एक क्षणमें कितनी ही बार आते जाते हैं परन्तु अवसर बीत जाने पर किसीका वश नहीं चलता. इसलिए हे जीव ! तू सुन, मैंने तुझे बड़ी बुद्धि (वाला) कहा है.

जो जोगवाई है तेरे हाथ, सो या मुखथें कही न जात ।
एते दिन तें ना करी पेहेचान, तैसी करी ज्यों करे अजान ॥ १५

तेरे हाथमें मानव जीवनरूप साधन है, उनका महत्त्व इस मुखसे कहा नहीं जाता. इतने दिनों तक तूने नहीं पहचाना. तूने ऐसा आचरण किया जैसे कोई अनजान व्यक्ति करता हो.

अब ए वचन विचारो मन, साख दई सुकजीके वचन ।
भी वचन कहूं सुन मेरे जीउ, जिन छोडे चरन छिन पीउ ॥ १६

अब तू इन वचनों पर मनसे विचार कर. मैंने तुझे शुकदेवजीके वचनोंकी साक्षी दी है. हे मेरे जीव ! तू सुन, तुझे मैं और भी वचन कह रही हूँ. एक क्षणके लिए भी धामधनीके चरणोंको छोड़ना नहीं.

निजघर पीउको लीजे प्रकास, ज्यों बृथा न जाए एक स्वांस ।
ग्रह गुन इन्द्री भर तूं पाओ, ऐसा फेर न पाइए दाओ ॥ १७

परमधाम और धामधनीका प्रकाश धारण करो ताकि एक श्वास भी व्यर्थ न जाए. अपने गुण, अंग, इन्द्रियोंको वशीभूत करके आगे कदम बढ़ाओ. इस प्रकारका अवसर (दाव) पुनः हाथ नहीं आएगा.

भरम भानके कहे वचन, बडी मत ले ज्यों होए धन धन ।
ए भरमकी नींद उडाएके दे, पेहेचान पीउकी नीके कर ले ॥ १८

भ्रमका निवारण करके मैंने तुझे ये वचन कहे हैं. बड़ी मतको ग्रहण कर धन्य बन जा. इस भ्रमकी निद्राको उड़ा दे और भली-भाँति परमात्माकी पहचान कर ले.

मुखथे वचन कहे तो कहा, जो छेदके अजूं ना निकस्या ।
अगलोंने किव करी अनेक, तें भी कछुक करी विसेक ॥ १९

मुखसे वचन कहने मात्रसे क्या होगा जब तक वे हृदयको बेधकर न निकल जाएँ. पूर्वके लोगोंने भी अनेक कविताएँ लिखीं हैं. यदि तूने भी इसीमें कुछ विशेषता (विशिष्ट काव्य रचना) की तो यह कौन-सी बड़ी बात हो गई ?

पर सांचा तो जो होए गलतान, तो भले मुख निकसी ए बान ।
ए बानी मेरी नाहीं यों, और किव करत हैं ज्यों ॥ २०

परन्तु सत्य तो यह है कि इन वचनोंको सुनकर यदि जीव द्रवित हो जाए तब मेरे मुखसे विनिसृत यह वाणी सार्थक मानी जाएगी. यह मेरी वाणी ऐसी (बुद्धिकी उपज) नहीं है जैसा कि अन्य लोग काव्योंकी रचना करते हैं.

ए गुसा किया मेरे जीवके सिर, ना तो और किवकी भांत कहूं क्यों कर ।
आतम मेरी है अति सुजान, अक्षरातीत निध करी पेहेचान ॥ २१

इस प्रकारके रोषपूर्ण वचन मेरे जीवके लिए कहे गए हैं, अन्यथा अन्य कवियों (उपदेशकों) की भाँति मैं क्यों कहती ? मेरी आत्मा तो अति विज्ञ है. उसने अक्षरातीत निधि (धामधनी) को पहचान लिया है.

अब सांचा तो जो करे रोसन, जोत पहोंची जाए चौदे भवन ।
ऐ समया तो ऐसा मिल्या आए, चौदे भवनमें जोत न समाए ॥ २२

सच्चा ज्ञान वही है जो आत्माको प्रकाशित कर दे और उस ज्ञानकी ज्योति चौदह लोकोंमें पहुँच जाए. यह समय तो ऐसा प्राप्त हुआ है कि चौदह लोकोंमें इस (तारतम) ज्ञानकी ज्योति समाती नहीं है.

यों हम ना करें तो और कौन करे, धनी हमारे कारन दूजा देह धरे ।
आतम मेरी निजधामकी सत, सो क्यों ना कर उजाला अत ॥ २३

यदि हम ऐसा (इस तारतम ज्ञानको फैलानेका) कार्य नहीं करेंगे तो अन्य कौन करेगा ? सद्‌गुरु धनीने हमारे लिए ही दूसरी बार शरीर धारण किया है. यदि मेरी आत्मा सचमुच परमधामकी है तो वह इस संसारमें परमधामके ज्ञानका प्रकाश क्यों नहीं फैलाएगी ?

श्री सुन्दरबाईके चरन प्रताप, प्रगट कियो मैं अपनों आप ।
मोंसों गुनवंती बाइएं किए गुन, साथें भी किए अति घन ॥ २४

सद्‌गुरु श्री देवचन्द्रजी (सुन्दरबाई) के चरणोंके प्रतापसे मैंने स्वयंको प्रकट किया है. मुझ पर श्रीगोवर्धन ठाकुर (गुणवन्तीबाई) ने बड़े उपकार किए हैं और सुन्दरसाथने भी मुझ पर बड़ा अनुग्रह किया है.

जोत करूं धनीकी दया, ए अंदर आएके कहया ।
उडाए दियो सबको अंधेर, काढयो सबको उलटो फेर ॥ २५

अब मैं धनीकी दयाको प्रकाशित करती हूँ. उन्होंने मेरे हृदयमें बैठकर ये वचन कहे हैं. उन्होंने इन वचनोंके द्वारा सबके अज्ञानरूपी अन्धकारको दूर किया और संसारके समस्त जीवोंके जन्म-मरणके उलटे चक्रको समाप्त कर दिया.

इन्द्रावती प्रगट भई पीउ पास, एक भई करे प्रकास ।
अखंड धाम धनी उजास, जाग जागनी खेले रास ॥ २६

इन्द्रावती पिया (सद्‌गुरु) के साथ प्रकट हुई है. वह उनसे एकाकार होकर इन वचनोंको प्रकाशित कर रही है. धामधनीके ज्ञानके अखण्ड प्रकाशसे जागृत होकर जागनी रास खेल रही है.

प्रकरण २१ चौपाई ५३३

आंखां खोल तूं आप अपनी, निरख धनी श्री धाम ।
ले खुसवास याद कर, बांध गोली प्रेम काम ॥ १

हे मेरी आत्मा ! तू स्वयं अपनी अन्तर्दृष्टि खोलकर परमधामके धनीको

निहार. परमधामको याद कर वहाँकी सुगन्धि ग्रहण कर अपनी कामनाओंको प्रेमपूर्वक धनीके चरणोंमें लगा.

प्रेम प्याला भर भर पीऊं, त्रैलोकी छाक छकाऊं ।
चौदे भवनमें करूं उजाला, फोड ब्रह्मांड पीउ पास जाऊं ॥ २

मेरी इच्छा है कि मैं धनीके प्रेमके प्याले भर-भर कर पी लूँ और फिर उस प्रेमामृतसे तीनों लोकोंकी तृषाको शान्तकर दूँ. चौदह लोकोंमें इस प्रेमको प्रकाशित कर ब्रह्माण्डको भी फोड़कर मैं अपने प्रियतमके पास पहुँच जाऊँ.

वाचा मुख बोले तूं वानी, कीजो हांस विलास ।
श्रवना तूं संभार आपनी, सुन धनीको प्रकास ॥ ३

हे वाचा ! तू अपनी वाणीसे धनीजीके गुणोंका उच्चारण कर और उनसे हास-परिहास कर. हे श्रवण ! तुम स्वयंको सम्हालकर धामधनीके प्रकाश स्वरूप तारतम ज्ञानको सुन.

कहे विचार जीवके अंग, तुम धनी देखाया जेह ।
जो कदी ब्रह्मांड प्रले होवे, तो भी ना छोडूं पीउ नेह ॥ ४

जीवके सभी अंग विचार कर कहते हैं कि तुमने हमें धनीकी पहचान करवाई है. यदि कभी ब्रह्माण्डका प्रलय भी हो जाए तो भी हम धाम धनीका स्नेह नहीं छोड़ेंगे.

खोल आंखां तूं हो सावचेत, पेहेचान पीउ चित ल्याए ।
ले गुन तूं हो सनमुख, देख परदा उडाए ॥ ५

मेरे जीव ! तू आँखें खोलकर सावचेत हो जा और दिलसे अपने धनीको पहचान ले. तू उनके सम्मुख रहकर उनके गुणोंको ग्रहण कर और अज्ञानके पर्देको उड़ाकर उनकी ओर निहार.

एते दिन वृथा गमाए, किया अधमका काम ।
करम चंडालन हुई मैं ऐसी, ना पेहेचाने धनी श्री धाम ॥ ६

इतने दिनोंको व्यर्थ ही गँवाकर तूने बड़ी नीचताका काम किया है, जिसके

कारण मैं चण्डालकर्म करनेवाली हो गई और मैंने अपने परमधामके धनीको भी नहीं पहचाना.

भट परो मेरे जीव अभागी, भट परो चतुराई ।
भट परो मेरे गुन प्रकृती, जिन बूझी ना मूल सगाई ॥ ७

हे मेरे अभागे जीव ! तुझे धिक्कार है. मेरी चतुराईको भी धिक्कार है. मेरे सारे गुण और स्वभावको भी धिक्कार है जिन्होंने धामधनीके मूल सम्बन्धको नहीं पहचाना.

आग परो तिन तेज बलको, आग परो रूप रंग ।
धिक धिक परो तिन ग्यानको, जिन पाया नहीं प्रसंग ॥ ८

उस तेज, बल, रूप और रंग सबको आग लग जाए. उस ज्ञानको भी धिक्कार है, जो धामधनीका सङ्ग नहीं कर सका.

धिक धिक मेरी पांचो इन्द्री, धिक धिक परो मेरी देह ।
श्री स्याम सुन्दर वर छोडके, संसारसों कियो सनेह ॥ ९

मेरी पाँचों इन्द्रियोंको धिक्कार है, मेरे शरीरको भी धिक्कार है क्योंकि श्याम सुन्दर जैसे सर्वगुण सम्पन्न वर (धनी) को छोड़कर इन्होंने इस कुटिल संसारसे स्नेह किया.

धिक धिक परो मेरे सब अंगों, जो न आए धनीके काम ।
बिना पेहेचाने डारे उलटे, ना पाए धनी श्री धाम ॥ १०

मेरे सभी अंगोंको धिक्कार है जो धनीजीके काम कभी नहीं आए. पहचाने बिना ही प्रतिकूल मार्ग पर चलनेसे धामधनीको पानेसे वे वञ्चित रह गए.

तुम तुमारे गुन ना छोडे, मैं बोहोत करी दुष्टाई ।
मैं तो करम किए अति नीचे, पर तुम राखी मूल सगाई ॥ ११

हे सद्गुरु धनी ! आपने अपने गुणों (उपकार) को कभी नहीं छोड़ा, मैंने तो (आपको न पहचानकर) बहुत दुष्टता की है. मैंने नीच कार्य किए हैं फिर भी आपने अपने मूल सम्बन्धको बनाए रखा.

वारने जाऊं वनराय वल्लभकी, जाकी सुख सीतल छाया ।
देखो ए बन गुन भौ औषदी, देखें दूर जाए माया ॥ १

मैं वनराज शमीवृक्ष-खीजड़ा वृक्ष (जिसको सद्गुरुने अपने हाथोंसे बोया था एवं जो आज भी श्री ५ नवतनपुरीधाममें हरे-भरे रूपमें सुशोभित है) पर स्वयं समर्पित हो जाती हूँ जिसकी छाया सुखमय एवं शीतल है. हे सुन्दरसाथजी ! इस वन (वृक्ष) को देखो, यह भवसागरसे पार उतारनेकी औषधि है. इसके दर्शन मात्रसे ही माया दूर हो जाती है.

जाऊं वारने आंगने बेलूं, जित बैठो संझा समे साथ ।
बातें होत चलने धामकी, घर पैडा देखाया प्राणनाथ ॥ २

नवतनपुरीधामके आँगन और उपवनकी उस रेत पर मैं स्वयंको समर्पित कर दूँ, जहाँ सन्ध्याके समय सद्गुरु अपने समस्त सुन्दरसाथको लेकर बैठते थे. वहाँ पर परमधाम चलनेकी बातें होती थीं एवं मेरे प्राणनाथ (सद्गुरु) वहीं पर परमधाम जानेका मार्ग दिखाया करते थे.

भी बलि जाऊं आंगने, आगे पीछे सब साज ।
जहां बैठो उठो पाउं धरो, धनी मेरे श्री राज ॥ ३

मैं पुनः उस आँगन पर बलिहारी जाऊँ, जहाँ आगे पीछे सेवा और आनन्दके सभी साधन उपलब्ध थे और जहाँ पर मेरे प्रियतम श्री राजजीके स्वरूप मेरे सद्गुरु उठते बैठते और चलते फिरते थे.

बलिहारी जाऊं बोहोत बेर, देहरी मंदिर द्वार ।
वारने जाऊं इन जिमीके, जहां बसत मेरे आधार ॥ ४

सद्गुरु धनी जहाँ विराजमान रहे, उस मन्दिरके द्वार और देहरी (पर्णकुटी) पर मैं बार-बार बलिहारी जाऊँ. इस भूमि पर मैं न्योछावर हो जाती हूँ जहाँ मेरे प्राणाधार विराजमान हैं.

बलि जाऊं पाटी पलंग सिराने, चादर सिरख तलाई ।
पौढत पीउजी ओढत पिछौरी, ऊपर चंद्रवा चटकाई ॥ ५

मैं उस पलंग, पाटी, तकिया, गद्दा, चादर और बिछौने पर बलिहारी जाऊँ,

जहाँ पर प्रियतम सद्गुरु पिछौरी ओढकर शयन करते थे. उस पलङ्गके ऊपर सुन्दर चँदवा तना हुआ रहता था.

बलि बलि जाऊं दुलीचा चाकला, बलि जाऊं मंदिर के थंभ ।
जिन थंभों कर धनी अपने, जुगते दिए बंध ॥ ६

मैं उस गलीचे और आसन पर बलिहारी जाऊँ और साथ ही मन्दिरके उन स्तम्भों पर न्योछावर हो जाऊँ जिन स्तम्भों पर सद्गुरु धनीने अपने हाथोंसे बड़ी कुशलता पूर्वक बन्धन बाँधे थे.

[विक्रम सम्वत् सोलहसौ सतासीके कार्तिक महीनेमें सद्गुरुने अपने कर-कमलोंसे श्री ५ नवतनपुरीधामकी स्थापना की. इसी धामकी महिमाका वर्णन इन चौपाइयोंके द्वारा श्री प्राणनाथजी अपने श्रीमुखसे कर रहे हैं और उस पर स्वयंको समर्पित कर रहे हैं.]

बैठत हो जित महाबलिया, बलि बलि जाऊं ठौर तिन ।
साथ सबेरा आएके बैठत, करो धाम धनी बरनन ॥ ७

सर्वशक्तिमान् (महाबली) मेरे सद्गुरु जिस स्थान पर विराजते थे (वह गादी स्थान) एवं प्रातःकाल जहाँ पर सुन्दरसाथ आकर बैठते थे और सद्गुरु स्वयं परमधाम एवं श्री राजजीकी चर्चा करते थे, मैं उस स्थान (निज मन्दिर) पर स्वयंको समर्पित करती हूँ.

देखत मंदिरमें कै बिध, वस्त सकल पूरन ।
टूक टूक कर वार डारों, मेरे जीवके और तन ॥ ८

सद्गुरु द्वारा स्थापित जिस मन्दिरमें सभी प्रकारकी वस्तुएँ परिपूर्ण रहती थीं. ऐसे मन्दिर एवं उन वस्तुओं पर मैं अपने, प्राण एवं शरीर टुकड़े-टुकड़े कर न्योछावर कर दूँ.

भले तुम देह धरी मुझ कारन, कर रोसन टाल्यो भरम ।
जीव मेरा बोहोत सखत था, मेहेर नजरों भया नरम ॥ ९

हे सद्गुरु ! मुझ पर अनुग्रह करके आपने मेरे लिए ही देह धारण किया और तारतम ज्ञानका प्रकाश फैलाकर मेरा भ्रम मिटा दिया. मेरा जीव तो

बड़ा कठोर हो चुका था किन्तु आपकी कृपा दृष्टिसे यह विनम्र (सरल) बन गया है.

बलि जाऊं मैं चरन कमल की, बलि जाऊं मीठे मुख ।
बलिहारी सोभा सुन्दरता, जिन दरसन उपजत सुख ॥ १०

मैं सद्गुरुके चरण कमलों और मीठे मुखारविंद पर बलिहारी होती हूँ. सद्गुरुके मधुर सौन्दर्यकी शोभा पर मैं समर्पित हो जाती हूँ, जिनके दर्शन मात्रसे मुझे अनुपम सुख प्राप्त होता है.

भी बलि जाऊं हस्तकमलकी, बलि जाऊं वस्तर ।
लेऊं बलैया भूषनकी, बलि जाऊं सीतल नजर ॥ ११

मैं सद्गुरु धनीके हस्तकमल, वस्त्र-भूषण और उनकी शीतल दृष्टि पर स्वयंको समर्पित करती हूँ.

वार डारूं मैं नासिका पर, और वार डारूं श्रवन ।
वार डारूं मैं नख सिख पर, जो सनकूल हैं अति घन ॥ १२

ऐसे सदैव प्रसन्न बदन सद्गुरुकी नासिका, श्रवण और आत्माको सुख प्रदान करने वाली उनकी नख-शिख शोभा पर मैं न्योछावर हो जाऊँ.

सेवा करत बाई हीरबाई, उछव रसोई जित ।
अंतरगत तुम नित आरोगो, मैं बलि बलि जाऊं तित ॥ १३

हीरबाई सद्गुरुके लिए भोजन बनानेकी सेवा करती है. जहाँ पर नित्य रसोईका उत्सव होता है और सद्गुरु धनी श्रीकृष्णके रूपमें स्वयं प्रकट होकर भोजन ग्रहण करते थे, उस पुण्यस्थली पर मैं बलिहारी हो जाती हूँ.

वार डारूं मैं बानी पर, जो वचन केहेत रसाल ।
साथको चरने राखके, सागर आडी बांधत हो पाल ॥ १४

आपकी वाणी पर मैं न्योछावर हो जाऊँ. आप बड़े मधुर स्वरमें प्रेममयी बातें करते थे. आप सुन्दरसाथको अपने चरणोंमें रखकर भवसागरसे बचानेके लिए ज्ञानरूपी बाँध (पाल) बाँध देते थे.

करत हो कृपा कै विध की, मीठी अति मेहेरबानी ।
साचे लाड लडाए सुन्दर, ल्याए वतन की बानी ॥ १५

आप कई प्रकारकी कृपा करते हैं. आपके अनुग्रह बड़े मधुर हैं. आपने सुन्दरसाथसे सच्चा स्नेह किया और उनके लिए आप परमधामकी अखण्ड वाणी ले आए.

मैं सेवा करूं सरवा अंगों, देऊ प्रदछिणा रात दिन ।
पल न वालूं निरखूं नेत्रे, आतम लगाए लगन ॥ १६

मैं सभी अंगोंसे आपकी सेवा करती रहूँ. दिन रात आपकी परिक्रमा करती रहूँ. मैं आत्मिक लगनसे एक पलक भी बन्द किए बिना आपके दर्शन करती रहूँ.

मुझ से अजान अबूझ दुष्ट अप्रीछक, अधम नीच मत हीन ।
सो इन चरणों आए होए दाना स्याना, सुघड सुबुध प्रवीन ॥ १७

मुझ जैसी अनजान, अबोध, दुष्ट, मूढ़, अधम, नीच और बुद्धिहीन भी आपके इन चरणोंकी शरणमें आकर समझदार, चतुर, सुयोग्य, सुबुद्धि और प्रवीण हो जाती है.

जीव जगाए देत निध निरमल, करत आतम रोसन ।
सो जीव बुध लेकर करे उजाला, सब में चौदे भवन ॥ १८

आप ऐसे जीवको जगाकर निर्मल ज्ञानरूपी निधि देते हैं और आत्मामें ज्ञानका प्रकाश भर देते हैं. वह जीव जागृत होकर आपसे प्राप्त बुद्धिके बल पर चौदह लोकोंमें तारतम ज्ञानका प्रकाश फैला देता है.

इन जुबां क्यों कहूं बडाई, तुमे सबद ना पोहोंचे कोए ।
जो कछू कहूं सो उरे रहे, ताथें दुख लागत है मोहे ॥ १९

मैं इस नश्वर जिह्वासे आपकी क्या महिमा गाऊँ ? महिमाके कोई भी शब्द आप तक नहीं पहुँचते. जो कुछ भी (स्तुति वचन) कहती हूँ वह सब इधर ही रह जाता है. इसलिए अपनी असमर्थता पर मुझे दुःख होता है.

दाझ बूझत है एक सबद में, जब कहूं धनी श्री धाम ।
इन वचने आतम सुख पायो, भागी हैडे की हाम ॥ २०

जब मैं एक ही शब्द 'धामधनी' कहती हूँ तब इतना कह देने मात्रसे मेरे हृदयकी दाह (चाहना) शान्त हो जाती है. इतना कहने मात्रसे आत्माको अखण्ड सुख मिला और मेरे हृदयकी आकांक्षाएँ पूर्ण हुईं.

कहे इन्द्रावती अति उछरंगे, फोड ब्रह्मांड करूं रोसन ।
सीधी राह देखाऊं जाहेर, ज्यों साथ सुखे आवे वतन ॥ २१

इन्द्रावती अति उमङ्गमें आकर कहती है, सद्गुरुकी कृपासे मैं ब्रह्माण्डको फोड़कर (अन्धकार मिटाकर) सर्वत्र तारतम ज्ञानका प्रकाश फैला दूँ. परमधामका ऐसा सीधा (सरल) मार्ग दिखा दूँ कि जिससे समस्त सुन्दरसाथ सुख पूर्वक अपने परमधाममें आ जाए.

अब अस्तुत ऊपर एक विनती कहूं, चरन तुमारे जीवमें ग्रहूं ।
इन चरनों मोहे सुध भई, पहेली निध श्री सुंदरबाईऐ दई ॥ १

अब मैं सद्गुरुकी स्तुतिके उपरान्त एक विनती करती हूँ कि आपके चरणोंको अपने हृदयमें धारण कर लूँ. इन्हीं चरण कमलोंके प्रतापसे मुझे ऐसी सुधि आई कि परमधामकी यह निधि (तारतम ज्ञान) सर्वप्रथम श्रीदेवचन्द्रजी महाराज (सुन्दरबाई) ने दी है.

दोऊ सरूपमें जोत जो एक, सो मैं देख्या करके विवेक ।
ए चरण फले कहे इन्द्रावती, तारतम ज्योत करूं विनती ॥ २

मैंने विवेक पूर्वक देखा कि दोनों स्वरूपों (श्रीकृष्ण एवं श्रीदेवचन्द्रजी) में अक्षरातीत धनीकी एक ही ज्योति विद्यमान है. आपके चरणोंके प्रतापसे इन्द्रावती विनती करती है कि इस तारतम ज्ञानकी ज्योतिसे सर्वत्र प्रकाश फैला दूँ.

मेरा बुता कछु न था मेरे धनी, मों पे दोऊ सरूपों दया करी अति घनी ।
सेवा में न थी हाजर, न जानूं दया करी क्यों कर ॥ ३

हे मेरे सद्गुरु धनी ! मुझमें ऐसी कुछ भी क्षमता नहीं थी, किन्तु मुझ पर दोनों स्वरूपों (श्रीकृष्ण और श्रीसद्गुरु) ने अत्यधिक दया की. मैं तो आपकी सेवामें भी उपस्थित नहीं थी. मैं नहीं जानती कि आपने मुझ पर इतनी दया क्यों की है ?

ऋतव चितवनी और सेवा करे, माया गुन उलटे परहरे ।
मनसा वाचा कर करमना, करे दौड प्यार अति घना ॥ ४

पर जब लग दया तुम्हारी न होए, तब लग काम न आवे कोए ।
ए परीछा मैं करी निरधार, देखे सबके सबद विचार ॥ ५

जो कोई कर्तव्यनिष्ठ होकर परमधामका चिन्तन करते हुए सद्गुरुकी सेवा करते हैं अथवा माया जनित उलटे गुणोंका परित्याग कर मन, वचन और कर्मसे पूर्ण स्नेहमें भरकर सद्गुरुकी सेवाके लिए सदैव तत्पर रहते हैं. परन्तु हे सद्गुरु धनी ! जब तक उन पर आपकी कृपा न हो तब तक ये सब कुछ काम नहीं आते. इस तथ्यको मैंने निश्चय ही परीक्षण कर लिया है और अन्य विज्ञ जनोंकी वाणियों पर भी विचार किया है.

जीव खरा होए जुदा मन करे, कपट रती ना हिरदें धरे ।
यों कर के तुमको सेवे, वचन विचार अंदर जीव लेवे ॥ ६

सनकूल करे तुम्हारा चित, संसे भान करे जीव के हित ।
पीउ चित पर चलेगा जोए, साथ में घरो सोभा लेसी सोए ॥ ७

यदि जीव सच्चा बनकर मनके समस्त विकारोंको दूर करे और अपने हृदयमें रत्ती भर भी कपटभाव न रखे , इस प्रकार समर्पित भावसे आपकी सेवा करे, आपके वचनोंको विचार कर उन्हें मनसे ग्रहण करे, आपके चित्तके अनुकूल चलकर आपको प्रसन्न करे और अपने मनके सभी संशयोंको दूर कर स्वयंका हित करे; इस प्रकार सद्गुरुके मनोनुकूल आचरण करने वाली आत्मा ही परमधाममें जागृत होकर सुन्दरसाथके मध्य शोभा धारण करेगी.

ए नींद उडाए के कहे वचन, श्री धामधनी जीव जानी मन ।
जब देख्या धनी नीके फिकर कर, तो अजूं न गई नींद है अन्दर ॥ ८

मुझे लग रहा था कि आपकी स्तुतिके ये वचन मैंने निद्रासे जागकर कहे हैं और मेरे जीवने सद्गुरुको अपना धामधनी मान लिया है. किन्तु हे धनी ! जब पुनः विचार पूर्वक देखा तो ज्ञात हुआ कि अभी तक हृदयके अन्दर अज्ञानरूपी नींदका अंश शेष रह गया है.

ए वचन कहे मैं नींदज मांहें, जब नीके देखूं धनी धामके ताहें ।
ना तो क्यों कहूं धनीको एह वचन, पर कछुक तासीर है भोम इन ॥ ९

हे धामधनी ! जब भली-भाँति देखा तो पाया कि ये सब वचन मैंने नींदमें ही कहे हैं. इस मायावी धरतीका प्रभाव ही कुछ ऐसा है, अन्यथा मैं अपने धनीको ऐसे वचन क्यों कहती ?

जब घर की तरफ देखों तुमको, तब फेर यों होए मेरे मनकों ।
ए धामधनीको कहा कहे वचन, तब जीव विचार दुख पावे मन ॥ १०

जब मैं परमधामकी ओर दृष्टि डालकर आपको देखती हूँ तब पुनः मेरे मनमें यह बात आती है कि मैंने अपने धामधनीको ऐसे वचन क्यों कहे ? तब मेरी आत्मा उन वचनोंको याद कर बड़ी दुःखी होती है.

क्या कहूं सबद तुमें पोहोंचे नाहें, मेरी जुबा भई माया अंग मांहें ।
तुम सबदातीत भए मेरे पीउ, मेरी देह खडी माया ले जीउ ॥ ११

किन्तु क्या कहूँ ये संसारी शब्द आप तक पहुँचते नहीं. मेरी यह जिह्वा मायावी शरीरका ही अङ्ग है. हे धनी ! आप स्वयं शब्दातीत हैं और मेरी देह इस मायामें जीवको धारण कर खड़ी है.

धनी लगते वचन कहूंगी आए धाम, तब भानूंगी मेरे जीव की हाम ।
ए तो बानी कही मैं साथ कारन, साथ छोडसी माया ए देख वचन ॥ १२

हे धामधनी ! मैं आपसे सम्बन्धित वचन परमधाममें आपके पास आकर ही कहूँगी. तब अपने मनकी चाहना पूर्ण करूँगी. यह वाणी तो मैंने अपने सुन्दरसाथके लिए कही है, ताकि वे इन वचनोंको देखकर मायाको छोड़ देंगे.

साथ बेगे बुलाओ कहे इन्द्रावती, ए कठन माया दुख होए लागती ।
ए दुख देख्या मांहें दुस्तर, कोई ना पेहेचाने अपना घर ॥ १३

इन्द्रावती कहती है, हे धनी ! अपनी अंगनाओंको शीघ्र बुला लो. यह कठोर माया दारुण दुःख देने वाली लग रही है. इस दुस्तर मायाके अन्दर अनेक दुःख देख लिए हैं. फिर भी कोई अपने मूल घरकी पहचान नहीं कर पा रहे हैं.

ए मैं लुगा कह्या माया सनमंध, मैं देखीतां न देखूं अंध ।
ए ताए कहिए जो होए बेसुध, तुम छिन छिन खबर लै कै विध ॥ १४

मैंने माया सम्बन्धी मात्र एक-दो शब्द ही कहे हैं. देखती हुई भी मैं अन्धी हो रही हूँ. यह सब तो उसके लिए कहा जाता है जो अनभिज्ञ (बेसुध) हो, किन्तु आपने तो एक-एक क्षण हर प्रकारसे हमारी सुधि ली है.

एह कहूं मैं साथ कारन, अधछिन साथ विसारो जिन ।
जिन करो तुम्हारी पाओ छिन, तो कै कल्पांत जाए मिने तिन ॥ १५

यह सब मैं अपने सुन्दरसाथके लिए कह रही हूँ. आप तो आधे क्षणके लिए भी सुन्दरसाथको नहीं भूले हैं. आप एक क्षणके चौथाई भागके लिए भी अपने सुन्दरसाथको न भूलें क्योंकि उतनी देरमें तो यहाँ कई कल्प (सैंकड़ों युग) व्यतीत हो जाएँगे.

मैं तो कहूं जो तुम न्यारे हो, पाव पल साथकी जुदागी ना सहो ।
मैं तो कहूं जो मेरी ओछी मत, तुम हमको कै सुख चाहत ॥ १६

हे सद्गुरुधनी ! मैं ऐसे वचन तभी कहती जब आप हमसे अलग होते, किन्तु आप तो एक क्षणके चौथाई भागके लिए भी अपनी आत्माओंका वियोग सहन नहीं करते. मैं तो अपनी तुच्छ बुद्धिके कारण यह सब कहती जा रही हूँ, जबकि आप तो हमें अपार सुख देना चाहते हैं.

हम कारन तुम आए देह धर, तुम कै विध दया करी हम पर ।
तुम धनी आए कारन हम, देखाई बाट ल्याए तारतम ॥ १७

हमारे लिए ही आप शरीर धारण कर आए हैं. आपने हम पर अनेक प्रकारके

अनुग्रह किए हैं. हे सद्गुरु धनी ! वस्तुतः आप हमारे लिए ही आए हैं और आपने तारतमका प्रकाश दिखाकर हमारा मार्ग प्रशस्त किया है.

साथें माया मांगी सो भई अति जोर, तुम सबद कहे कै कर कर सोर ।
पर तिन समे नींद क्योंए न जाए, तब धनी सरूप भए अंतराए ॥ १८

सुन्दरसाथने माया देखनेकी माँग की थी, किन्तु यह उनके लिए कठिन हो गई है. आपने पुकार-पुकार कर हमें उपदेश दिया, परन्तु उस समय किसी भी तरह हमारी नींद नहीं मिटी. तब धामधनी स्वरूप आप हममेंसे अन्तर्धान हो गए.

तो भी ना भई हमको खबर, तब फेर आए दूजा देह धर ।
ततछिन मिले हमको आए, सागर वतनी नूर बरसाए ॥ १९

फिर भी हमें सुधि न हुई, तब आप पुनः दूसरा शरीर धारण कर (मेरे हृदयमें) प्रकट हुए. आप तत्काल आकर हमसे मिले और तारतम सागरके रूपमें परमधामका नूर बरसाने लगे.

मैं साथ को कह्या सो कहिए क्योंकर, यों तो कहिए जो दूर किये होवें घर ।
एता तो मैं जानूं जीव मांहें, जो ए अरज धनीसों करिए नाहें ॥ २०

हे धनी ! मैंने सुन्दरसाथको जो कुछ कहा है वह आपसे कैसे कहा जाए? यह सब तो तब कहा जाए, जब आपने हमें अपने घर-परमधामसे दूर किया हो. इतना तो मैं अन्तरसे जानती हूँ कि ऐसी विनती धनीसे नहीं करनी चाहिए.

पर साथ वास्ते दाह उपजी मन, यों जाने न कह्या हम कारन ।
यों न कहूं तो समझे क्यों कोए, कै विध दया धनीकी होए ॥ २१

किन्तु सुन्दरसाथके लिए मेरे मनमें यह चाह उत्पन्न हुई है. वे यह न सोचें कि इन्होंने हमारे लिए कुछ कहा ही नहीं. मैं इस प्रकार न कहूँ तो कोई कैसे समझ पाएगा कि धनीकी दया किस प्रकार हो रही है.

ए साथ की चिन्हार को कहे वचन, ना तो धनी दया जीव जाने मन ।
साथ चरने हैं सो तो बचिछिन बीर, ए भी वचन विचारे द्रढ धीर ॥ २२

सुन्दरसाथको धनीकी पहचान करानेके लिए ही मैंने ये वचन कहे हैं, अन्यथा

धनीकी दया तो मेरा जीव ही जानता है. जो सुन्दरसाथ धनीके चरणोंमें हैं, वे तो विचक्षण (तीक्ष्ण प्रतिभावाले) एवं वीर (साहसी) हैं. वे भी इन वचनों पर दृढ़तासे विचार करेंगे.

पर करूं साथ पीछले की बडी जतन, देख बानी आवसी इन बाट वतन ।
देखियो साथ दया धनी, ए कृपाकी बातें हैं अति घनी ॥ २३

परन्तु भविष्यमें आने वाले सुन्दरसाथके लिए मैं प्रयत्न कर रही हूँ. इसी वाणीको देखकर वे परमधामके इस मार्ग पर आएँगे. हे सुन्दरसाथजी ! धनीजीकी दयाको देखो, उनकी कृपाकी बातें बहुत हैं.

ए दया धनी मैं जानूं सही, पर इन जुबां ना जाए कही ।
जो जीव वचन विचारे प्रकास, तो अंग उपजे धाम धनी उलास ॥ २४

धनीकी इस अपार कृपाको मैं ही समझती हूँ किन्तु इस नश्वर जिह्वासे कह नहीं सकती. जो जीव इस प्रकाश ग्रन्थकी वाणी पर विचार करेंगे, तब उनका मन धामधनीसे मिलनेके लिए सदैव उल्लसित होगा.

कहे इन्द्रावती सुन्दरबाई चरने, सेवा पीउकी प्यार अति घने ।
और कछू ना इन सेवा समान, जो दिल सनकूल करे पेहेचान ॥ २५

इन्द्रावती कहती है कि सुन्दरबाईके चरणोंकी सेवा करनेसे प्रियतम धनीका अत्यधिक प्रेम प्राप्त होता है. धामधनीको पहचान कर प्रसन्न दिलसे उनकी सेवा करनेके समान अन्य कुछ भी सुख नहीं है.

प्रकरण २४ चौपाई ५९०

जाटी प्रबोध-कातनीको द्रष्टान्त

भट परो तिन नींद को, जिन सुहागनियां दैयां भूलाए ।
तो भी निगोडी ना उडी, जो धनी थके बुलाए बुलाए ॥ १

उस नींदको आग लग जाए जिसने सुहागिनी आत्माओंको भुला दिया है. धामधनी बुला-बुलाकर थक गए फिर भी यह निगोड़ी निद्रा नहीं उड़ी.

ए नींद अमल कासों कहिए, क्योंए ना छोडे आतम ।
तो भी बेसुधी ना टली, जो जल बल हुई भसम ॥ २

इस नींदके नशेकी बात किससे कहें ? यह तो आत्माको किसी भी प्रकार नहीं छोड़ती है. शरीरके जल बल कर भस्म हो जाने पर भी जीवकी यह बेसुधि नहीं मिटी.

वतन थें आइयां सैयां, सबे बांध के होड ।
सो याद न रह्या कछुए, इन नींदें दैयां सब तोड ॥ ३

परमधामसे सभी आत्माएँ आपसमें प्रेमकी होड़ लगाकर यहाँ आईं थीं, किन्तु यहाँ आकर उन्हें कुछ भी याद नहीं रहा. इस नींदने उनके आत्मविश्वासको तोड़ दिया है.

तुमको नींद उडावने, मैं देऊं एक द्रष्टांत ।
तुम विध अगली देखके, जो कदी समझो इन भांत ॥ ४

हे आत्माओ ! भ्रमरूपी निद्राको उड़ानेके लिए मैं तुम्हें एक दृष्टान्त देकर कहती हूँ. कदाचित् पहलेके लोगोंकी रीतिको देखकर तुम इस प्रकार सचेत हो सको.

आइयां आस कातन की, करके उमेद दूनी ।
किनहूं कात्या बारीक, किन रूई थें न करी पूनी ॥ ५

परमधामसे ब्रह्मात्माएँ धामधनीके प्रेमरूपी सूत कातनेके लिए दुगुनी आशा लेकर इस संसारमें आई थीं, उनमेंसे किसीने महीन सूत काता (एकाग्रतासे धनीका भजन किया) तो कोई रूईसे एक पूनी तक नहीं बना पाईं (अर्थात् समय व्यर्थ गँवाया).

आइयां कातन वालियां, मिनो मिने रबद कर ।
किन किन मीहीं कातियां, सांचा सनेह धर ॥ ६

प्रेमरूपी सूत कातने वाली ब्रह्मात्माएँ (किसका प्रेम ज्यादा है इस प्रकार) परस्पर विवाद करती हुईं संसारमें आईं. उनमेंसे किसीने धनीसे सच्चा प्रेम रखकर महीन सूत काता.

कोई बडाई ले बैठियां, सो गइयां आपको भूल ।
उठियां अंग पछताएके, होए सूरत बेसूल ॥ ७

कई आत्माएँ अपना बड़प्पन लेकर बैठी रहीं और स्वयंको भूल गईं. वे अपने अंगों (मन) में पश्चाताप लेकर उठेंगी. उनके वदन (मुख) पर भरपूर मलिनता (पश्चात्तापकी झलक) दिखाई देगी.

किनहूं कात्या सोहागका, सूत भर भर सेर ।
कोई बैठियां पांउ पसारके, ले बैठी हिरदें अंधेर ॥ ८

किसी सखीने तो अपने धनीके सुहागका सेरभर सूत कात लिया और कोई हृदयमें अज्ञानरूपी अन्धकार लेकर पैर पसारे बैठी रही.

कोई तलबें तांत चढावही, भले पाई ए बेर ।
कोई नीचा सिर कर रही, कोई चढियां सिर मेर ॥ ९

किसीने तो शीघ्रतासे चरखे पर ताँत चढ़ा ली, यह सोचकर कि धनीके प्रेमको पहचाननेका योग्य अवसर मिला है. कोई तो सिर नीचे किए बैठी रही और कोई गर्वसे पर्वतकी भाँति ऊँचा सिर करने लगी.

एक सूत देखें औरके, उमर सब गई ।
फेरा देवें रूपवंतियां, कबूं पूनी हाथ ना लई ॥ १०

कोई तो दूसरोंको सूत कातते देखती ही रही, उसकी सारी उम्र व्यर्थ बीत गई. कितनी सखियाँ तो इधर-उधर घूमती ही रह गईं, उन्होंने सूत कातनेके लिए हाथमें पूनी तक नहीं उठाई.

कोई सोए रहियां आतनमें, उठियां तब उदमाद ।
दुख पाया तब दिलमें, जब सूत आया याद ॥ ११

कई सखियाँ शरीररूपी घरमें सोई रह गईं. जब उठीं तो उनमें बड़ा आलस्य (उन्माद) छाया हुआ था. जब उन्हें अपने सूत कातनेकी बात याद आई तो समय व्यर्थ गया यह जानकर उनके दिलमें बहुत दुःख हुआ. इस रात्रिमें असह्य दुःख होंगे. फिर चौरासी लाख योनियोंका यह अन्धेरा उड़ जाने पर पुनः मानव जीवनरूपी प्रभात होगा.

जिन दिल दे मीहीं कातियां, ढील ना करी एक पल ।
सोए उठी सैयनमें, हंसते मुख उजल ॥ १२

जिन्होंने दिल लगाकर महीन सूत काता और एक पलके लिए भी विलम्ब नहीं किया, वे ही (सखियाँ) अन्य सखियोंके बीच हँसती हुई उज्ज्वल मुख लेकर उठीं.

किनहूं ऊंचा कातियां, दे फारी फुकार ।
सोए घरों सैयनमें, हुई धन धन कातन हार ॥ १३

जिन्होंने बड़ी विनम्रतासे बहुत ही उच्च कोटिका सूत काता (तन्मयतासे भक्ति की), ऐसी सूत कातनेवाली सखियाँ सुन्दरसाथमें तथा परमधाममें धन्य-धन्य हुईं.

जब सूत सैयां देखिया, तब जाहेर हुइयां सब कोए ।
पर जिन कछुए न कातिया, छिपाए रही मुख सोए ॥ १४

जब सखियोंने एक-दूसरेके सूतको देखा तब सबकी कुशलता प्रकट हो गई. परन्तु जिन्होंने अब तक कुछ भी नहीं काता, उन्होंने लज्जासे अपना मुँह छिपा लिया.

सूत वाली सोहागनी, तिन सोभा पाई घनी ।
सैयां भी कहे धन धन, और दियो मान धनी ॥ १५

सूत कातने वाली सुहागिनी सखियोंने धनीकी अधिक शोभा प्राप्त की. अन्य सखियाँ भी उन्हें धन्य-धन्य कहने लगीं और धामधनीने भी उन्हें सम्मान दिया.

एक फेरे चरखा उतावला, दिल बांध तांतके साथ ।
रातों भी करे उजागरा, सूत होवे तिनके हाथ ॥ १६

जिन सखियोंने अपना दिल ताँतके साथ बाँधकर जल्दी-जल्दी चरखा घुमाते हुए सूत काता और रातको भी सूत कातनेके लिए जागती रहीं, उन्हें ही धामधनीके प्रेमका सूत हाथ लगा.

करे जो बातां बीचमें, सो तांत ना निकसे तिन ।
पूनी रही तिन हाथमें, बैठी फिरावे मन ॥ १७

जो सखियाँ परस्पर बातें ही करती रहीं, उनसे तो ताँत ही नहीं निकली. उनके हाथमें रूईकी पूनी ज्योंकी त्यों पड़ी रह गई. वे तो मनके भँवरमें चक्कर लगाती हुई बैठी रह गईं.

फजर हुई बीच सैयनमें, मिल बातां करसी सब ।
जिन कछुए न कातिया, तिन कहा हाल होसी तब ॥ १८

प्रातः होने पर (परमधाममें जागकर) जब सब सखियाँ आपसमें बैठकर बातें करेंगी तब जिन्होंने कुछ भी नहीं काता, उस समय उनका क्या हाल होगा ?

ना कछू कात्या रातमें, ना कछू कात्या दिन ।
सो वतन बीच सैयनमें, मुख नीचा होसी तिन ॥ १९

जिन सखियोंने न तो दिनमें काता और न ही रातमें (रात-दिन कभी भी भक्ति नहीं की) परमधाममें सभी आत्माओंके बीच उनका मुख नीचा होगा.

जो मोटा या बारीक, तिन भी पाया मोल ।
पर जिन कछुए ना कातिया, तिनका कछुए न सूल ॥ २०

जिन्होंने मोटा या बारीक जैसा भी सूत काता, उन्होंने उसीके अनुसार उसका मूल्य पाया, परन्तु जिन्होंने कुछ भी नहीं काता, उनकी लेश मात्र भी प्रतिष्ठा नहीं होगी.

हुकम धनीके विध विध, अनेक किए पुकार ।
जिन सुनी ना तिनकी वतनमें, बातें हुई विकार ॥ २१

सद्गुरु धनीने अनेक प्रकारसे पुकार कर जाग जानेका आदेश दिया. जिन्होंने उनकी बातें नहीं सुनी परमधाममें उनकी बातों पर उपहास होगा.

सुनते पुकार धनीयकी, काल गया दिन ले ।
पीछे मुख नीचा होएसी, क्यों ना कात्या चित दे ॥ २२

सद्गुरु धनीकी पुकार सुनकर भी जिनका सारा समय व्यर्थ ही बीत गया

बादमें उनका मुख नीचा होगा. उन्होंने दिल लगाकर सूत क्यों नहीं काता ?

जिनों आज ना कातिया, करसी याद ए दिन ।
जब बातां करसी सोहागनी, मिल कर बीच वतन ॥ २३

जिन्होंने आज सूत नहीं काता वे इन दिनोंको अवश्य याद करेंगी. जिस समय सुहागिन आत्माएँ परमधाममें एक साथ मिलकर बातें करेंगी (तब उन्हें इसके लिए पश्चात्ताप होगा).

जो कछुए ना समझी, हाथ ना लई पूनी ।
आई थी उमेदमें, पर उठी अलूनी ॥ २४

जिन्होंने धनीकी कोई भी बात नहीं समझी और हाथमें पूनी तक नहीं ली, वे भी आशा लेकर ही आई थीं परन्तु खाली हाथ उठ गईं.

एक लेसी सोहाग सुलतानका, सोई सोहागिन ।
सो बातां सिर उठाए के, करसी बीच सैंयन ॥ २५

वही सखी सुहागिनी कहलाती है जो इस मायामें भी धामधनीकी निकटताका सुख लेती है. वही सखी परमधाममें भी सभी आत्माओंके बीचमें सिर ऊँचा उठाकर बातें करेगी.

प्रकरण २५ चौपाई ६१५

भट परो नींद मोहकी, जो टाली ना टले क्यों ।
आंखा खोल सीधा कहे, फेर वली त्यों की त्यों ॥ १

मोहकी इस नींदको आग लग जाए, जो टालनेसे भी नहीं टलती. आँखें खोलकर होशकी बात भी कर लें पुनः मायाके आवरण आने पर वैसीकी वैसी हो जाती है.

एक तकला भाने ताओमें, फोकट फेरा खाए ।
झगडा लगावे आपमें, हिरदें रस ना जुबांए ॥ २

कोई सखी क्रोधमें आकर तकुआ ही तोड़ देती है और व्यर्थ ही घूमती रहती

है. कई सखियाँ तो परस्पर झगड़ा ही कराती रहतीं हैं, उनकी जिह्वा और हृदयमें प्रेम रस नहीं होता.

एक तकले समारे औरके, लर लर कतावे ।
कहे अपनाइत जानके, समया बतावे ॥ ३

कुछ सखियाँ तो दूसरोंके तकुवे भी संवारती रहतीं हैं और उनसे आग्रह कर सूत कतवातीं हैं. उन्हें अपना समझकर इस समयका मूल्य बतातीं हैं.

एक झगडा लगावे औरको, सामी तकले डाले बल ।
ए बातें होसी वतनमें, जब उतर जासी अमल ॥ ४

कई सखियाँ तो दूसरोंसे लड़ती झगड़ती रहतीं हैं और दूसरोंके तकुवोंमें गाँठ (बल) लगा देतीं हैं (अर्थात् स्वयं भी भजन नहीं करतीं और दूसरोंके भजनमें भी बाधा डालती हैं). जब मायाका नशा उतर जाएगा अर्थात् सब सखियाँ परमधाममें जागृत होंगी तब ये सभी बातें वहाँ पर होंगी.

एक औरोंको उलटावहीं, कहा विध होसी तिन ।
कातना उन पीछा पड्या, सामी धके दिए औरन ॥ ५

जो सखी दूसरोंको भी उलटा रास्ता बता देती है, उसका क्या हाल होगा ? वह स्वयं तो कातनेमें पीछे रह गई और दूसरेको भी पीछे धकेलनेमें लगी है.

जो झगडा लगावे आपमें, ताए होसी बडो पछताप ।
ओ जाने कोई ना देखहीं, पर धनी बैठे देखे आप ॥ ६

जो परस्पर झगड़ती रहतीं हैं, उन्हें बड़ा पश्चात्ताप होगा. वे समझतीं हैं कि उनके इस व्यवहारको कोई नहीं देख रहा, परन्तु धामधनी तो सब कुछ देख रहे हैं.

बात उठावें जो मनसे, सो होसी सबे वतन ।
एक जरा छिपी ना रहे, यों कोई भूलो जिन ॥ ७

मनमें जैसे विचार उठते हैं, उनकी भी चर्चा परमधाममें अवश्य होगी. जरा-सी बात भी वहाँ पर छिपी नहीं रहेगी, इसलिए कोई भी यहाँ पर नहीं भूलना.

एक काते मांहें चुपकतियां, सो ताने सहे औरन ।
तांत चढावें तलवें, नजर ना चूके छिन ॥ ८

कोई सखी तो चुपचाप सूत कातती हुई दूसरोंके उपालम्भ भी सुनकर सह लेती है. वह दृष्टि हटाए बिना तकली पर ताँत चढ़ा कर सूत कातती रहती है.

ताए होसी मान धनीयको, साथ मिने रंग लाल ।
उठसी हंसती हरषमें, पांउ दे पडताल ॥ ९

उसे ही धामधनीका सम्मान प्राप्त होगा और सुन्दरसाथके बीचमें भी उसीके मुख पर आनन्दकी लालिमा उभर आएगी. वह तो हर्षसे हँसती हुई पैरोंसे ताल देकर उठेगी.

हाथ घससी हाथसों, जो लै इन्द्रियों घेर ।
सो पछतासी आंखा खुले, पर ए समया न आवे फेर ॥ १०

जिनको इन्द्रियोंने घेर लिया है, वे केवल हाथ मलती रह जाएँगी. आँख खुलने पर वे पश्चात्ताप करेंगी, परन्तु बीता हुआ यह समय पुनः लौटकर नहीं आएगा.

जो इत आंखा खोलसी, ले इसक या बिचार ।
सो करसी बातां विधविधकी, सब सैयोंमें सिरदार ॥ ११

जो सखी यहाँ पर विचार पूर्वक प्रेमसे आँखें खोल लेगी (जागृत हो जाएगी) वह सब सखियोंमें शिरोमणि बनकर विविध प्रकारकी ज्ञानकी बातें करेंगी.

जिन इत आंखा ना खोलियां, करके बल बेसुमार ।
नींद उडाए ना सकी, सो ले उठसी खुमार ॥ १२

जो यहाँ पर अपने प्रयत्नोंसे अज्ञानतारूपी नींदको उड़ाकर जागृत न हो सकीं वे अन्तमें भी नींदके नशेमें ही उठेंगी एवं पश्चात्ताप करेंगी.

जिन इत उडाई नींदडी, सो उठत अंग रोसन ।
केहेसी कातनहार को, विध विध के बचन ॥ १३

जिसने यहाँ पर ही अपनी नींदको दूर कर लिया, वह अपने अङ्ग (हृदय)

को प्रकाशित करती हुई उठेगी और अन्य कातनेवाली सखियोंको भी विविध प्रकारके प्रेममय वचन कहेगी.

जो उठसी आंखा चोलती, सो केहेसी कहा बचन ।
ना तो आईथी उमेद देखने, पर नींद ना गई तिन ॥ १४

जो सखी आँख मलती हुई उठेगी वह दूसरोंको क्या कह पाएगी ? अन्यथा वह भी खेल देखनेकी आकांक्षासे ही आई थी परन्तु उसकी तो नींद ही नहीं खुली.

सुनो सैयां कहे इन्द्रावती, तुम आइयां उमेद कर ।
अब समझो क्यों न पुकारते, क्यों रहियां नींद पकर ॥ १५

इन्द्रावती कहती है, हे मेरी सखियो ! सुनो. तुम तो सूत कातने (भजन करने) की चाह लेकर आईं थीं. धनी स्वयं पुकार रहे हैं. तुम अब क्यों नहीं समझतीं और नींदको पकड़कर क्यों बैठी हो ?

तुम वतनमें धनीयसों, क्यों करसी बात अंधेर ।
रेहेसी उमेदा मनमें, ए न आवे समया और बेर ॥ १६

तुम परमधाममें जागकर अपने धामधनीसे इस मायावी अन्धकार (अज्ञान) की चर्चा कैसे करोगी ? इस मायामें धनी मिलनकी आशा मनमें ही रह जाएगी. फिर ऐसा समय दूसरी बार नहीं आएगा.

कातने को उतावलियां आइयां, मिलकर तुम ।
अब झूलो रहियां नींदमें, कातना भूल खसम ॥ १७

तुम सब तो सूत कातनेकी उमङ्गसे एक साथ इस संसारमें आईं थीं पर अब नींदकी ऐसी मस्ती तुम पर छा गईं कि अपना सूत कातना (धनीका भजन करना) ही भूल गईं हो.

धनी आए जगावहीं, केहे केहे अनेक सनंध ।
नींदें सब भुलाइयां, सेवा या सनमंध ॥ १८

धामधनी यहाँ आकर अनेक प्रकारके दृष्टान्त दे-देकर जगा रहे हैं. अज्ञानरूपी नींदने धामधनीकी सेवा एवं उनके साथका सम्बन्ध सब कुछ भुला दिया.

ए जिमी लगसी आग ज्यों, जब धनी चले घर ।
बचन पीउके लेयके, इत क्यों न जागो मांहें अवसर ॥ १९

जब सद्गुरु धनी अपने घर चले जाएँगे, तब यह धरती भी आग जैसी लगने लगेगी. इसलिए धनीके वचनोंको ग्रहण कर इसी अवसर पर क्यों नहीं जागतीं ?

भट परो इन नींद को, ए ठौर बुरी विषम ।
यों जगावते न जागियां, तो कौन विध होसी तिन ॥ २०

अज्ञानरूपी इस निद्राको आग लगे. यह भूमि भी बड़ी विषम है. इस प्रकार जगाने पर भी जो सखियाँ नहीं जागेंगी, तो उनका क्या हाल होगा ?

तुम देखो भांत धनीयकी, कै विध करी चेतन ।
सबों सुनाए कहे इन्द्रावती, जागो चलो वतन ॥ २१

तुम अपने सद्गुरुकी (जगानेकी) रीति को तो देखो. उन्होंने अनेक प्रकारसे तुमको सचेत किया है. इन्द्रावती सबको सुनाकर कहती है कि जागो और अपने घर चलो.

साहेब मांहें बैठके, बतावत हैं ठौर ।
सो घर तुमको देखाइया, जहां नहीं कोई और ॥ २२

सद्गुरु मेरे हृदयमें बैठकर परमधामकी बात बता रहे हैं. उन्होंने तुम्हें वह परमधाम दिखाया, जहाँ पर श्रीराजश्यामाजी और सुन्दरसाथके अतिरिक्त कोई भी नहीं है.

प्रकरण २६ चौपाई ६३७

अब तूं जिन भूल आतम मेरी, पेहेचान के खसम ।
वतन देखाया अपना, जिन छोडे पीउ कदम ॥ १

हे मेरी आत्मा ! अब तू धामधनीको पहचानकर उन्हें मत भूल. उन्होंने तुझे अपना घर–परमधाम दिखा दिया है. इसलिए अब तू उनके चरण मत छोड़.

बचन कहे बडे मुखथे, पर तूं तो समया न भूल ।
तू कात बारीक धनीय का, एता तें पावेगी मूल ॥ २

तूने अपने मुखसे (सद्‌गुरुकी प्रशंसाकी) बड़ी-बड़ी बातें की थीं, इसलिए अब तू तो इस समयको मत भूल. तू अपने धनीके प्रेमका बारीक सूत कात ले. निश्चय ही तू इसका मूल्य प्राप्त करेगी.

अजूं तें पाओ न कातिया, उत चाहिएगा सेर भर ।
जब उठेगी कातन से, तब बोहोर चाहेगी अवसर ॥ ३

अभी तक तूने पाव भर भी सूत नहीं काता, जबकि वहाँ तो सेर भर चाहिए. जब तुम इस घरसे उठ (जग) जाओगी तब इस अवसरको पुनः प्राप्त करना चाहोगी.

ए जो गमाए दिनडे, गफलतमें जो गल ।
अब तोको उठनेके, आए सो दिनडे चल ॥ ४

प्रमाद (गफलत) में पड़कर तूने ऐसे कितने दिन व्यर्थ किए हैं, अब तो तेरे जागृत होनेके दिन आ गए हैं.

जो तूं उठी काते बिना, आए इन अवसर ।
कहा करेगी इन नींदको, जो ले चलसी घर ॥ ५

यह अवसर पाकर भी यदि तू सूत काते (भजन किए) बिना उठ गई, तो इस अज्ञानरूपी नींदको क्या करेगी ? परमधाम जानेकी पुण्य वेलामें क्या तू इसे साथ ले चलेगी ?

अजूं न जागे जोर कर, जो ऐसी तुझ पर भई ।
धनी आए बेर दूसरी, तेरी सुध ऐसी क्यों गई ॥ ६

तुझ पर इतनी बीत गई फिर भी तू अब तक यत्नपूर्वक नहीं जागी. सद्‌गुरुधनी दूसरी बार तुझे जगानेके लिए आ गए फिर भी तेरी सुधि ऐसी कैसे हो गई ?

कर सीधा समार तकला, कस कर बांध अदवान ।
दे गांठ माल मरोर के, पूनी लगाए के तान ॥ ७

अब तू अपने मनरूपी तकलीको सँभालकर सीधा कर और विश्वासरूपी डोरी (अदवान) को कसकर बाँध ले, चरखेकी डोरीको पूर्ण बल देकर गाँठ बाँध ले और श्वासरूपी पूनी लगाकर भजनरूपी तान खींच ले.

फेर तूं चरखा उतावला, करके अंग कूवत ।
तूं लेसी सोहाग धनीयका, तेरे बारीक इन सूत ॥ ८

अब अपने शरीररूपी चरखेको यत्नपूर्वक शीघ्रताके साथ चला. इस प्रकार प्रेमकी बारीक सूत कातनेसे तू अपने धनीका सुहाग प्राप्त करेगी.

ए रेहेसी अधबीच कातना, दिन आए समे करे भंग ।
तुझ देखत सैयां चलियां, जो हुती तेरे संग ॥ ९

यदि तूने इस अवसरको वैसे ही गँवा दिया तो तेरा कातना बीचमें ही अधूरा रह जाएगा. तेरे देखते-देखते तेरे साथकी सखियाँ परमधाम चली गईं हैं.

अब हिंमत करके कात तूं, दिल बांध सूत के साथ ।
ए मीहीं सूत सोहाग का, सो होसी तेरे हाथ ॥ १०

अब तू हिम्मत करके सूत कात ले. अपना दिल सूत (धनीके प्रेम) के साथ बाँध ले. तब धामधनीके सुहागका महीन सूत तेरे हाथ लगेगा.

अब नींद करे जिन तूं, ए नींद देवे दुहाग ।
उठ तूं जाग जोर कर, दौड ले पीउ सोहाग ॥ ११

अब तू सो मत. यह नींद तेरे दुर्भाग्यका कारण बन जाएगी. तू यत्नपूर्वक जागकर उठ जा और दौड़कर धनीका सुहाग प्राप्त कर.

ए सूत है अति सोहना, मोल मोहोंगा होसी एह ।
तूं पेहेचान पीउ अपना, वार फेर जीव देह ॥ १२

यह सूत अधिक सुन्दर है. इसका मूल्य भी अधिक आँका जाएगा. तू अपने धनीको पहचान ले और उन पर स्वयंको समर्पित कर दे.

अब ले स्याबासी सैयनमें, कर तूं ऐसी भांत ।
ए मीहीं सूत सोहागका, सो रात दिन ले कात ॥ १३

अब तू अपनी सखियोंमें प्रशंसा पा सके, ऐसा कुछ कर. अपने सौभाग्यके महीन सूतको रात-दिन कात ले.

प्रकरण २७ चौपाई ६५०

भोरी तूं न भूल इन्द्रावती, ऐसा पीउका समया पाए ।
तूं ले धनी अपना, औरों जिन देखाए ॥ १

हे भोली इन्द्रवती ! धामधनी (के सान्निध्य) का ऐसा समय पाकर तू अब भूल मत. तू अपने धनी को अपना ले जिनको अन्य किसीने न पहचाना (देखा) हो.

तोहे यों धनी कब मिलसी, पेहेचानके ले सोहाग ।
ऐसी एकांत कब पावेगी, अब है तेरा लाग ॥ २

तुझे इस प्रकार अपने धनी कब मिलेंगे ? तू उन्हें पहचान कर अपना सुहाग प्राप्त कर. अब तो तेरी बारी है, फिर तू ऐसा एकान्त कब पाएगी ?

बोहोत बखत भला पाइया, धनिएं दियो तुझे आप ।
मेहेर करी मेहेबूबें, करके संग मिलाप ॥ ३

तुझे यह अति उत्तम अवसर प्राप्त हुआ है, इसे धनीने स्वयं तुझे अपनी जानकर दिया है. इस संसारमें तुझसे मिलकर धामधनीने तुझपर बड़ी कृपा की है.

आंखा खोल के ढांपिए, जिन चूके एती बेर ।
रात दिन तेरे राजका, सूत कात सवा सेर ॥ ४

आँखें खोलकर बन्द करनेमें जितना समय लगता है उतना समय भी यह अवसर नहीं चूकना. दिन-रात तू अपने श्रीराजजीके प्रेमका सूत कातकर उसे सवा सेर करती जा.

नेह कर तूं नैनों से, और चसमें से कताए ।
मीहीं सूत ले उजला, आओ आंखें कर पाए ॥ ५

तू अपने नेत्रोंमें स्नेह भरकर तारतम ज्ञानरूपी चश्मेसे सूत कात. इस प्रकार

महीन और उज्ज्वल सूत (निर्मल प्रेम) लेकर, ज्ञानके नेत्र खोलकर परमधामकी ओर आ जा और धनीके चरण पकड़ ले.

भले कात्या इन सूतको, भला पाया ए बखत ।
भले सो भागी नींदडी, भले मिले धनी इत ॥ ६

यह अच्छा हुआ कि तूने अपना सूत कात लिया, क्योंकि तुझे बहुत ही योग्य अवसर मिल गया है. यह भी अच्छा ही हुआ कि तेरी नींद उड़ गई और तुझे धामधनी यहीं (इस मायावी संसारमें ही) मिल गए.

धनी बिना ए नींदडी, टाल ना सके कोई और ।
वार डारों देह जीवसों, मोहे धनी मिले इन ठौर ॥ ७

धामधनीके बिना अन्य कोई इस नींदको दूर नहीं कर सकता. मैं अपना जीव और देहको अपने धामधनी पर समर्पित कर दूँ क्योंकि वे मुझे इस संसारमें आकर मिले हैं.

सई मेरी मुझ कारने, पीउजी दिए इत पाए ।
मैं वारूं तिन पर आतमा, धनी आए जिन राहे ॥ ८

हे मेरी सखी ! मेरे कारण धामधनी यहाँ पर पधारे हैं. धामधनी जिस राह पर चलकर यहाँ पधारे हैं उस पर मैं अपनी आत्माको न्योछावर कर दूँ.

सई तूं मेरा धनी ले बैठी, कोई और ना देखनहार ।
देख तूं पीउ लेऊं अपना, तो तूं कहियो सोहागिन नार ॥ ९

हे सखी (रतनबाई-विहारीजी) ! तू मेरे धनीको अपना मानकर (लेकर) बैठी है, यह सोचकर कि अन्य कोई देख नहीं रहा है. अब तू देख, मैं अपने धनीको स्वयं अपना लेती हूँ, तब तू मुझे सुहागिनी आत्मा कहना.

इन्द्रावती कहे तूं सई मेरी, धनी मिले मुझे इत ।
पीउने सब पूरन करी, जो मैं करी उमेदा तित ॥ १०

इन्द्रावती कहती है, (हे रतन बाई !) तू मेरी सखी है. मुझे यहाँ (मायामें) धनी मिले हैं. प्रियतम धनीने मेरी सभी कामनाएँ पूर्ण कर दी हैं जो मैंने परमधाममें की थीं.

सई तूं मेरी बाई रतन, मोहे मिले छबीले लाल ।
करी मुझे सोहागनी, अब मैं भई निहाल ॥ ११

हे रतनबाई ! तू मेरी सखी है. अब तो मुझे मेरे छबीले प्रियतम मिल गए हैं. उन्होंने मुझे सुहागिन बनाया, जिससे मैं धन्य हो गई हूँ.

मैं एक विध मांगी पीउपें, पीउने कै विध करी रोसन ।
बातें इन रोसन की, करसी जाए वतन ॥ १२

मैंने तो धामधनीसे एक ही माँग (परमधामके दर्शनकी इच्छा) की थी परन्तु सद्गुरु धनीने तारतम ज्ञान देकर (वाणी कहलवाकर) मेरे हृदयको कई प्रकारसे प्रकाशित कर दिया है. इस प्रकाशकी बातें मैं परमधाममें जाकर ही करूँगी.

प्रकरण २८ चौपाई ६६२

लक्ष्मीजीका द्रष्टांत

मैं जानूं निध एकली लेऊं, धाम धनी मेरे जीवमें ग्रहूं ।
ए सुख और काहूं ना देऊं, फेर फेर तुमको काहेको कहूं ॥ १

मुझे लगता था कि तारतम ज्ञानरूपी इस निधिको मैं अकेले ही ग्रहण करूँ, अपने धामधनीको अपने हृदयमें समाहित करूँ, धनी मिलनका यह सुख अन्य किसीको भी न दूँ. इतना ही नहीं बार-बार सुन्दरसाथको यह सब क्यों कहूँ ?

ए बचन यों कहे न जाए, जीव दुख पावे ना कहे जुवांए ।
एह फिकर मैं बोहोतक करूं, पर देह ना पकडे जो हिरदें धरूं ॥ २

ये वचन इस प्रकार कहे नहीं जाते. जिह्वा इसका वर्णन नहीं कर सकती इसलिए जीवको दुःख होता है. इस बातकी मुझे बड़ी चिन्ता है कि यदि मैं इसे हृदयमें धारण करूँ तो यह देह नहीं रह पाएगी.

धनी कहावे तो यों कहूं, ना तो ए सुख औरों क्यों देऊं ।
ए देते मेरा जीव निकसे, ए बानी मेरे हिरदमें बसे ॥ ३

स्वयं धामधनी मुझसे ये वचन कहलवा रहे हैं, अन्यथा यह सुख मैं दूसरोंको

क्यों देती ? यह सुख दूसरोंको देते हुए मेरा जीव (इस देहसे) निकलने लगता है क्योंकि यह वाणी मेरे हृदयमें स्थिर हो गई है.

ए निध लई मैं कसनी कर, श्रीधाम धनी चरनों चित धर ।
मैं बोहोतक करूं अंतर, पर सागर पूर प्रगट करे घर ॥ ४

इस निधिको मैंने बड़ी साधनाओंसे प्राप्त किया है. मैंने निरन्तर धनीके चरणोंमें चित्तको एकाग्र किया है. इसे अन्तर (हृदय) में छिपानेका मैं बहुत प्रयास करती हूँ. किन्तु धामधनी मेरे हृदयमें विराजकर सागरके प्रवाहकी भाँति इस वाणीको प्रकट कर रहे हैं.

ए बानी धनी अंतरगत कही, केहेनेकी सोभा कालबुतको भई ।
ना तो एह बचन क्यों कहे जाए, अंदर कलेजे ज्यों लगे घाए ॥ ५

सद्गुरुने मेरे हृदयमें विराजकर इस वाणीको कहा है. मात्र कहने (बाहर प्रकट करने) की शोभा मेरे इस नश्वर शरीरको दी है, अन्यथा ये वचन कैसे कहे जाते. इनके वर्णनसे मानो मेरे कलेजेमें घाव हो रहे हैं.

जिन जानो बचन अचेतमें कहे, ए केहेते अनेक दुख भए ।
जब मैं बिचारूं चितमें आन, ए कैसी मुख निकसी बान ॥ ६

यह मत समझना कि मैंने ये वचन अचेतन अवस्थामें कह दिए हैं. इन वचनोंको कहते हुए मुझे अनेक दुःख झेलने पड़े हैं. किन्तु जब अपने चित्तमें इन वचनों पर विचार करती हूँ तो सोचती हूँ कि मेरे मुखसे यह कैसी वाणी निकल रही है ?

मेरी बुधे लुगा न निकसे मुख, धनी जाहेर करें अखंड घर सुख ।
अब साथ कछुक करो तुम बल, तो पूरन सोभा ल्यो नेहेचल ॥ ७

मेरी अपनी बुद्धिके द्वारा तो ऐसे एक भी शब्द मेरे मुखसे नहीं निकल सकते. वस्तुतः इस प्रकार स्वयं धामधनी ही अपने अखण्ड घरके सुख प्रकट कर रहे हैं. हे मेरे सुन्दरसाथजी ! अब तुम सब थोड़ा-सा प्रयास करो और अपने घरकी पूर्ण (अखण्ड) शोभा प्राप्त करो.

ए बोहोत भांत है भारी बचन, जो कदी देखो आप होए चेतन ।
इन बचन पर एक कहूं बिचार, सुनो साथ मेरे धामके आधार ॥ ८

यदि तुम सचेत होकर इन पर विचार करोगे तो पता चलेगा कि ये विभिन्न प्रकारके वचन अति महत्त्वपूर्ण हैं. हे मेरे धामकी आत्माओ ! सुनो, इनके लिए मैं एक और विचार प्रकट करती हूँ.

धडथें सिर कोई न्यारा करे, तो आधा बचन ना मुखथें परे ।
जो कोई सारे सकल संधान, तो कह्या न जाए पाओ लुगा निरवान ॥ ९

यदि कोई मेरे शरीरसे सिरको अलग भी कर दे तो भी अखण्ड परमधामके एकाध वचन भी मुखसे कहलवा नहीं सकता. शरीरके सभी अङ्गोंके सन्ध-सन्ध छेद डाले तो भी इन वचनोंके एक अक्षरका चतुर्थांश भी प्रकट नहीं कर सकता.

साथ कारन जीव सगाई जान, सेवियो धाम धनी पेहेचान ।
यों केहेके पकड न देवे कोए, यों देते न लेवे सो अभागी होए ॥ १०

सुन्दरसाथको अपने आत्माके सम्बन्धी समझकर यह कहा जा रहा है. अब धनीकी पहचान कर उनकी सेवा करो. इस प्रकार पकड़-पकड़ कर कोई भी ज्ञान नहीं देता. इस प्रकार ज्ञान देते हुए भी यदि कोई न ले, तो निश्चय ही वह अभागा है.

तुम साथ मेरे सिरदार, एह द्रष्टांत लीजो बिचार ।
रोसन बचन करूं प्रकास, सुकजीकी साख लीजो विस्वास ॥ ११

तुम मेरे शिरोमणि सुन्दरसाथ हो, इसलिए इस दृष्टान्त पर विचार करो. मैं श्रीशुकदेव मुनि द्वारा कहे हुए श्रीमद्भागवतके वचनोंको प्रकाशित (स्पष्ट) कर रही हूँ. तुम सब उन पर विश्वास करो.

ए देखके नींद टालो भरम, इन बचनों जीव करो नरम ।
बचन जीवसों करो बिचार, तब सुख अखंड होए आधार ॥ १२

इस दृष्टान्तको देख (समझ) कर अपनी भ्रमरूपी निद्राको दूर करो और इन वचनोंसे अपने कठोर जीव (चित्त) को द्रवित करो. इन वचनों पर हृदयसे

विचार करो, तब ही धामधनीका अखण्ड सुख तुम्हें प्राप्त होगा.

पीउ पेहेचान टालो अंतर, पर आतम अपनी देखो घर ।
इन घरकी कहा कहूं बात, बचन बिचार देखो साख्यात ॥ १३

धामधनीको पहचान कर अन्तरके अज्ञानको मिटा लो. अपना मूल घर-परमधाम और अपनी पर-आत्माको देखो. इस घरकी बात मैं क्या कहूँ ? इन वचनों पर विचार कर तुम स्वयं उसे साक्षात् देख लो.

अब जाहेर लीजो द्रष्टांत, जीव जगाए करो एकांत ।
चौद भवनका कहिए धनी, लीला करे बैकुंठमें घनी ॥ १४

अब स्पष्ट दृष्टान्तको समझो और इसके द्वारा जीवको जागृत कर एकान्त चिन्तन करो. चौदह लोकोंके स्वामी भगवान विष्णु वैकुण्ठ धाममें अनेक प्रकारकी लीलाएँ करते हैं.

लखमीजी सेवे दिन रात, सोए कहूं तुमको विख्यात ।
जो चाहे आप हेत घर, सो सेवें श्री परमेस्वर ॥ १५

लक्ष्मीजी दिन-रात उनकी सेवा करती हैं. हे सुन्दरसाथजी ! मैं तुमको उनकी एक लीला विस्तार पूर्वक कहती हूँ. वैकुण्ठसे उत्पन्न जो जीव अपने घर प्रेमपूर्वक जाना चाहते हैं, वे विष्णु भगवानको ही परमेश्वर जानकर उनकी सेवा करते हैं.

ब्रह्मादिक नारद कै देव, कै सुर नर करें एह सेव ।
ब्रह्मांड विषे केते लेऊं नाम, सब कोई सेवें श्री भगवान ॥ १६

ब्रह्मा, विष्णु, नारद आदि अनेक देवी-देवता और मनुष्य भी उनकी सेवा वन्दना करते हैं. इस ब्रह्माण्डमें किन-किनके नाम गिनाऊँ, सबके सब भगवान विष्णुकी उपासना करते हैं.

ए लीला सेवें कर सार, सेवतां न पावें पार ।
पेहेले सेवा करी है घनें, सो देखियो सुक व्यास बचने ॥ १७

भक्त जन वैकुण्ठकी लीलाको ही श्रेष्ठ समझकर भगवान विष्णुकी इतनी सेवा करते हैं फिर भी उन्हें प्राप्त नहीं कर पाते. पहले भी अनेक भक्तोंने

उनकी सेवा की है. इसको जाननेके लिए तुम शुकदेवीजी तथा वेदव्यासजीकी वाणीको देख लो.

ए तो है ऐसा समरथ, सेवक के सब सारे अरथ ।
अब तुम याको देखो ग्यान, बडी मतका धनी भगवान ॥ १८

भगवान विष्णु इतने समर्थ हैं कि सेवकोंकी सभी मनोकामनाएँ पूरी कर देते हैं. इतनी बड़ी बुद्धिके स्वामी भगवान विष्णुके ज्ञान (की सीमा) को भी तुम देख लो.

एक समे बैठे धर ध्यान, बिसरी सुध सरीरकी सान ।
ए हमेसा करे चितवन, अंदर काहूं न लखावे किन ॥ १९

एक समय वे ध्यान करनेके लिए बैठे थे. तब वे अपने शरीरकी भी सुधि भूल गए. यों तो वे सदैव ही चिन्तन करते हैं और कभी किसीको पता नहीं लगने देते.

ध्यान जोर एक समे भयो, लाग्यो सनेह ढांप्यो ना रह्यो ।
लखमीजी आए तिन समे, मन अचरज भए विसमे ॥ २०

एक बार वे इतने ध्यानमग्न हुए कि उनकी तल्लीनता छिपी न रह सकी. उसी समय लक्ष्मीजी वहाँ आ पहुँचीं. अपने स्वामीको ध्यानमग्न देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ.

आए लखमीजी ठाढे रहे, भगवानजी तब जाग्रत भए ।
करी बिनती लखमीजी ताहें, तुम बिन हम और कोई सुन्या नाहें ॥ २१

लक्ष्मीजी वहाँ आकर खड़ी हुईं, उसी समय भगवान विष्णु अपनी समाधिसे जागृत हुए. तब श्रीलक्ष्मीजीने विनय पूर्वक कहा, हे स्वामी ! आपके अतिरिक्त कोई और भी पूज्य है ऐसा हमने नहीं सुना था.

किनका तुम धरत हो ध्यान, सो मोहे कहो श्री भगवान ।
मेरे मनमें भयो संदेह, केहे समझाओ मोकों एह ॥ २२

हे भगवन् ! आप किसका ध्यान करते हैं ? वह मुझे बताएँ. मेरे मनमें सन्देह हो रहा है. आप मुझे समझाकर कहें.

कौन सरूप बसे किन ठाम, कैसी सोभा कहो कहा नाम ।
ए लीला सुनों श्रवन, फेर फेरके लागूं चरन ॥ २३

आप जिनका ध्यान करते हैं उनका स्वरूप क्या है और वे कहाँ रहते हैं ? उनकी शोभा कैसी है और उनका नाम क्या है ? मैं अपने कानोंसे उनकी लीला सुनना चाहती हूँ. इसलिए बार-बार आपके पाँव पड़ती हूँ.

सुनो लखमीजी एह बचन, एह बात प्रकासो जिन ।
लखमीजी कहो त्यों करूं, मेरा अंग तुमथें ना परूं ॥ २४

भगवानने कहा लक्ष्मीजी ! सुनो, इस बातको प्रकट मत करो. तुम जैसा कहो वैसा करनेके लिए मैं तैयार हूँ. मेरा अंग तुमसे अलग नहीं है.

सुनो लखमीजी कहूं तुमको, पेहेले सिवें पूछा हमको ।
इन लीलाकी खबर मुझे नांहें, सो क्यों कहूं मैं इन जुबांए ॥ २५

हे लक्ष्मीजी ! मैं तुमको कहता हूँ कि पहले भी शिवजीने मुझसे यह प्रश्न किया था. इस लीलाका ज्ञान मुझे ही नहीं है, इसलिए मैं उसे अपनी जिह्वासे कैसे प्रकट कर सकता हूँ ?

एह वचन जिन करो उचार, ना तो दुख होसी अपार ।
और इतका जो करो प्रस्न, सो चौदे लोककी करूं रोसन ॥ २६

यह बात अब मत पूछो अन्यथा तुम्हें अत्यधिक दु:ख होगा. इसके अतिरिक्त इस ब्रह्माण्डका अन्य कोई प्रश्न करो तो चौदह लोकोंकी सभी बातें मैं प्रकट कर दूँ.

जिन आसंका आनो एह, एह जिन पूछो संदेह ।
लखमीजी तुम करो करार, मुखथें बचन ना आवे बहार ॥ २७

ऐसी आशङ्का ही मत करो और ऐसी शङ्कास्पद बात भी मत पूछो. हे लक्ष्मीजी ! अब तुम शान्त हो जाओ, ये वचन मेरे मुखसे बाहर नहीं आ सकते.

तब लखमजी बडो पायो दुख, केहे ना सके कलपे अति मुख ।
मोसों तो राख्यो अंतर, अब रहूंगी में क्यों कर ॥ २८

तब लक्ष्मीजीको बड़ा दुःख हुआ. वे इतनी क्षुब्ध हुईं कि मुखसे कुछ भी कह न सकीं. वे सोचने लगीं कि मेरे स्वामी मुझसे इतना अन्तर रखने लगे हैं. अब मैं कैसे जीवित रह सकूँगी ?

नैनों आंसू बहुविध झरे, फेर फेर रमा बिनती करे ।
धनी एह अंतर सह्यो न जाए, जीव मेरा मांहें कलपाए ॥ २९

आँखोंसे अश्रुधारा बहाकर रमा (लक्ष्मीजी) बार-बार विनती करने लगी, हे स्वामी ! मुझसे यह अन्तर सहा नहीं जाता, मेरी अन्तरात्मा बहुत दुःखी हो रही है.

अब क्यों कर राखूं जीव हटाए, कलेजा मेरा कटाए ।
कंपमान होए कलकले, उठी आहें अंतसकरन जले ॥ ३०

मेरा कलेजा कट रहा है. अब मैं अपने जीवको आपसे हटाकर कैसे रखूँ. लक्ष्मीजी काँपती हुई विलखने लगी. निश्वासों (आहों) से उनका अन्तःकरण जलने लगा.

अब जो धनी करो मेरी सार, तो ए लीला केहेनी निरधार ।
बोहोत बेर मने किया सही, अनेक विध सिखापन दई ॥ ३१

हे स्वामी ! यदि आप मुझे सम्हालना चाहते हैं तो निश्चित रूपसे यह लीला आपको कहनी पड़ेगी. भगवानने उनको बहुत बार मना किया और अनेक प्रकारसे उपदेश भी दिए.

मेरा जीव क्योंए ना रहे, लखमीजी फेर फेर यों कहे ।
तब बोले श्री भगवान, लखमीजी तूं नेहेचे जान ॥ ३२

कोटान कोट जो करो प्रकार, तो एता तुम जानो निरधार ।
मेरी जुबां न बले एह बचन, एह द्रढ करो जीवके मन ॥ ३३

लक्ष्मीजी बार-बार यह कहने लगीं, मेरा जीव इस रहस्यको जाने बिना रह नहीं सकता. तब भगवानने कहा, लक्ष्मीजी ! यह निश्चित मान लो कि चाहे

तुम करोड़ों बार प्रयत्न करो तो भी मेरी जिह्वासे ये शब्द नहीं निकल सकते. यह समझकर अपने अन्तर मनको दृढ़ करो.

लखमीजी कहे सुनो अब राज, मेरे आतम अंग उपजत दाझ ।
नहीं दोष तुमारा धनी, अप्रापत मेरी है घनी ॥ ३४

लक्ष्मीजी कहती हैं, हे मेरे स्वामी ! सुनिए, मेरे शरीरके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंमें अग्नि जल रही है. वस्तुतः इसमें आपका कोई दोष भी नहीं है, मैं ही उस ज्ञानके लिए सर्वथा अयोग्य हूँ.

अब सरीर मेरा क्यों रहे, ए अगनी जीव ना सहे ।
अब आग्या मांगूं मेरे धनी, करूं तपस्या देह कसनी ॥ ३५

अब मेरा शरीर कैसे जीवित रहेगा ? इस संतापको मेरा जीव कैसे सहेगा ? अब मैं आपसे आज्ञा माँगती हूँ कि मैं कठोर तपस्या कर अपने देहको तपा लूँ (और उस ज्ञानको पानेके लिए योग्य बनूँ.)

भगवानजी बोले तिन ताओ, लखमीजी बेर जिन लाओ ।
तब कलप्या जीव दुख अनंत कर, उपज्यो वैराग लियो हिरदें धर ॥ ३६

भगवानने तत्काल कहा, लक्ष्मीजी ! इस शुभकाममें देर न करो. तब लक्ष्मीजीका जीव व्याकुल हो गया और मनमें वैराग्य उत्पन्न हुआ.

लखमीजीको आसा थी घनी, जानों विछोहा ना देसी धनी ।
अब चरनों लाग लखमीजी चले, प्यादे पांउ रोवे कलकले ॥ ३७

लक्ष्मीजीको बड़ी आशा थी कि स्वामी मुझे वियोग नहीं देंगे. अब वे भगवानके चरणोंमें प्रणाम कर कलपती हुई पैदल ही चल पड़ीं.

इन समें बिरह कियो अति जोर, बडो दुख पाए किओ अति सोर ।
एक ठौर बेठे जाए दमे देह, भगवानजीसों पूरन सनेह ॥ ३८

इस समय उन्होंने अति विरह किया. उन्हें इतना दुःख हुआ कि वह जोरसे विलाप करने लगीं और भगवानके प्रति मनमें पूर्ण श्रद्धा रखकर एक स्थान पर बैठ कर अपने शरीरको (कठोर साधनाओंसे) तपाने लगी.

सीत धूप बरषा ना गिने, करे तपस्या जोर अति घने ।
सनेह धर बैठे एकांत, एते सात भए कलपांत ॥ ३९

सर्दी, गर्मी और वर्षाकी परवाह न करते हुए उन्होंने बड़ी कठोर तपस्या की. इस प्रकार भगवानके चरणोंमें स्नेह रख कर एकान्तमें बैठे हुए सात कल्प व्यतीत हो गए.

तब ब्रह्माजी खीरसागर, आए विस्नुपें बैकुंठ घर ।
ए प्रभूजी ए क्या उतपात, लखमीजी तप करे कलपांत सात ॥ ४०

तब ब्रह्माजी और क्षीरसागर, विष्णु भगवानके पास वैकुण्ठ धाममें आए और कहने लगे, हे प्रभो ! यह क्या उत्पात हो रहा है ? लक्ष्मीजी सात कल्पसे तपस्या कर रही हैं.

भगवानजी बोले तब तांहिं, दोष हमारा कछुए नांहिं ।
तो भी बचन तुमको कहे जाए, लखमीजी बोहोत दुख पाए ॥ ४१

तब भगवानने कहा, इसमें मेरा कोई दोष नहीं है. पुनः क्षीर सागरने कहा, फिर भी हमें तो आपसे ही कहना पड़ेगा क्योंकि लक्ष्मीजी बहुत दुःख पा रही हैं.

एता रोस तुम ना धरो, लखमीजी पर दया करो ।
तुम स्वामी बडे दयाल, लखमीजी दुख पावे बाल ॥ ४२

हे स्वामी ! आप इतना रोष मत कीजिए, लक्ष्मीजी पर दया कीजिए. आप तो बड़े दयालु हैं, मेरी पुत्री लक्ष्मीजी दुःख पा रही हैं.

स्वामीजी ए ढील करो जिन, लखमीजी बुलाओ ततछिन ।
चरन ग्रहे तब खीरसागरें, फेर फेर ब्रह्मा बिनती करे ॥ ४३

हे स्वामी ! अब विलम्ब न करें. लक्ष्मीजीको इसी क्षण बुला लें. तब क्षीर सागरने विष्णु भगवानके चरण पकड़ लिए और ब्रह्माजीने भी बार-बार विनती की.

चलो प्रभुजी जाइए तित, बुलाए लखमीजी आइए इत ।
तब दया कर आए भगवान, लखमीजी बैठे जिन ठाम ॥ ४४

चलिए प्रभो ! वहाँ चलकर लक्ष्मीजीको बुलाकर यहाँ ले आएँ. तब कृपा करके भगवान वहाँ चले आए जहाँ पर लक्ष्मीजी बैठकर तपस्या कर रही थीं.

लखमीजी परनाम कर आए, श्री भगवानजी तब सनमुख बुलाए ।
लखमीजी चलो जाइए घरें, तब फेर रमा बानी उचरे ॥ ४५

लक्ष्मीजीने आकर उन्हें प्रणाम किया. तब भगवानने उन्हें अपने सम्मुख बुलाया और कहा लक्ष्मीजी ! चलो, अब अपने घर जाएँ. तब रमाने पुनः वही शब्द कहे.

धनी मेरे कहो वाही बचन, जीव बोहोत दुख पावे मन ।
जो तप करो कल्पांत एकइस, तो भी जुबां ना बले कहे जगदीस ॥ ४६

हे स्वामी ! आप मुझे वही बात बताएँ जिसके लिए मेरा मन इतना दुःखी हो रहा है. तब भगवान विष्णु (जगदीश) ने उत्तर दिया, तुम चाहे इक्कीस कल्प तक तपस्या करो तथापि मेरी जिह्वा वह बात नहीं कह पाएगी.

देखलाऊं मैं चेहेन कर, तब लीजो तुम हिरदें धर ।
तब ब्रह्मा खीरसागर दोए, लखमीजीकी बिनती होए ॥ ४७

मैं तुम्हें अभिनय (चरित्र) कर वह लीला समझा दूँगा. तब तुम उसे मनमें धारण कर लेना. तब ब्रह्माजी और क्षीरसागर दोनोंने विनय पूर्वक लक्ष्मीजीसे कहा,

लखमीजी उठो ततकाल, दया करी स्वामी दयाल ।
अब जिन तुम हठ करो, आनन्द अंतसकरनमें धरो ॥ ४८

हे लक्ष्मीजी ! अब तत्काल उठ जाओ. दयालु स्वामीने आप पर कृपा की है. अब आप हठ मत करो. अपने अन्तः करणमें आनन्द भर लो.

तब लखमीजी लागे चरने, यों बुलाए ल्याए आनन्द अति घने ।
तब ब्रह्मा खीरसागर सुख पाए फिरे, दोऊ आए आप अपने घरे ॥ ४९

तब लक्ष्मीजी भगवानके चरणोंसे लिपट गई. इस प्रकार भगवान उन्हें बुलाकर आनन्द पूर्वक घरमें ले आए. तब ब्रह्माजी और क्षीर सागर दोनों प्रसन्न मनसे अपने-अपने घर लौट गए.

अब ए बिचार तुम देखो साथ, ना बली जुबां बैकुंठनाथ ।
ग्रही वस्त भारी कर जान, तो भी बचन ना कहे निरवान ॥ ५०

हे सुन्दरसाथजी ! अब तुम विचार पूर्वक देखो कि वैकुण्ठनाथकी जिह्वा भी अखण्ड लीलाको कहनेमें असमर्थ रही. उन्होंने ध्यानमें अमूल्य वस्तुको तो ग्रहण किया किन्तु उसके विषयमें निश्चित ही एक भी शब्द कह नहीं पाए.

ना तो बैकुंठनाथको कैसी खबर, बिना तारतम क्या जानें मूलघर ।
और भी खबर कछुए ना कही, तो भी निध भारी कर ग्रही ॥ ५१

वैसे तो विष्णु भगवानको अद्वैत घरकी पहचान भी कैसे हो सकती थी ? तारतम ज्ञानके बिना वे परमधामकी लीला कैसे जान सकते ? अन्य लोगोंने भी इस लीलाके विषयमें कुछ नहीं कहा है फिर भी भगवान विष्णुने तो इस निधिको महान समझकर ग्रहण तो किया.

बिना भारी कौन भार उठावे, मुखथें बचन कह्यो न जावे ।
जब भया कृस्न अवतार, रुकमनी हरन कियो मुरार ॥ ५२

विशिष्ट आत्माके बिना ब्रह्म लीलाका महत्त्व कोई जान नहीं सकता, इसलिए मुखसे ऐसे वचन नहीं निकलते. जब द्वापर युगमें श्रीकृष्णजीका अवतरण हुआ, तब मुरारी श्रीकृष्णने रुक्मिणीजीका हरण किया.

माधवपुर व्याही रुकमनी, धवल मंगल गावे सोहागनी ।
गाते गाते लिया व्रज नाम, तब पीछे भोम पडे भगवान ॥ ५३

रुक्मिणीजीका विवाह माधवपुरमें हो रहा था. उस समय सुहागिनी स्त्रियाँ मंगल बधावा गा रही थीं. गाते हुए उन्होंने व्रजलीलाका गायन किया. तब

श्रीकृष्ण भगवान मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़े.

तब नैनों आंसू बोहोत जल आए, काहूपें ना रहे पकराए ।
सुख आनन्द गयो कहूं चल, अंग अंतसकरन गए सब गल ॥ ५४

तब उनकी आँखोंमें अश्रुधारा बहने लगी. वे किसी भी प्रकार सम्हाल नहीं पाए. उनके अङ्ग-प्रत्यङ्ग शिथिल हो गए, जिससे विवाहके आनन्दमें भंग पड़ गया.

तब सब किने पायो अचरज, यों लखमीजीको देखाया व्रज ।
सोले कला दोऊ सरूप पूरन, ए आए हैं इन कारन ॥ ५५

यह देखकर सभी आश्चर्यचकित रह गए. इस प्रकार भगवानने लक्ष्मीजीको व्रजका अनुभव कराया. सोलह कलासे पूर्ण वे (भगवान विष्णु) स्वयं और लक्ष्मीजी इस प्रकार ये दोनों स्वरूप इसी रहस्यके लिए अवतार लेकर आए हैं.

[इस घटनासे लक्ष्मीजीको पता चला कि भगवान सदैव अखण्ड व्रजलीलाका ध्यान किया करते हैं.]

लोक जाने आए असुरों कारन, विस्नु कृस्न देह धर पूरन ।
ए हुकमें असुर कै देवें उडाए, ऐसा बल है बैकुंठ राए ॥ ५६

संसारके लोग यह समझते हैं कि विष्णु भगवानने श्रीकृष्णके रूपमें पूर्ण अवतार केवल असुरोंको मारनेके लिए लिया था. वैकुण्ठनाथ इतने समर्थ हैं कि वे आज्ञा मात्रसे असंख्य असुरोंका संहार कर सकते हैं.

क्या समझे लोक अंदरकी बात, देखलावने लखमीजीको आए साख्यात ।
उठ बैठे श्रीकृस्नजी पूरन किया काम, यों लखमीजीकी भानी हाम ॥ ५७

सामान्य लोग ऐसे रहस्यको क्या समझ सकते हैं ? वस्तुतः भगवान विष्णु लक्ष्मीजीको अपने आराध्यका परिचय देनेके लिए संसारमें साक्षात् उतर आए हैं. जब लक्ष्मीजीने संकेतको समझ लिया, तब श्रीकृष्णजी उठकर बैठ गए. इस प्रकार उन्होंने लक्ष्मीजीकी मनोकामना पूर्ण की.

ए चितमें बिचारो रही, ए इसारत सुकें कही ।
ए लीला सुकें नीके कर गाई, जो लखमीजीको भगवानें देखाई ॥ ५८

तुम अपने मनमें विचार करो कि ऐसा सङ्केत शुकदेवजीने श्रीमद्भागवतमें दिया है. श्रीकृष्णजीकी बाललीलाका वर्णन शुकदेवजीने अच्छी प्रकारसे किया है, जिसे विष्णु भगवानने लक्ष्मीजीको सङ्केत द्वारा समझाया.

ए व्रज लीला जो अपनी, जाकी अस्तुत करत हैं धनी ।
पेहेले जो लीला तुम व्रजमें करी, अक्षर सदासिव चितमें धरी ॥ ५९

यह हम ब्रह्मात्माओंकी अखण्ड व्रज लीला है जिसकी स्तुति स्वयं हमारे सद्गुरु धनीने की है. पहले तुमने व्रजमें जो लीलाएँ कीं, उन्हें स्वयं अक्षरब्रह्मने अपने हृदय (सदाशिव) में अखण्ड किया.

रास लीला जो तुम वनमें किध, सो अक्षर सरूपें ग्रही जाग्रत बुध ।
ता लीला को ए प्रतिबिंब, जो विस्नें देखाई रमाको सनंध ॥ ६०

चिन्मय वृन्दावनमें तुमने जो रास लीला की है, उसे भी अक्षरब्रह्मने अपनी जागृत बुद्धिमें अखण्ड कर लिया. उस लीलाका प्रतिबिम्ब (जो गोलोक धाममें पड़ा है उसे ही) विष्णु भगवानने रमा (श्रीलक्ष्मीजी) को विधिवत् दिखाया.

तो बचन तुमको कहे जाए, जो तुम धामकी लीला मांहें ।
व्रजबालो पीउ सो एह, बचन आपनको केहेत हैं जेह ॥ ६१

ये शब्द तुम्हें इसलिए कहे जा रहे हैं कि तुम स्वयं धामकी लीलामें रमण करने वाले हो. ये ही व्रजवल्लभ श्रीकृष्ण श्रीदेवचन्द्रजीके रूपमें आए हैं और हम सबको ये वचन (तारतम वाणी) कह रहे हैं.

रास मिने खेलाए जिने, प्रगट लीला करी है तिने ।
धनी धामके केहेलाए, ए जो साथको बुलावन आए ॥ ६२

रास मण्डलमें हमें जिन श्रीकृष्णजीने रमण कराया था, इस लीलाको भी उन्होंने ही (सद्गुरुके रूपमें आकर) प्रकट किया है. परमधामके धनी सुन्दरसाथको बुलानेके लिए (सद्गुरुके रूपमें) पधारे हैं.

तुम कारन मैं कह्या द्रष्टांत, जीवसों बचन बिचारो एकांत ।
बैकुंठ ठौर तितका ग्यान, केहेनेवाला श्रीभगवान ॥ ६३

लखमीजी तहां श्रोता भई, कै विध कसनी कर कर रही ।
तो भी न पाया एक बचन, तुम धाम धनी ले बैठे धन ॥ ६४

तुम्हें समझानेके लिए मैंने यह दृष्टान्त दिया है. एकाग्र मनसे एकान्तमें इस पर विचार करो. वैकुण्ठ जैसा उत्तम स्थान, वहाँका ज्ञान और भगवान विष्णु जैसे वक्ता तथा लक्ष्मीजी वहाँ श्रोता बनी हुई हैं. उन्होंने अनेक प्रकारसे तपस्या की, फिर भी (इस लीलाका) एक शब्द भी उन्हें सुननेको नहीं मिला, और हे सुन्दरसाथजी ! तुम तो परब्रह्म परमात्माकी अपूर्व निधि ग्रहण करके बैठे हो.

अजहूं ना तुम टालो भरम, क्यों ना करत हो जीव नरम ।
ए नौतनपुरी जो कही नगरी, श्रीदेवचन्दजीएं लीला करी ॥ ६५

अब भी तुम अपने भ्रमको दूर नहीं कर रहे हो. मनकी शङ्काओंको मिटाते हुए अपने जीवको नरम क्यों नहीं बना लेते ? यह वह नवतनपुरी धाम है, जहाँ श्री देवचन्द्रजीने प्रकट होकर परमधामकी लीला की है.

ए प्रगट बचन किए अपार, तो भी ना हुई तुमें सुध सार ।
छोडो अमल माया जोर कर, जीव जगाओ बचन चित धर ॥ ६६

उन्होंने ऐसे अमूल्य वचन कहे हैं तथापि आपको तनिक भी सुधि नहीं हुई. अब प्रयत्न कर इस मायाके नशीले प्रभावसे मुक्त हो जाओ. धनीके वचनों पर विचार कर अपने जीवको जगा लो.

ए माया देखो न्यारे होए, भई तारतमकी रोसनाई दोए ।
जो बानी श्रीधनिएं दई, सो आतमके अंदर तुम क्यों ना ग्रही ॥ ६७

तुम मायासे अलग रहकर (अनासक्त होकर) इसे देखो. सद्गुरुने दो बार (एक बार स्वयं प्रत्यक्ष रूपमें और दूसरी बार मेरे हृदयमें बैठकर) तारतम ज्ञानका प्रकाश फैलाया है. श्रीदेवचन्द्रजीने जो वाणी कही है, उसे तुम अपनी आत्मामें क्यों ग्रहण नहीं करते ?

माया गुन सब करो हाथ, पेहेचानो प्रानको नाथ ।
अब एता आतमसों करो बिचार, कौन बचन कहे आधार ॥ ६८

मायासे उत्पन्न सभी गुण अंग इन्द्रियोंको अपने वशमें करो और प्राणनाथ सद्‌गुरुको पहचान लो. अब अपनी आत्मासे इतना विचार करो कि हमारे प्राणाधारने कौनसे वचन कहे हैं.

जोलों जीव विचार विकार न काटे, ज्यों छीट ना लगे घडे चिकटे ।
इन्द्रावती कहे सुनो साथ, जिन छोडो अपनो प्राणनाथ ॥ ६९

जब तक जीव विचार कर अपने विकार दूर नहीं करता, तब तक जैसे चिकने घड़े पर गिरी हुई पानीकी बूँदे नहीं टिकतीं, उसी प्रकार उसके मन पर सद्‌गुरुके ज्ञानका कोई प्रभाव नहीं पड़ता. इन्द्रावती कहती है, हे सुन्दरसाथजी ! सुनो, अब तुम अपने प्राणनाथ सद्‌गुरुको मत छोड़ो.

फेर फेर ना आवे ए अवसर, जिन हाम ले जागो घर ।
थोडेमें कह्या अति घना, जान्या धन क्यों खोइए अपना ॥ ७०

ऐसा अवसर बार-बार नहीं आएगा. इसलिए अपनी समस्त मायावी इच्छाओंका त्याग करते हुए परमधाममें जागृत हो जाओ. थोड़े-से ही शब्दोंमें मैंने बहुत कुछ कह दिया है. अपनेसे परिचित सद्‌गुरुरूपी धनको क्यों खो रहे हो ?

हम आगे ना समझे भए ढीठ, तो दई श्रीदेवचन्दजीएं पीठ ।
ना तो क्यों छोडे साथको एह, जो कछू किया होए सनेह ॥ ७१

पहले भी हम ढीठ बनकर बैठे रहे, तभी तो श्रीदेवचन्द्रजी हमें पीठ देकर चले गए. यदि हमने कुछ भी स्नेह दिखाया होता, तो वे हम सुन्दरसाथको छोड़कर क्यों चले जाते ?

अब फेर आए दूजा देह धर, दया आपन ऊपर अति कर ।
अब ए चेतन कर दिया अवसर, ज्यों हंसते बैठे जागिए घर ॥ ७२

अब वे पुनः दूसरा शरीर धारण कर हमारे बीच पधारे हैं. उन्होंने हम पर अपार दया की है. तारतम ज्ञान द्वारा हमें सचेत कर उन्होंने जागृतिके लिए

पुनः यह अवसर दिया है, जिससे हम सब सुन्दरसाथ हँसते हुए परमधाममें उठ बैठें.

सब मनोरथ हुए पूरन, जो ए बानी बिचारो अंतसकरन ।
ए तो इन्द्रावती कहे फेर फेर, जो धाम धनी कृपा करी तुम पर ॥ ७३

यदि इस वाणी पर अन्तःकरणसे विचार कर देखोगे तो ज्ञात होगा कि सभी मनोकामनाएँ पूर्ण हो गईं हैं. यह तो इन्द्रावती तुम्हें बार-बार कह रही है क्योंकि धामधनीने तुम पर अपार कृपा की है.

प्रकरण २९ चौपाई ७३५

प्रगटबानी प्रकासकी-राग सामेरी

सोईने सोई सूते क्या करोजी, या अगिन जेहेर जिमी मांहीं जी ।
जाग देखो आप याद करो, ए नींद निगल गई जीवके तांई जी ॥ १

हे सुन्दरसाथजी ! आगके समान जलती हुई इस विषैली भूमि (माया) में सो-सोकर तुम क्या करोगे ? भ्रमसे जागकर अपने मूल स्वरूपको याद करो. यह अज्ञानरूपी नींद जीवको निगल रही है.

ए नींद तिनको ले गई रे, जो नाहीं साथी आपन जी ।
इन ठगनी जिमिएं बोहोतक ठगेरे, तुम जिन सोओ इत छिन जी ॥ २

यह नींद उन्हीं जीवोंको वशीभूत कर ले जा रही है जो अपने साथी ब्रह्मात्माएँ नहीं हैं. इस ठगनी मायाने बहुत लोगोंको ठग लिया है. इसलिए यहाँ पर तुम एक क्षण भी (अज्ञान रूपी नींदमें) सोओ मत.

नाहीं रे नींद कोई घेन घारन, नींद होए तो लीजे उठाए जी ।
उठाए जीवको खडा कीजे, फेर पडे सोई उलटाए जी ॥ ३

यह कोई साधारण नींद नहीं है. नींद होती तो उससे जगाया भी जा सकता है, किन्तु इस भ्रमरूपी निद्रासे उठाकर किसीको खड़ा भी कर दिया जाए तथापि वह पुनः उलटकर उसीमें जा गिरता है.

सोई घेन ने सोई घारन रे, सोई घूटन अधकी आवे जी ।
याही जिमी और याहीं नींद थे, धनी बिना कौन जगावे जी ॥ ४

वही नशा है और वही गहरी नींद है. उसी प्रकार खर्राटे आ रहे हैं. इस माया और अज्ञानरूपी नींदसे सद्‌गुरुके बिना भला कौन जगाएगा ?

इन जेहेर जिमीसे कोई न उबरया, तुम सूते तिन ठाम जी ।
ए जेहेर जिमी अगिन उजाड रे, ए नहीं बस्ती इन गाम जी ॥ ५

इस विषाक्त धरतीसे कोई भी पार नहीं जा सका. तुम स्वयं ऐसे स्थान पर सो रहे हो. यह विषाक्त भूमि अग्निके समान दाहक है और निर्जन है. यह रहने योग्य वस्ती या गाँव नहीं है.

ए विषकी जिमी और विषके बिछौंने, विषैका आकार जी ।
अष्ट धात मिने सब विषके, विषैका विस्तार जी ॥ ६

यह धरती विषयुक्त है और यहाँकी शय्या भी विषयोंके विषसे भरी हुई है. उस पर सोने वाला हमारा शरीर भी विषका ही घर है. इसकी अष्ट धातुएँ पाँच तत्त्व और तीन गुण (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश तथा सत, रज और तम) भी विषसे ही निर्मित हैं. इस प्रकार सर्वत्र विषका ही विस्तार है.

गुन पख इन्द्री सब विषके, विषैको सब आहार जी ।
आतम निरमल एक वतनकी, सो तो कही निराकारजी ॥ ७

इस शरीरके गुण, पक्ष, इन्द्रियाँ सब विषकी ही बनी हुई हैं. इन सबका आहार भी विष ही है. इनमें एक आत्मा ही निर्मल है और वह भी परमधामसे अवतरित हुई है. उसे देख न पानेके कारण निराकार कह दिया गया है.

विषकी तलाई ने विषके ओढना, विष पलंग दिया बिछाए जी ।
विषका सिराना ने विषका ओछाड, विष पंखा विष बाए जी ॥ ८

यहाँ पर विषका ही गद्दा है और ओढ़ना भी विषका ही है, पलंग भी विषका ही बिछा दिया है. तकिया भी विषका है और चादर भी विषकी है. इसी प्रकार पंखा भी विषका है, जिससे हवा भी विषैली आती है.

जागते विष और सुपने विष रे, नींदमें विष निदान जी ।
बाहेरका विष क्योंकर कहूं रे, विष आंधी बाए अग्यान जी ॥ ९

जागृत अवस्था और स्वप्न, दोनोंमें यह संसार विषसे व्याप्त है. नींदमें तो निश्चय ही विष ही है. अब बाहरके विषकी क्या बात कहूँ ? सर्वत्र अज्ञानरूपी विषकी आँधी चल रही है.

वस्तर विषके भूषन विषके, सकल अंग विष साज जी ।
ए विष नख सिख जीवको भेद्यो, सो क्यों छूटे बिना श्री राजजी ॥ १०

यहाँ पर वस्त्राभूषण सभी विषके हैं. यहाँ तक कि सारे शरीरकी साज-सज्जा भी विषसे ही परिपूर्ण है. यह विष नखसे शिख तक जीवको बींध रहा है. धामधनी श्रीराजजीकी कृपाके बिना यह कैसे छूट सकता है ?

जोर कर तुम जगाओ जीवजी, नहीं सूतेकी एह जिमी जी ।
ज्यों ज्यों सोइए त्यों त्यों बाढे विष विस्तार, पीछे दुख पावे जीव आदमी जी ॥ ११

तुम प्रयत्नपूर्वक अपने जीवको जगा लो. यह भूमि सोनेके लिए नहीं है. इसमें जैसे-जैसे सोते (बेसुध होते) जाओगे वैसे वैसे ही विषका प्रभाव बढ़ता जाएगा. बादमें मनुष्यका जीव इससे दुःख पाएगा.

ए जिमी तुम क्यों न छोडो, अजूं नाहीं नींद बाढी जी ।
इन जिमी नींद दुखडे घनें, पीछे क्योंए न जाए काढी जी ॥ १२

इस विषैली भूमिको तुम क्यों नहीं छोड़ते ? अभी भी नींदका प्रभाव इतना अधिक नहीं हुआ है. इस मायावी नींदमें बहुत-से दुःख हैं. फिर इससे किसी प्रकार निकला भी नहीं जा सकेगा.

बोहोत देखें दुख अनेक होएसी, ताथें उठो ततकाल जी ।
जलके जीवको घर जलमें, ज्यों रहे मकडी मांहें जाल जी ॥ १३

मायाको अधिक देखनेसे अनेक दुःख प्राप्त होंगे. इसलिए इससे तत्काल जागृत हो जाओ. जैसे जलके जीवका घर जल ही होता है और जैसे मकड़ी अपने ही बुने जालेमें फँसती चली जाती है.

सब कोई जाली गूंथे अपनी, फेर अपनी गूंथीमें उरजाए जी ।
उरझे पीछे कै दुख देखे, दुखैमें जीव जाए जी ॥ १४

यहाँ पर सब जीव स्वयं अपना जाल बुन रहे हैं और पुनः अपने ही गूँथे हुए बन्धनोंमें उलझ जाते हैं. इसमें फँस जाने पर अनेक प्रकारके दुःख भोगते (देखते) हुए, अन्तमें दुःखमें ही प्राण निकल जाते हैं.

बोहोत दुख देखे जीव जाते, तो भी गूंथे जाली फेर फेर जी ।
दोष नहीं इन मकडीका रे, इनका घर हुआ जाली अंधेर जी ॥ १५

शरीरसे निकलते समय यह जीव बहुत-से दुःख देखता है फिर भी बार-बार जाली बुनता रहता है. इस मकड़ीका तो कोई दोष ही नहीं है क्योंकि इसका तो घर ही अन्धकारमय जाल है.

अपने घर इत नहीं साथजी, चौद भवनमें कित जी ।
ता कारन पीउजी करे रे पुकार, तुम क्यों सूते इत जी ॥ १६

हे सुन्दरसाथजी ! अपना घर तो इन चौदह लोकोंमें कहीं भी नहीं है. इसलिए सद्गुरु तुम्हें बार-बार पुकार कर कहते हैं कि तुम यहाँ पर क्यों सोए हुए हो ?

ओ दुखके घर सो भी ना छोडे, तुम याद ना करो सुखके घर जी ।
सास्त्र सबोंपें साख दिवाई, तुम अजहूं ना देखो चित धर जी ॥ १७

वह मकड़ी अपने दुःखदायी (नाशवान) घरको भी नहीं छोड़ती और तुम अखण्ड सुखोंके भण्डार अपने घर परमधामको याद भी नहीं करते. सद्गुरुने सभी शास्त्रोंके द्वारा परमधामकी साक्षियाँ दी हैं. अब भी तुम एकाग्र चित्त होकर देखते नहीं हो.

बेहद सुख पार बेहद घर, बेहद पार श्रीराज जी ।
अक्षरातीत सुख अखंड देवेको, मैं जगाऊं तुमारे काज जी ॥ १८

बेहदसे परे अक्षर ब्रह्मके सुख असीम हैं और उससे भी परे अखण्ड परमधाममें अपने धनी श्रीराजजी हैं. इन्हीं अक्षरातीत धनी श्रीराजजीके अखण्ड सुख देनेके लिए मैं तुम्हें तुम्हारी ही भलाईके लिए जगा रही हूँ.

पीउ पुकार पुकार थके, तुम अजहूं जल बिना गोते खात जी ।
दिन उगते संझा होत है, पीछे आडी पडेगी रात जी ॥ १९

सद्गुरु धनी तुम्हें पुकार-पुकार कर थक गए, तुम अब भी इस भवसागरमें जलके बिना ही गोते खा रहे हो. दिन उगते (जन्म होते) ही (जीवनकी) सन्ध्या आरम्भ होती है अर्थात् जीवनका कोई भरोसा नहीं है. बादमें चौरासी लाख योनिरूपी रात जागनेके लिए अवरोधक बनेगी.

रात पडी तब कोई न जागे, पीछे कोई ना करे पुकार जी ।
निसाए नींद जोर बाढेगी, पीछे बढेगा विष विस्तार जी ॥ २०

रात पड़ने पर अर्थात् चौरासी लाख योनियोंमें भटकने पर कोई जाग नहीं पाता. फिर इस प्रकार पुकार कर जगाने वाला भी कोई नहीं होगा. चौरासी लाख योनिरूपी रातमें नींद (अज्ञान) का जोर बढ़ेगा और जन्म मरणरूपी विष फैलता ही चला जाएगा.

संझा लगे धनी रहेसी साथ कारन, तुम अजहूं ना नींद निवारो जी ।
पहेचान पीउ सुख लीजिए, तुम अपना आप वार डारो जी ॥ २१

हे सुन्दरसाथजी ! जीवनकी सन्ध्या होने तक तुम्हारे लिए धामधनी तुम्हारे साथ रहेंगे, किन्तु तुम अब भी निद्राका परित्याग नहीं कर रहे हो. अपने धनीको पहचान कर असीम सुख प्राप्त करो और अपने आपको उनपर समर्पित कर दो.

पुकार करते रात पडी, पीउ रात ना रेहेसी निरधार जी ।
जो दुसमन तुमको भुलावत हैं, सो तुम क्यों न करत बिचार जी ॥ २२

तुम्हें पुकारते पुकारते रात होने लगी है. निश्चय ही जीवन चूक जाने पर (रातमें) सद्गुरु तुम्हारे पास नहीं रहेंगे. गुण, अंग, इन्द्रियाँ तथा माया, मोहरूपी शत्रु तुम्हें भुला रहे हैं. इस बात पर तुम क्यों नहीं विचार करते ?

ए विषम भोम छोडते जो आडी करे, सो जानियो तेहेकीक दुसमन जी ।
जो लेने न देवे सुख अखंड, सो क्यों न देखो सुन बचन जी ॥ २३

इस विषम धरतीका मोह छोड़ते हुए जो अवरोध डालते हैं, निश्चित जान

लो कि वे तुम्हारे शत्रु हैं. जो तुम्हें परमधामका अखण्ड सुख नहीं लेने दे रहे हैं, सद्गुरुके वचन सुनकर भी तुम उन शत्रुओंको क्यों नहीं देख रहे हो ?

ए दुसमन तेरे विष भरे, जिन लियो संसार घेर जी ।
ओ भुलावत तुमको जुदी भांतें, तुम जिन भूलो इन बेर जी ॥ २४

ये सब विषय विषसे भरे हुए तुम्हारे शत्रु हैं, जिन्होंने सारे संसारको घेर लिया है. ये सब तुम्हें विभिन्न रीतिसे भुला रहे हैं, किन्तु तुम इस बार भूलो मत.

भी तुमको देखाऊं दुसमन, जिनहूं न छोड्या कोए जी ।
सो तुमको देखाऊं जाहेर, तुमको अंदर झूठ लगावे सोए जी ॥ २५

तुम्हें मैं और भी ऐसे शत्रु दिखाऊँ, जिन्होंने इस संसारमें किसीको भी अछूता नहीं छोड़ा है. मैं तुम्हें उन शत्रुओंको प्रत्यक्ष दिखाती हूँ. वे ही तुम्हारे अन्दर बैठकर तुम्हें झूठकी ओर प्रवृत्त कर रहे हैं.

गुन अंग इन्द्री देखो रे चलते, जो उलटे लगे संसार जी ।
एही दुसमन विसेखे अपने, सो करत हैं सिरपर मार जी ॥ २६

तुम अपने गुण, अंग, इन्द्रियोंको प्रवृत्त होते हुए देखो, जो उलटकर संसारकी ओर लगे हैं. विशेषरूपसे ये ही अपने शत्रु हैं जो हमारे सिर पर प्रहार कर हमें बेसुध बना देते हैं.

तुम करो लडाई इनसों, मार टूक करो दुसमन जी ।
फेर वाको उलटाए चेतन करो, ज्यों होवें तुमारे सजन जी ॥ २७

अब तुम (विवेक द्वारा) इनसे युद्ध करो. संयमकी मार देकर इन शत्रुओंको टुकड़े-टुकड़े कर दो. फिर उन्हें उलटाकर (परमात्माकी ओर लगाकर) चेतन करो, जिससे ये तुम्हारे स्वजन बन जाएँ.

सनमंधी साथकों कहे बचन, जीवको एता कौन कहे जी ।
ए बानी सुन ढील करे क्यों वासना, सो ए विषम भोम क्यों रहे जी ॥ २८

अपने सम्बन्धी सुन्दरसाथको ही इतने वचन कहे जा रहे हैं, अन्यथा साधारण

जीवको इतना कौन कहता है ? इन वचनोंको सुनकर ब्रह्म आत्माएँ ढील क्यों करेंगीं ? इस विषमय भूमिकामें वे कैसे रह सकतीं हैं ?

छलकी भोम को तुम समझत नाहीं, ना सुनत मेरी बात जी ।
जानत हो दिन दो पोहोर रेहेसी, पाओ पलमें हो जासी रात जी ॥ २९

इस प्रपञ्ची मायाको तुम नहीं समझते और मेरी बात भी नहीं सुनते हो. तुम यह समझ रहे हो कि जीवनका मध्याह्न बना रहेगा किन्तु पल भरमें ही अन्धेरी रात (मृत्यु) छा जाएगी.

अब हीं रात आई देखोगे, उठसी अनेक अंधेर जी ।
जीव अंधेर जब देख उरझसी, तब आवसी विषके फेर जी ॥ ३०

अभी तुम चौरासी लाख योनिरूपी रात देखने लगोगे. जिसमें चारों ओर अनेक प्रकारका अन्धकार (अज्ञान) दिखाई देगा. उस अन्धकारको देखकर जीव आवागमनके चक्रमें उलझ जाएगा. तब वह पुनः जन्म-मृत्युरूपी विषचक्रमें आ आएगा.

विषके फेर अनेक उपजसी, करम केरा जे दुख जी ।
भी फिरसी फेर अनेक विधके, कहूं जीवकों न होवें सुख जी ॥ ३१

इस विषचक्रमें अनेक जन्म होंगे और उनमें कर्मोंके अनुसार सुख-दुःख भोगना पड़ेगा. इस प्रकार नाना योनियों में भटकते हुए जीवको कहीं भी सुख नहीं मिल सकेगा.

सुनियो जो तुम हो ब्रह्मसृष्ट के, जिन आओ मांहें रात जी ।
इन रातके दुख घने दोहेले, पीछे उडसी अंधेर प्रभात जी ॥ ३२

हे सुन्दरसाथजी ! सुनो, यदि तुम ब्रह्मसृष्टि हो तो चौरासी लाख योनिरूपी रातमें मत जाओ,

दूर होसी इन रातके प्रभात, रात छेह क्योंए न आवे जी ।
दुखकी रात घनूं लागसी दोहेली, पीछे फजर मुख न देखावे जी ॥ ३३

(चौरासी लाख योनिरूपी) इस लम्बी रात्रिके बाद आनेवाला प्रभात (मानव तन) तो बहुत दूर होगा. क्योंकि रातका कोई अन्त नहीं है. दुःखकी यह

रात बहुत कष्टदायी लगेगी और प्रातःकाल (मानव जीवन) पुनः कहीं दिखाई नहीं देगा.

महाप्रले होसी जब लग, तबलों रेहेसी अंधेर जी ।
ता कारन पीउजी करे रे पुकार, जिन भूलो इन बेर जी ॥ ३४

महाप्रलय तक यह अन्धकारमय रात्रि बनी रहेगी. इसीलिए सद्‌गुरु धनी तुम्हें पुकार-पुकार कर जगा रहे हैं, ऐसा सुअवसर पाकर तुम मत भूलो.

तारतम के उजाले कर, रोसन कियो इन सूल जी ।
कै कोट ब्रह्मांड देखाई माया, पाया अंकूर पेड मूल जी ॥ ३५

सद्‌गुरुने तारतम ज्ञानका प्रकाश फैलाकर मानव जन्मके इस अवसरको प्रकाशमय बना दिया है. उन्होंने करोड़ों ब्रह्माण्डों तक विस्तृत माया दिखा दी फिर तारतम ज्ञानके द्वारा परमधामका मूल अङ्कुर प्राप्त किया.

पीउ पधारे बुलावन तुमकों, तो होत है एती पुकार जी ।
यों करते जो नहीं मानो, तो दुख पाए चलसी निरधार जी ॥ ३६

प्रियतम धनी स्वयं तुम्हें बुलानेके लिए पधारे हैं, इसलिए इतनी पुकार हो रही है. इतना करने पर भी यदि नहीं मानोगे तो निश्चित ही कठिन दुःखोंको भोगकर यहाँसे चले जाओगे.

विषम बडा जल मांहें अंधेर, कै लगसी लेहेरें निघात जी ।
विसेखे जीव बेसुध होसी, नहीं सुनोगे निध साख्यात जी ॥ ३७

यह संसार (मोह जल) बड़ा विषम है और इसमें चारों ओर अज्ञानरूपी अन्धकार छाया हुआ है, इसकी अनेक प्रकारकी लहरें निश्चय ही जीव पर प्रहार करतीं रहेंगी. यदि उस समय तुम साक्षात् निधि (सद्‌गुरुका ज्ञान) नहीं सुनोगे तो तुम्हारा जीव विशेषरूपसे बेसुध हो जाएगा.

मांहें मछ गलागल, लेहेरें आडे टेढे बेहेवट जी ।
दसों दिसा कोई ना सूझे, फिर वलसी अंधकार पट जी ॥ ३८

इस मोहजलमें बड़े-बड़े भयङ्कर मगरमच्छ हैं और इसमें (काम, क्रोध आदिकी) आड़ी-टेड़ी लहरें उठ रहीं हैं, दशों दिशाओंमें कुछ नहीं सूझता

है और इस अन्धकारका पर्दा फिर सब पर छा जाएगा.

तुम हो अंग मेरे के, जिन देखो मायाको मरम जी ।
धाम धनी आए तुम कारन, तुमें अजहूं न आवे सरम जी ॥ ३९

हे मेरे सुन्दरसाथजी ! तुम तो मेरे ही अंग हो, मायाके मर्मको मत देखो. धामके धनी तुम्हारे कारण ही इस संसारमें आए हैं, किन्तु तुम्हें अब भी लज्जा नहीं आ रही है.

ए नींद तुम को क्यों कर उडसी, जोलों न उठो बल कर जी ।
सेवा करो समे पीउ पेहेचान, याद करो आप घर जी ॥ ४०

जब तक तुम स्वयं प्रयत्न नहीं करोगे तब तक यह निद्रा कैसे उड़ सकती है ? इसी समय अपने धनीको पहचान कर उनकी सेवा करो और अपने मूल घर परमधामको याद करो.

ए अमल तुमको क्यों रे उतरसी, जो जेहेर चढ्या अति भारी जी ।
पीउजीके बान तो तोडे संधान, पर तुमको केहे केहे हारी जी ॥ ४१

मायाका यह नशा तुमसे कैसे उतरेगा जो विषकी भाँति अधिक चढ़ चुका है. सद्गुरुकी वाणी तो संध-संधको तोड़ देने वाली है, किन्तु मैं तुम्हें कह-कहकर हार गई हूँ.

जो जानो घर पाइए अपना, तो एक राखियो रस बैराग जी ।
सकल अंगे सुध सेवा कीजो, इन विध घर बैठो जाग जी ॥ ४२

यदि तुम अपना घर-परमधाम पाना चाहते हो तो संसारसे वैराग्य और धनीसे प्रेम करो. तुम अपने सब अंगोंसे धनीकी सेवा करो. इस प्रकार जागकर अपने परमधाममें बैठ जाओ.

जो जानो इत जाग चलें, तो लीजो अरथ प्रकास जी ।
जीवको कहियो ए कह्या सब तोकों, सिर लिए होसी उजास जी ॥ ४३

यदि तुम यहाँसे जागकर चलना चाहते हो तो प्रकाश ग्रन्थके अर्थको ग्रहण करो. अपने जीवसे कहो कि यह वाणी सब तुम्हारे लिए ही कही गई है.

यदि तुमने इसे शिरोधार्य किया तो तुम्हें ज्ञानका प्रकाश (प्राप्त) होगा.

इन उजाले जेहेर उतरसी, तब बढते बल नहीं बेर जी ।
पर आतमको आतम देखसी, तब उतर जासी सब फेर जी ॥ ४४

इस प्रकाशसे मायाका जहर उतर जाएगा. तब आत्म-बल बढ़ते देर नहीं लगेगी. जब आत्मा पर आत्माको पहचान लेगी (साक्षात्कार होगा) तब जन्म-मरणका यह चक्र समाप्त हो जाएगा.

एह विध कर कर आतम जगाई, तब होसी सब सुध जी ।
सुध हुए पूर चलसी प्रेमके, होसी जाग्रत हिरदें बुध जी ॥ ४५

यदि इस प्रकार अपनी आत्माको जगा लोगे तब तुम्हें घरकी तथा धामधनीकी सब सुधि हो जाएगी. इस प्रकार सुधि होने पर प्रेमका प्रवाह बहने लगेगा और हृदयमें जागृत बुद्धिका प्रकाश फैल जाएगा.

निरमल हिरदेंमें लीजो बचन, ज्यों निकसे फूट बान जी ।
ए कह्या ब्रह्मसृष्ट ईस्वरी को, ए क्यों लेवे जीव अग्यान जी ॥ ४६

सद्गुरुके इन वचनोंको अपने निर्मल हृदयमें धारण करो, जिससे यह वाणी अङ्कुरित हो सके. ब्रह्मसृष्टि और ईश्वरीय सृष्टिके लिए ही यह सब कहा गया है. अज्ञानी जीव इसे कैसे धारण (ग्रहण) कर सकते हैं ?

माया जीव हममें रेहे ना सके, सो ले ना सके एह बचन जी ।
ना तो सबद घने लागसी मीठे, पर रेहेनें ना देवे झूठा मन जी ॥ ४७

मायासे उत्पन्न जीव हमारे साथ नहीं रह पाएँगे. वे इन वचनोंको ग्रहण नहीं कर सकते. अन्यथा इस वाणीके शब्द उन्हें भी अत्यधिक मधुर लगते, परन्तु यह झूठा मन उन्हें अन्तरमें टिकने नहीं देगा.

जो कोई जीव होए मायाको, सो चलियो राह लोक सत जी ।
जो कोई होवे निराकार पार को, सो राह हमारी चलत जी ॥ ४८

जो मायासे उत्पन्न जीव हैं वे इसी ब्रह्माण्डमें सत लोक (वैकुण्ठ) की राह पर चलें. जो कोई निराकारके पार परमधामके होंगे, वे ही हमारी राह पर चल सकते हैं.

बासनाको तो जीव न कहिए, जीव कहिए तो दुख लागे जी ।
झूठेकी संगते झूठा केहेत हों, पर क्या करों जानों क्योंए जागे जी ॥ ४९

ब्रह्मवासनाको तो जीव नहीं कहना चाहिए. उन्हें जीव कहते हुए मुझे दुःख होता है. इस झूठी मायाके सङ्गतके कारण उन्हें भी झूठा (जीव) कहना पड़ रहा है. परन्तु क्या करें ? किसी भी प्रकार वे जाग जाएँ, यही हमारा प्रयत्न है.

ए कठन बचन मैं तो केहेती हों, ना तो क्यों कहूं बासनाको जीव जी ।
जिन दुख देखे गुन्हेंगार होत है, आग्या ना मानो पीउ जी ॥ ५०

इसलिए मुझे ये कठिन वचन कहने पड़ रहे हैं अन्यथा मैं ब्रह्मवासनाको जीव क्यों कहूँ ? दुःखोंको देखकर (उनमें रच-पच कर) वे गुन्हेगार बन रहे हैं और धनीकी आज्ञा भी मान नहीं रहे हैं.

प्रकास बानी तुम नीके कर लीजो, जिन छोडो एक छिन जी ।
अंदर अरथ लीजो आतम के, बिचारियो अंतसकरन जी ॥ ५१

प्रकाश ग्रन्थकी वाणीको तुम भली भाँति ग्रहण करो, इसे एक क्षणके लिए भी मत छोड़ो. इसके द्वारा आत्माके गूढ़ अर्थको ग्रहण करो और उसे अन्तर्मनमें भली प्रकार विचार करो.

अंदर का जब लिया अरथ, तब नेहेचे होसी प्रकास जी ।
जब इन अरथे जागी बासना, तब वृथा न जाए एक स्वांस जी ॥ ५२

जब तुम इस वाणीके द्वारा आन्तरिक अर्थ ग्रहण करोगे, तब निश्चय ही अन्तरात्मामें ज्ञानका प्रकाश फैल जाएगा. जब इन अर्थोंके द्वारा आत्मा जागृत हो जाएगी, तब एक श्वास भी व्यर्थ नहीं जाएगा.

ए प्रगट बानी कही प्रकासकी, इन्द्रावती चरने लागे जी ।
सो लाभ लेवे दोनों ठौरको, जाकी बासना इत जागे जी ॥ ५३

इन्द्रावती सद्गुरु धनीके चरणोंमें लगकर प्रकाश ग्रन्थकी यह प्रकट वाणी प्रकाशित कर रही है. जिसकी आत्मा इसी संसारमें जागृत हो जाएगी, वही संसार और परमधाम दोनों स्थानोंका लाभ प्राप्त करेगी.

प्रकरण ३० चौपाई ७८८

बेहद के साथी सुनो, बोली बेहद बानी ।
बडे बडे रे हो गए, पर काहूं न जानी ॥ १

हे बेहद (परमधाम) के सुन्दरसाथजी ! सुनो, बेहद वाणी बोली जा रही है. इस संसारमें बड़े-बड़े ऋषि-मुनि, साधु सज्जन हो गए, परन्तु कोई भी इसे कह (जान) नहीं सका.

उपाए किए अनेकों, पर काहूं न लखानी ।
ए बानी निज बुध बिना, न जाए पेहेचानी ॥ २

अनेक उपाय करने पर भी कोई इसे प्रत्यक्ष नहीं समझ सका है. यह वाणी निजबुद्धि (जागृत बुद्धि) को प्राप्त किए बिना किसीसे भी पहचानी नहीं जाती.

ना तो आए बुध के सागर , गुन षट ग्यानी ।
भगवानजी को महादेवजी, पूछे बेहद बानी ॥ ३

अन्यथा महान् बुद्धिके सागर त्रिगुणाधिपति तथा छः शास्त्रोंके ज्ञाता भी इस संसारमें अवतरित हुए हैं. महादेवजीने भी बेहद वाणीके विषयमें विष्णु भगवानको पूछा था.

विस्नु कहे सिवजी सुनो, तुम पूछत हो जेह ।
आद करके अबलों, अगम कहियत है एह ॥ ४

विष्णु भगवानने शिवजीसे कहा, आप जो कुछ पूछ रहे हैं उस ब्रह्मवाणीके विषयमें सुनिए. आदि कालसे अब तक यह वाणी अगम ही कही गई है.

कोट ब्रह्मांड जो हो गए, तित काहूं ना सुनी ।
खोज खोज खोजी थके, चौदे लोक के धनी ॥ ५

करोड़ों ब्रह्माण्ड बनकर मिट गए हैं परन्तु किसीने भी यह वाणी नहीं सुनी. खोजने वाले खोजी जन चौदह लोकोंके स्वामी भी इसे खोजते हुए थक गए.

फेर पूछे सिव विस्नु को, कहे ब्रह्मांड और ।
और ब्रह्मांडकी वारता, क्यों पाइए इन ठौर ॥ ६

पुनः शिवजीने विष्णु भगवानसे पूछा, क्या और भी ब्रह्माण्ड हैं ? उन ब्रह्माण्डोंके विषयमें यहाँ कैसे जाना जाए ?

ए बात तो सिवजी जाहेर, इत है कै भांत ।
ठौर ठौर कहे बचन, ए जो भेद कलपांत ॥ ७

विष्णु भगवान कहते हैं, हे शिवजी ! यह बात अनेक प्रकारसे प्रकट हुई है. कल्पान्त भेदके कारण भिन्न-भिन्न स्थानोंमें ये बातें कही गईं हैं.

सुकजी और सनकादिक, कै और भी साध ।
तिन खोज खोज के यों कह्या, ए तो अगम अगाध ॥ ८

शुकदेवमुनि, सनकादि तथा अनेक साधु पुरुषोंने खोज-खोजकर यह निश्चय किया कि यह ब्रह्मज्ञान तो अगम और अगाध है.

एक सबदके कारने, लखमी जी आप ।
नेक भी जाहेर ना हुई, अंग दिए कै ताप ॥ ९

इस ज्ञान (के मात्र एक शब्द-प्रसङ्ग) को समझनेके लिए स्वयं लक्ष्मीजीने सात कल्प तक तपस्या की तथा अनेक कष्ट सहन किए, तथापि यह परम तत्त्व लेश-मात्र भी प्रकट नहीं हुआ.

याही रसके कारने, कैयों किए बल ।
कैयों कलप्या अपना, पर काहूं ना प्रेमल ॥ १०

इस ब्रह्मानन्द रसको प्राप्त करनेके लिए अनेक साधु सन्तोंने प्रयत्न किए. अनेक लोगोंने अपनी देहको तपाया, परन्तु उन्हें इस ब्रह्मानन्दकी सुगन्ध तक नहीं मिली.

सो रस व्रजकी सुंदरी, पायो सुगम ।
सो सेहेजे घर आइया, जो कहे वेद अगम ॥ ११

ऐसे ब्रह्मानन्द रसको व्रजसुन्दरी (गोपिकाओं) ने सहजतासे प्राप्त किया. जिस

ब्रह्म धामको वेदोंने अगम्य कहा है, गोपिकाएँ सहज ही उस घरको पा सकीं.

ए निध अपने घरकी, इन यों तो बिलसी ।
अनुचोंच पात्र या बिना, नाहीं काहूं कैसी ॥ १२

यह निधि ब्रह्मात्माओंके अपने घर परमधामकी थी, इसलिए उन्होंने इसमें विलास किया. योग्य पात्र (अधिकारी) के बिना यह रस अणु (चोंच) मात्र भी किसीको प्राप्त नहीं होता.

अबलों काहूं ना जाहेर, श्री धामके धनी ।
खेले आप इछा कर, अर्धांग जो अपनी ॥ १३

परमधामके स्वामी पूर्णब्रह्म परमात्मा आज तक इस दुनियाँमें प्रकट नहीं हुए थे. ऐसे अक्षरातीत धनीने स्वयं अपनी इच्छासे अपनी अर्धांगिनी श्यामा और अन्य ब्रह्मात्माओंके साथ इस संसारमें अवतरित होकर अनेक लीलाएँ कीं.

साथ इछाएं सुपनमें, खेल मांहें आया ।
बेहद थें पीउ आएके, बेहद साथ खेलाया ॥ १४

परमधामसे ब्रह्मात्माएँ स्वप्न जगतका खेल देखनेकी इच्छासे इस संसारमें उतर आईं. परब्रह्म परमात्माने परमधाम (बेहद) से यहाँ अवतरित होकर बेहदकी आत्माओंके साथ लीलाएँ की.

ए बानी इत हम बिना, और काहूं न होवे ।
आधा लुगा ना पाइए, जो जीव अपना खोवे ॥ १५

यह बेहदकी वाणी हम ब्रह्मात्माओंके बिना किसीको प्राप्त नहीं होती. कोई जीव अपना बलिदान भी क्यों न कर दे, तो भी इसका आधा शब्द भी उसे प्राप्त नहीं होता.

साथ देखने आइया, पीउ इच्छा कर ।
बेहद धनी साथकों, खेलावें चित धर ॥ १६

पूर्णब्रह्म परमात्माकी इच्छासे ही ब्रह्मात्माएँ यह (मायावी) खेल देखनेके लिए

आईं हैं. इसलिए बेहदके धनी श्री राजजी उन्हें ध्यानपूर्वक यह खेल खेला रहे हैं.

ले चलसी सब साथको, पार बेहद घर ।
पीछे अवतार बुधका, सब करसी जाहेर ॥ १७

वे अपनी आत्माओंको बेहदके पार, अक्षरब्रह्मसे भी आगे परमधाम ले चलेंगे. उसके बाद बुद्धावतार इस संसारमें परमधामकी निधि प्रकट करेंगे.

बैकुंठ जाए विस्नुकों, सब देसी खबर ।
विस्नु को पार पोहोंचावसी, सब जन सचराचर ॥ १८

बुद्धजीका ज्ञान वैकुण्ठ पहुँचकर विष्णु भगवानको भी सब सुधि देगा. विष्णु भगवानकी सुरताको भी अखण्डमें पहुँचाकर संसारके चराचर सभी जीवोंको भी यह ज्ञान अखण्ड मुक्ति प्रदान करेगा.

खोज पाई जिन ए निध, धन धन सो बुध ।
द्रढ करी सनेहसों, साथको कही सुध ॥ १९

सद्गुरु निजानन्द स्वामी (बुधावतार) धन्य हैं, जिन्होंने परमधामकी इस निधिको खोज कर प्राप्त किया. उन्होंने सुन्दरसाथको स्नेह पूर्वक यह ज्ञान देकर उनकी सुरताको परमधाममें स्थित कर दिया.

नौतन पुरी भली पेरे, चितसों चरचानी ।
साथी जो बेहद के, तिनहूं पेहेचानी ॥ २०

श्री ५ नवतनपुरीधाम वह स्थल है जहाँ पर तारतम ज्ञानका बीज उदय होनेसे सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी महाराजने भली-भाँति इसकी चर्चा की है. जो बेहदके सुन्दरसाथ हैं, उन्होंने सद्गुरु और नवतनपुरीकी महिमाको भालीभाँति पहचाना.

बेहद बाट देखावहीं, पीउ आएके पास ।
तारतम ले आए धनी, ए जोत उजास ॥ २१

धामधनी सद्गुरु अपने पास आकर बेहदका मार्ग दिखा रहे हैं. वे तारतम ज्ञान लेकर आए हैं, जिसकी ज्योतिसे चौदह लोक प्रकाशित होंगे.

जाहेर हुई साथमें, देखो रास प्रकास ।
तारतम बानी वतन की, जिन कियो तिमर सब नास ॥ २२

श्रीरास एवं श्रीप्रकाश ग्रन्थके माध्यमसे तारतम ज्ञानका प्रकाश सुन्दरसाथमें प्रकट हुआ. परमधामकी इस तारतमवाणीने समस्त संसारके अन्धकारका नाश कर दिया.

हिरदें आद नारायन के, वेद जिनको स्वांस ।
ग्रन्थ सबों की उतपन, बानी वेद व्यास ॥ २३

आदि नारायणके हृदयसे उनके श्वासके रूपमें वेद प्रकट हुए हैं, उन्हींसे सब ग्रन्थोंकी उत्पत्ति हुई है. वेद व्यासजीने उसी ज्ञानको अपनी वाणी द्वारा प्रकट किया है.

तामे फल श्रीभागवत, सुकजी मुख भाख ।
पाती ल्याया बेहद की, साथकी पूरी साख ॥ २४

इन सब ग्रन्थोंके फल (सार) के रूपमें श्रीमद्भागवतका प्रणयन हुआ है. शुकदेवमुनिने अपने श्रीमुखसे इसका स्पष्टीकरण किया है. उन्होंने श्रीमद्भागवतके रूपमें बेहदका समाचार लाकर ब्रह्ममुनियोंके संसारमें अवतरित होनेकी साक्षी दी है.

और भी नाम केते लेऊं, इंड बानी अलेखे ।
सब साख देवे बेहद की, जो कोई दिल दे देखे ॥ २५

और भी कितने शास्त्रोंके नाम गिनाऊँ. इस ब्रह्माण्डमें अनेक शास्त्र हैं. यदि कोई ध्यान पूर्वक उनका अध्ययन करे तो पता चलेगा कि वे सब बेहद भूमिकाकी साक्षी देने वाले हैं.

ए बानी ए बाटडी, कबूं ना जाहेर ।
धनी ब्रह्मांड के खोजिया, सब मांहें बाहेर ॥ २६

यह बेहदकी वाणी एवं बेहदका मार्ग है जो कभी भी प्रकट नहीं हुए थे. इस नश्वर ब्रह्माण्डके स्वामी (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) तथा अन्य लोगोंने भी इसे अपने अन्तरमें तथा बाहर ब्रह्माण्डमें खोजा.

एक जरा किनहूं न पाइया, इत अनेक जो धाए ।
नाम ब्रह्मांड के धनी कहे, दूजे कहा करूं सुनाए ॥ २७

यहाँ पर अनेक ज्ञानी महापुरुषोंने भी प्रयास किया, परन्तु किसीने भी परम तत्त्वके विषयमें किञ्चित् मात्र भी संकेत नहीं पाया. जब ब्रह्माण्डके स्वामीके भी नाम लिए गए, तब अन्य साधारण लोगोंके नाम क्या गिनाऊँ ?

सो निध जाहेर इत हुई, धन धन संसार ।
धन धन खंड भरथ का, धन धन नरनार ॥ २८

ऐसी अमूल्य निधि प्रकट होनेसे यह संसार धन्य हुआ, उसमें भी भरत खण्ड (भारत भूमि) धन्य हुआ और यहाँके स्त्री-पुरुष भी धन्य हो गए.

धन धन पांचों तत्त्व, धन धन त्रैगुन ।
धन धन जुग सो कलजुग, धन धन पुरी नौतन ॥ २९

इस ब्रह्माण्डके पाँचों तत्त्व और तीनों गुण धन्य हो गए. चारों युगोंमें कलियुग धन्य हुआ और सब पुरियोंमें नवतनपुरी धन्य हुई.

अब कहूं लीला प्रथमकी, सुनियो तुम साथ ।
जो कबूं कानों ना सुनी, सो पकड देऊं हाथ ॥ ३०

अब मैं ब्रह्मात्माओंके प्रथम अवतरण (व्रज लीला) की बातें कहती हूँ. हे मेरे सुन्दरसाथजी ! ध्यानपूर्वक सुनो. आज तक जिस लीलाके रहस्यको कोई अपने कानसे सुन (समझ) नहीं पाया, उसे मैं तुम्हारे हाथोंमें सौप (पकड़ा) देती हूँ.

धोखा कोई न राखहूं, करूं निरसंदेह ।
मुक्त होत सचराचर, आयो वतनी मेह ॥ ३१

किसीके भी मनमें कोई धोखा न रहे इसलिए सबके सन्देह दूर कर देती हूँ. परमधामसे अखण्ड ज्ञानकी ऐसी वर्षा हुई है कि संसारके जड़-चेतन सभी जीव मुक्त हो सकेंगे.

धन गोकल जमुना त्रट, धन धन ब्रजवासी ।
अग्यारे बरस लीला करी, करी अविनासी ॥ ३२

यमुनाजीका तट, गोकुल तथा व्रजवासी सब धन्य हुए, जहाँ ग्यारह वर्ष और बावन दिनोंतक परब्रह्म श्रीकृष्णने अखण्ड लीलाएँ कीं.

चौदे लोक सुपन के, साथ आया देखन ।
मुक्त दे पीछे फिरे, सदासिव चेतन ॥ ३३

ये चौदह लोक स्वप्नके हैं जिन्हें देखनेके लिए परमधामसे ब्रह्मात्माएँ सुरतारूपमें आई हैं. वे समस्त जीवोंको मुक्ति देकर वापस लौटेंगीं और यह ब्रह्माण्ड भी अक्षरब्रह्मके चित्त (सदाशिव) में अङ्कित होगा.

और ब्रह्मांड जोगमायाको, कियो खेलने रास ।
खेल करे श्री राजसों, साथ सकल उलास ॥ ३४

व्रज लीलाके पश्चात् श्रीकृष्णजीने रासलीलाके लिए अपनी योगशक्तिसे योगमायाका ब्रह्माण्ड प्रकट किया. जहाँ पर समस्त ब्रह्मात्माओंने बड़े उल्लासके साथ अपने प्रियतम श्रीराजजीसे रासकी लीलाएँ कीं.

नौतन खेल या रास को, कबहूं ना होवे भंग ।
खेले साथ सुपनमें, जोगमायाके रंग ॥ ३५

रासके ये नूतन खेल कभी भी खण्डित नहीं होते. योगमायाके शरीर एवं शृङ्गार धारण कर ब्रह्मात्माओंने स्वप्नमें (पूर्ण पहचान न होनेके कारण) रासकी लीलाएँ कीं.

तुम देखो साथ सुपनमें, खेल खेले ज्यों ।
एक विधें साथ जागिया, खेल त्यों का त्यों ॥ ३६

हे सुन्दरसाथजी ! विचार पूर्वक देखो. जैसे स्वप्नावस्थामें खेल खेलते हैं, उसी प्रकार रासकी लीलाएँ हुईं. रास लीलाके बाद एक क्षणके लिए सब ब्रह्मात्माएँ परमधाममें जागृत हुईं. किन्तु अक्षरब्रह्मके हृदयमें अंकित होनेसे यह रास लीला ज्योंकी त्यों चल रही है.

एह ब्रह्मांड तीसरा, हुआ उतपन ।
धाख रही कछू अपनी, तो फेर आए देखन ॥ ३७

पुनः कालमाया द्वारा यह तीसरा ब्रह्माण्ड रचा गया. कुछ इच्छाएँ शेष रहनेके कारण हम सब (ब्रह्मात्माएँ) खेल देखनेके लिए पुनः सुरतारूपसे इस जगतमें आईं.

ब्रह्मांड तीनों देखे हम, खेल बिना हिसाब ।
जाग वतन बातां करसी, जो देखी मिने ख्वाब ॥ ३८

इस प्रकार व्रज, रास और जागनी, ये तीनों ब्रह्माण्ड हमने देखे और इनमें असंख्य लीलाएँ कीं. परमधाममें जागृत होने पर हम स्वप्नमें की गई लीलाओंकी चर्चा करेंगी.

ए जो ब्रह्मांड उपज्या, जिनमें राख्या सेर ।
साथ घरों सब पोहोंचिया, और आए इत फेर ॥ ३९

यह जो तीसरा ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ, इसमें अखण्ड व्रजरासको समझानेके लिए प्रतिबिम्ब लीलारूप मार्ग रखा गया. अखण्ड रासके बाद सभी ब्रह्मात्माएँ पलभरके लिए परमधाममें गईं और इधर इस जगतमें वेदऋचा सखियाँ अवतरित हुईं.

[व्रज और रासकी अखण्ड लीलाओंका महत्त्व समझानेके लिए गोलोकी नाथ श्रीकृष्णने वेदऋचा सखियोंके साथ व्रज और रासकी लीलाएँ की हैं जो प्रतिबिम्ब लीला कही जाती है. इस लीलाके लिए कालमायाका ब्रह्माण्ड पुनः बना. परमधाममें (क्षण भरके लिए) जागृत हो कर ब्रह्मात्माएँ पुनः इस कालमायामें आई हैं. इसलिए प्रतिबिम्ब लीलाको ब्रह्मात्माओंका संसारमें आनेका मार्ग कहा है.]

ज्यों हरे ब्रह्माएं बाछरू, गोवाला संघाते ।
ततछिन सो नए किए, आप अपनी भांते ॥ ४०

जिस प्रकार व्रज लीलामें ब्रह्माजीने बाल गोपालके साथ बछड़ोंका हरण कर उन्हें गुफामें छिपा दिया तब श्रीकृष्णजीने उसी क्षण अपनी लीला द्वारा उन्हें

पुनः ज्योंका त्यों प्रकट कर लिया.

गोकल मिने आप अपने, घरों सब कोई आया ।
खबर ना पडी काहूंको, ऐसी रची माया ॥ ४१

उसी प्रकार तीसरे ब्रह्माण्डके गोकुल गाँवमें भी श्रीकृष्ण एवं सखियाँ इस प्रकार प्रकट हुए मानों वृन्दावनमें रात भर रास लीलाकर सब घर (गोकुल) में लौट आए हों. श्रीकृष्णजीने ऐसी माया रची कि किसीको भी यह पता नहीं चला कि रासके लिए अलग योगमायाका ब्रह्माण्ड बनाया था. (वे सब ब्रह्मात्माएँ परमधाम चली गईं और अब पुनः कालमायाका यह तीसरा ब्रह्माण्ड बना है जिसमें प्रतिबिम्ब लीलाके लिए श्रीकृष्णके रूपमें अक्षरब्रह्म और गोपियोंके रूपमें वेदऋचाएँ अवतरित हुईं हैं.)

एह द्रष्टांते समझियो, राह राख्या इन विध ।
ए बल माया देखियो, औरे ऐसी किध ॥ ४२

इस दृष्टान्तसे समझ लेना कि अखण्ड व्रजरास लीलाको समझानेके लिए प्रतिबिम्ब व्रजरासका मार्ग प्रशस्त किया (इसी मार्गसे ब्रह्मात्माओंको इस तीसरे ब्रह्माण्डमें अवतरित किया गया). श्रीकृष्णजीकी योगमायाका प्रभाव तो देखो जिसके द्वारा इस प्रकारकी लीला सम्पन्न हुई.

साथ चल्या सब वतन, अपने पीउ साथ ।
और खेले राससें अखंड, इत उठे प्रभात ॥ ४३

अखण्ड रास लीलाके बाद सब ब्रह्मात्माएँ अपने धनी श्रीकृष्णके साथ परमधाम लौट गईं. इधर अक्षरब्रह्मके हृदयमें रास लीला अखण्ड होनेके कारण योगमायाके शरीर द्वारा वहाँ भी वे खेल रहीं हैं और इधर रास रात्रि उपरान्त प्रभात हो जाने पर प्रतिबिम्ब लीलामें वेदऋचाके रूपमें गोकुलमें प्रकट हुईं, मानों सोकर उठ रही हों.

सोई गोकल जमुना त्रट, जाने सोई ब्रज वासी ।
रास लीला जाने खेलके, इत आए उलासी ॥ ४४

इस प्रतिबिम्ब लीलामें भी वैसा ही गोकुल, वैसा ही जमुनाका तट और वैसे

ही व्रजवासी बन गए. मानों गोपियाँ रासलीला खेलकर उल्लसित मनसे इधर लौट आई हों.

जाने सोई ब्रह्मांड, जो खेलत सदाए ।
एह ब्रह्मांड जो उपज्या, ऐसी रे अदाए ॥ ४५

सबको लगा कि यह कालमायाका ब्रह्माण्ड वही है जिसमें हम पहलेसे ही खेलते आए हैं. कालमायाका यह तीसरा ब्रह्माण्ड इस प्रकार रचा गया कि पहलेके ब्रह्माण्डसे भिन्न होने पर भी किसीको इसका आभास ही नहीं हुआ.

दोऊ ब्रह्मांड बीच में, सेर राख्या सार ।
खबर ना पडी काहू को, बेहद का बार ॥ ४६

इस प्रकार अखण्ड व्रज-रास तथा जागनीका ब्रह्माण्ड इन दोनोंके बीच (अखण्ड लीलाकी जानकारीके लिए) प्रतिबिम्ब लीलारूप मार्ग रखा गया. किसीको भी बेहद भूमिकाके इस द्वारका पता तक नहीं चला.

इत फेर उठे जो प्रतिबिंब, यामे साथ पीउ ।
खेल आए जाने हम नहीं, धोखा रह्या जीउ ॥ ४७

इधर प्रतिबिम्ब लीलामें गोलोकी श्रीकृष्ण और वेदऋचारूप गोपियाँ एक साथ प्रकट हुईं. गोपियोंको ऐसा आभास हुआ कि हमने रासलीलाको मात्र देखा है किन्तु खेल नहीं पाए इसलिए रासलीला खेलनेकी चाहना (धोखा) उनके मनें बनी रही.

धोखा इनोंका भी ना मिट्या, तो कहा करे और ।
बेहद बानी के माएने, क्यों होवे दूजे ठौर ॥ ४८

वेदऋचा स्वरूप गोपियोंको भी जब सन्देह बना रहा तो ब्रह्माण्डके अन्य लोगोंकी बात क्या की जाए ? तारतम ज्ञानके अभावमें एवं ब्रह्मात्माओं जैसे पात्रके बिना बेहद वाणीके अर्थ कोई समझ नहीं सकता.

यों साथ पिछला आइया, इत इन दरवाजे ।
मूल साथ फेर आवसी, ए किया जिन काजे ॥ ४९

इस प्रकार वेदऋचाएँ इस प्रतिबिम्ब लीलारूप द्वारसे गोपियोंके रूपमें इस

ब्रह्माण्डमें आईं. किन्तु जिनके लिए यह तीसरा ब्रह्माण्ड रचा गया, वे ब्रह्मात्माएँ बादमें इस जगतमें प्रकट होंगी.

क्या जाने हदके जीवडे, बेहद की बातें ।
रासमें खेले अखंड, इत उठे प्रभाते ॥ ५०

इस क्षर ब्रह्माण्डके जीव बेहद (अखण्ड भूमिका) में निरन्तर होने वाली अखण्ड लीलाकी बात कैसे जान पाएँगे ? अखण्ड रासमें रमण करनेवाली आत्माएँ कौन-सी हैं और प्रभात होने पर गोकुलमें उठनेवाली शक्तियाँ कौन-सी हैं ? इस रहस्यको वे कदापि नहीं जान सकते.

खेले पिछले साथ में, सात दिन तांई ।
अक्रूर चल्या बुलाएके, पोहोंचे मथुरा मांहीं ॥ ५१

वेदऋचारूप गोपियों (पिछला साथ) के साथमें श्रीकृष्णने सात दिन तक गोकुलमें लीला की. कंसके आग्रह पर अक्रूरजी जब बुलाने आए तब उनके साथ श्रीकृष्णजी मथुरा पहुँचे.

तोलों भेष जो पीउका, कुबलापीड मार्‌या ।
चांडूर मुष्टक संघारके, जाए कंस पछाड्या ॥ ५२

मथुरामें कुबलया पीड़ हाथी, चाणूर तथा मुष्टिक आदिका संहार कर राजा कंसको पछाड़ा. तब तक उनमें श्रीकृष्णका ग्वालवेश रहा.

टीका दिया उग्रसेन को, भए दिन चार ।
छोड वसुदेव भेष उतारिया, या दिन थें अवतार ॥ ५३

उग्रसेनका राजतिलक किया. यहाँ तक मथुरामें आए चार दिन हो गए. फिर ग्वाल वेश उतारकर नन्दजीको दिया तब उनमें-से अक्षरब्रह्मका आवेश चला गया. अब यहाँसे अवतार लीला आरम्भ होती है. फिर श्री कृष्णने अपने पिता वसुदेवको बन्धनसे मुक्त किया एवं स्वयं भी राजसी भेष धारण किया.

अब इहां से लीला हदकी, सोतो सारे केहेसी ।
पर बेहद बानी हम बिना, दूजा कौन देसी ॥ ५४

अब यहाँसे क्षर जगत (के ईश वैकुण्ठ नाथ विष्णु भगवान) की लीला

आरम्भ होती है. इसका वर्णन तो सभी करते आए हैं और आगे भी करते रहेंगे. परन्तु हम ब्रह्मात्माओंके बिना बेहदवाणीका वर्णन अन्य कौन कर सकता है ?

नरसैया इन पैंडे खडा, लीला बेहद गाए ।
बल करे अति निसंक, मिने पैठ्यो न जाए ॥ ५५

भक्त प्रवर नरसी मेहताने इसी मार्ग (प्रतिबिम्बलीला) पर स्थित होकर श्रीकृष्णजीकी बेहदलीलाओंका गान किया. उन्होंने उसमें प्रविष्ट होनेके लिए निश्चय ही बहुत प्रयत्न किया, परन्तु असफल रहे अर्थात् अखण्ड लीलाका वर्णन नहीं कर सके.

जो बल किया नरसैएं, कोई करे ना और ।
हदके जीव बेहदकी, लीला देखी या ठौर ॥ ५६

भक्त शिरोमणि नरसी मेहताने अखण्ड रास लीलाका वर्णन करनेके लिए जैसा प्रयास किया वैसा इस संसारका कोई अन्य जीव नहीं कर सकता. क्षर ब्रह्माण्डकी उच्च आत्मा (नरसी मेहता) ने भी इस संसारमें बैठकर बेहदकी लीलाका दर्शन किया.

नरसैया दौड्या रसको, बानी करे रे पुकार ।
रस जाए हुआ अंदर, आडे दरवाजे चार ॥ ५७

नरसी मेहताने इसी प्रेम रसको पानेके लिए बड़ा प्रयत्न किया. इस तथ्यकी पुष्टि स्वयं उनकी वाणी कर रही है. परन्तु ब्रह्मात्माओंका प्रेम रस तो मूल मिलावा परमधाममें चला गया, जिसे प्राप्त करनेके मार्गमें चार द्वार (अखण्डब्रज, अखण्डरास, अक्षर धाम और परमधाम) रुकावट बन गए. (श्रीनरसी मेहता महाविष्णुके महाकारणमें प्रतिबिम्बित रासलीलाको देखकर प्रेमोन्मत्त हो गए थे.)

द्वारने इन बेहद के, लेहेरें आवें सीतल ।
सो इत खडा लेवहीं, रस की प्रेमल ॥ ५८

बेहदके इस द्वारसे उन्हें प्रेमरसकी शीतल लहरें प्राप्त हो रही थीं. वे इस

संसारमें रहकर भी इसकी सुगन्धि प्राप्त कर रहे थे.

इन दरवाजे नरसैया, प्रेमें लपटाना ।
लीला पिछले साथमें, सुख ले समाना ॥ ५९

इस बेहदके द्वार (प्रतिबिम्बलीलाके प्रेम) में नरसी मेहता मस्त हो रहे थे. उन्होंने वेद ऋचाओंके साथ की गई लीलाको आत्मसात् किया.

लीला सुकें बरनन करी, ब्रज रास बखाना ।
बेहद की बानी बिना, ठौर ठौर बंधाना ॥ ६०

श्रीमद्भागवतमें शुकदेवमुनिने व्रज और रास लीलाकी महिमाका वर्णन किया, परन्तु बेहदवाणी तारतम ज्ञानके अभावमें वे स्थान-स्थान पर अपनी सीमामें बँध गए.

ना तो ए क्यों ऐसे बरनवे, क्यों कहे पंच अध्याई ।
ए रस छोड और बचन, मुख काढ्यो न जाई ॥ ६१

अन्यथा शुकदेवमुनि रासका इतना ही वर्णन क्यों करते ? महारासका वर्णन केवल पाँच अध्यायोंमें कैसे समाप्त होता ? रासलीलाका वर्णन छोड़कर उनके मुखसे कोई और बात नहीं निकल सकती थी.

होवे अस्कंध द्वादस थें, इत कोट गुने ।
पर क्या करे आग्यां इतनी, बस नाहीं अपने ॥ ६२

इस प्रकार श्रीमद्भागवत मात्र बारह स्कन्ध पर ही समाप्त न होता, इससे कई करोड़ गुणा हो सकता था. किन्तु वे क्या करते, उन्हें आज्ञा ही इतनी थी, यह उनके अपने वशकी बात नहीं थी.

ना हुई जाहेर या मुख, बेहद की बान ।
धाख रही बोहोत हिरदें, कलप्या दुख आन ॥ ६३

शुकदेवमुनिके श्रीमुखसे अखण्ड व्रज तथा रासका पूरा-पूरा वर्णन न हो सका. उनके हृदयमें अखण्ड लीलाका वर्णन करनेकी उत्कट अभिलाषा थी, जिसके पूर्ण न होनेके कारण उनका मन अत्यधिक दुःखी हुआ.

कंपमान होए कलकल्या, रस गया याथें ।
सो ए दुख क्यों सेहे सके, रस जाए जाथें ॥ ६४

इस प्रकार अखण्ड प्रेम रसका प्रवाह रुक जाने पर वे व्यथित होकर काँपने लगे. वे इस दु:खको कैसे सह सकते थे ? जिसके कारण अखण्ड रसका प्रवाह रुक गया.

बेहद के सबद केहे का, था हरष अपार ।
दरवाजा ना खोलिया, रह्या रस सार ॥ ६५

शुकदेवमुनिको बेहद लीलाका वर्णन करनेकी अपार चाहना थी किन्तु बेहदके द्वार न खोल पानेके कारण रासलीलाका अखण्ड रस अधूरा रह गया.

रास रात बरनन करी, देखो मन बिचार ।
नारायनजी की रातको, कोईक पावें पार ॥ ६६

फिर भी शुकदेवमुनिने रासकी अखण्ड रात्रिका यथा संभव वर्णन किया. इसे मनमें विचार करके देखो. अन्यथा नारायण भगवानकी रातका वर्णन भी कोई बिरला ही कर पाता है.

पर पार नहीं रास रातको, ए तो बेहद कही ।
तामें अखंड लीला रासकी, पंच अध्याई भई ॥ ६७

परन्तु रासलीलाकी रात्रिका तो कोई पार नहीं है क्योंकि वह रात्रि बेहदकी होनेके कारण अखण्ड है. ऐसी अखण्ड लीलाका वर्णन श्रीमद्भागवतके दशम स्कन्धके पाँच अध्यायोंमें ही कैसे पूरा हो गया ?

देखो जाहेर याके माएने, चित ल्याए बचन ।
रात ऐसी बडी तो कही, लीला बडी ब्रंदावन ॥ ६८

इस लीलाके रहस्य पर चित्त देकर विचार कीजिए. इसलिए उस रातको इतनी बड़ी कहा है, क्योंकि वृन्दावनकी अखण्ड रास लीला अति विशेष है.

ए पंच अध्याई होवे क्योंकर, मेरे मुनीजी की बान ।
पर सार समे बीच अटक्या, रस आए सुजान ॥ ६९

श्रीशुकदेवजीके मुखसे रासका वर्णन केवल पाँच अध्यायोंमें ही समाप्त क्यों हो जाता ? परन्तु परीक्षितके प्रश्नके कारण सारतत्त्व बीच ही में अटक गया और उनका जोश भी उतर गया.

दुख हुआ बोहोत कलप्या, पर कहा करे जान ।
पात्र बिना पावे नहीं, रस बेहद बान ॥ ७०

अखण्ड रासका वर्णन न कर पानेके कारण शुकदेवजी अत्यन्त दुःखी हुए. वे अवश्य ही बड़े जानकार थे, किन्तु क्या करते, बेहदकी वाणीका रस बेहदी पात्र (अखण्ड परमधामकी आत्माओं) के बिना किसीको प्राप्त नहीं हो सकता.

पात्र बिना तुम पाइया, मुनीजी क्यों करो दुख ।
आज लगे बेहद का, किन लिया है सुख ॥ ७१

हे शुकदेवजी ! योग्य पात्रके अभावमें भी आपने बेहदकी लीलाका वर्णन किया है, यह बड़े महत्त्वकी बात है. इसलिए दुःखी होनेकी तो कोई बात ही नहीं. क्या आज तक किसीने बेहद लीलाका सुख प्राप्त किया है ?

एतो हमारा कागद, तुम साथे आया ।
खबर हद बेहद की, देकर पठाया ॥ ७२

यह श्रीमद्भागवत हमारा पत्र है, मात्र आपके साथ इस जगतमें आया है. इसके माध्यमसे हद और बेहदका समाचार आपके हाथ भेजा गया है.

विध सारी कागदमें, हम लिए बिचार ।
तुम साथे मुनीजी संदेसडा, आए समाचार ॥ ७३

श्रीमद्भागवत ग्रन्थमें लिखी हुई बात पर हमने विधिपूर्वक विचार किया और उसे समझा. हे मुनिवर ! आपके द्वारा हमें अपने मूल घरका सन्देश समाचारके रूपमें प्राप्त हुआ.

या सुध कागद हम लई, समझे सब सार ।
औरन को ए कोहेडा, ना खुले द्वार ॥ ७४

श्रीमद्भागवतको समझकर हमने उसका सार ग्रहण किया. संसारके अन्य जीवोंके लिए यह ग्रन्थ उलझन (पहेली) के समान है. इसलिए श्रीमद्भागवत पढ़ने पर भी उनके द्वारा बेहदके द्वार नहीं खुल पाते.

और बिचारे क्या जानहीं, जाने जाको होए ।
हम बिना द्वार बेहद के, खोल ना सके कोए ॥ ७५

संसारके बेचारे सामान्य जीव इसे कैसे समझ सकते हैं ? जिनके लिए यह पत्र भेजा गया है, वे ब्रह्मात्माएँ ही इसे समझ पातीं हैं. इसलिए हम ब्रह्मात्माओंके बिना अखण्ड परमधामका द्वार कोई खोल नहीं सकता.

लाख बेर देखो फेर, न पावे कडी कल ।
पाई नहीं त्रगुनने, कर कर गए बल ॥ ७६

संसारी जीव चाहे लाखों बार इसे पढ़ें किन्तु अखण्ड धामके द्वार खोलनेकी मूल कड़ी उनके हाथमें नहीं आएगी. तीनों गुणके अधिपति ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी अनेक प्रयत्न करते रह गए किन्तु इस रहस्यको समझ नहीं सके.

एतो कोहेडा हद का, बेहदी समाचार ।
ए देखावे हम जाहेर, साथ को खोल द्वार ॥ ७७

बेहदकी आत्माओंके लिए दिया गया यह समाचार (श्रीमद्भागवत) संसारके लोगों (जीवसृष्टि) के लिए उलझन समान है, अब मैं उसीके द्वारा ब्रह्मात्माओंके लिए परमधामका द्वार खोलकर सब कुछ प्रत्यक्ष दिखा दूँगी.

सुकजी इत ले आइया, बेहद के बोल ।
फेर टालो अंदर का, देखो आंखा खोल ॥ ७८

शुकदेवमुनि इस संसारमें बेहदके शब्द ले आए हैं. (किन्तु योग्य पात्रके अभावमें उनसे स्पष्ट न हो पाया.) इस बातको अपने अन्तरकी आँखें खोलकर देखो और मनका भ्रम मिटा लो.

अस्कंध दूजा मुनिएं कह्या, चत्र स्लोकी जित ।
ब्रह्मांड की जहां उतपन, अरथ देखो तित ॥ ७९

श्रीमद्भागवतके दूसरे स्कन्धके नवम अध्यायमें श्रीशुकदेव मुनिने चतुःश्लोकी भागवतका विशेष वर्णन किया है, जिसमें सृष्टि रचनाके रहस्यका स्पष्टीकरण हुआ है. उसके अर्थ पर ध्यान दो.

ए द्वार देखोगे जाहेर, होसी माया पेहेचान ।
ए माएना नीके लीजियो, हिरदेंमें आन ॥ ८०

चतुःश्लोकी भागवतके माध्यमसे जब बेहदका द्वार स्पष्ट दिखाई देगा तब मायाकी पहचान हो जाएगी. इसलिए इन श्लोकोंका रहस्य हृदयमें भली-भाँति उतार लो.

मोह तत्व कह्या नींद को, सुरत अहंकार ।
सुपनको कह्या ब्रह्मांड, नाम धरे बेसुमार ॥ ८१

अव्याकृत अक्षरके नींदको मोहतत्त्व कहा है. उनकी सुरत अहंकार (नारायणके) रूपसे जगतमें व्याप्त हुई. अक्षरब्रह्मके स्वप्नसे ही यह ब्रह्माण्ड बना है जिसके अनेक नाम रखे गए हैं.

पैंडा बेहद वतन का, ए वतनी जाने ।
हद का जीव बेहद का, द्वार क्यों पेहेचाने ॥ ८२

बेहदभूमि परमधाममें रहनेवाली आत्माएँ ही बेहद भूमिके अखण्ड घरका मार्ग जानती हैं. हद भूमि (स्वप्न जगत) के जीव, बेहद भूमिकाके द्वारको कैसे पहचान सकते हैं ?

देख्यो द्वार बेहद के, सुकजी बलवंत ।
पर कल किल्ली क्यों पावहीं, जोर किया अनंत ॥ ८३

श्रीशुकदेवजी ऐसे समर्थ हुए जिन्होंने बेहदका द्वार देखा. उन्होंने अत्यधिक प्रयत्न किया किन्तु (तारतम ज्ञानके बिना) उस द्वारको खोलनेकी कुञ्जी उन्हें न मिली.

द्वार खोलने दौडिया, सुकजी सपराना ।
ले चल्या संग परीछत, सो तो बोझे दबाना ॥ ८४

बेहदके द्वार खोलकर अखण्ड रासका वर्णन करनेके लिए जा रहे शुकदेवजी राजा परीक्षितके प्रश्नसे बीचमें ही उलझ (फँस) गए. राजा परीक्षितको ब्रह्मानन्दरसका अनुभव करवाने ले जा रहे थे किन्तु उनकी पात्रताके अभाव एवं अज्ञानताके भारसे वे स्वयं दब गए.

बल किया बलिएं घना, द्वार द्वार पछटाना ।
पर साथे संघाती हद का, इत सो उरझाना ॥ ८५

इसके उपरान्त भी शुकदेव मुनिने अखण्ड रासलीलाका वर्णन करनेके लिए बहुत यत्न किया, किन्तु स्थान-स्थान पर पछाड़ खानी पड़ी. हदके जीव राजा परीक्षितके रहते वे पुनः इसी ब्रह्माण्डमें उलझ गए.

रास लीला सुख अखंड, इत तो ना केहेलाना ।
पाछल तान हुई घनी, अधबीच लेवाना ॥ ८६

रासलीलाके अखण्ड सुखका वर्णन उस समय न हो सका क्योंकि राजा परीक्षितके प्रश्नके कारण एकाग्रता टूट जानेसे वाणीका प्रवाह बीचमें ही रुक गया.

पात्र बिना रस क्यों रहे, आवत ढलकाना ।
पात्र हुते तिन पाइया, भली भांत पेहेचाना ॥ ८७

पात्रके बिना रस कैसे टिक सकता है ? इसलिए ब्रह्मानन्द रसका उमडता हुआ प्रवाह बाहर छलक (लुढक) कर बह गया. उस रसकी अधिकारिणी ब्रह्मात्माओंने उसे पहचानकर भली भाँति ग्रहण किया.

बरस असी लगे ए रस, सारी पेरे सचवाना ।
लिया पिया साथ में, जिन जैसा जाना ॥ ८८

यह ब्रह्मानन्द रस श्री देवचन्द्रजीके मुखारविन्दसे आरम्भ होकर अस्सी वर्ष

(विक्रम सम्वत् १६३८ से १७१८) तक परमधामकी ब्रह्मात्माओंमें ही भली प्रकार सुरक्षित रहा. अपनी अपनी शक्तिके अनुसार सुन्दरसाथने उस रसको ग्रहण कर अपनी आत्मामें उतारा.

एक बूंद बाहेर न निकस्या, साथ मिने समाना ।
जिन का था तिन विलसिया, मिनो मिने बटाना ॥ ८९

ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त किसी अन्यको इस रसकी एक बूँद मात्र भी प्राप्त नहीं हुई. जिनकी यह लीला थी, वे ही इसमें विहार करते रहे और इसका अनुपम स्वाद परस्पर बाँटते रहे.

अब हम मिने थें ए रस, इत आए छलकाना ।
छोल आई ज्यों सागर, अंगथें उभराना ॥ ९०

अब मेरे अन्दर आकर यह ब्रह्मानन्द रस बाहर छलकने लगा है, जिस प्रकार सागरमें ज्वार आनेसे जल दूर-दूर तक फैल जाता है, उसी प्रकार यह (ब्रह्मानन्द रस) मेरे अंगोंसे उमड़ता हुआ संसारमें विस्तृत हो रहा है.

जोर किया हम बोहोतेरा, रस रह्या न ढंपाना ।
ए अब जाहेर होएसी, बाहेर प्रगटाना ॥ ९१

हमने इस रसको ब्रह्ममुनियोंमें ही सीमित रखनेके लिए बहुत प्रयास किया किन्तु यह प्रेमरसका अखण्ड सुख हमसे छिपाया (ढँका) न जा सका. अब यह ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त संसारके समस्त जीवोंके लिए भी प्रकट हो जाएगा.

ए रस आज के दिनलों, कित काहूं न लखाना ।
आवसी साथ इन विध, ए रस लपटाना ॥ ९२

आज दिन तक ब्रह्मज्ञानके इस रसको किसीने भी प्राप्त नहीं किया था. अब सुन्दरसाथ इस लीला रससे आकर्षित होकर इस ओर खिंचे चले आएँगे.

जान होए सो जानियो, ए क्यों कर रहे छाना ।
क्योंकर ए छिपा रहे, सब सुनसी जहाना ॥ ९३

जो कोई जिज्ञासु हों,वे जान लें कि अब यह रस कैसे छिपा रह पाएगा ?

अब संसारके सारे लोग इसे सुनेंगे, इसलिए यह कैसे छिपा रहेगा ?

ए वानी बेहद प्रगटी, इंद्रावती मुख ।
बोहोत विधे हम रस पिए, बेहद के सुख ॥ ९४

यह बेहदकी वाणी इन्द्रावतीके मुखसे प्रगट हुई है. समस्त सुन्दरसाथने अनेक प्रकारसे बेहदके इन अखण्ड सुखोंका रस पान किया है.

या बानीके कारने, कै करें तपसन ।
या बानीके कारने, कै पीवें अगिन ॥ ९५

इस बेहद वाणीकी प्राप्तिके लिए कितने ही ऋषि, मुनिजनोंने तपस्या की. इस वाणीके लिए कितने ही लोग अग्निकी ज्वालाका सेवन करते रहे.

या बानीके कारने, कै दमें देह ।
या बानीके कारने, कै करें कष्ट सनेह ॥ ९६

इस वाणीके लिए कई योगियोंने अपनी इन्द्रियोंका दमन किया और कई तपस्वियोंने कठिन तपस्या की तथा कई लोगोंने प्रेमपूर्वक भक्ति की.

या बानीके कारने, कै गले हेम ।
या बानीके कारने, कै लेवें अनसन नेम ॥ ९७

इस वाणीको प्राप्त करनेके लिए कई साधकोंने अपने शरीरको बर्फमें गला दिया. इस वाणीके लिए कई तपस्वियोंने अनशन करनेका नियम लिया.

या बानीके कारने, कै भैरव झंपावे ।
या बानीके कारने, तिल तिल देह कटावे ॥ ९८

इस बेहद वाणीके लिए कई लोगोंने भैरव झाँप (पहाड़से छलाङ्ग) लगाया तथा कई लोगोंने अपने शरीरके तिलके समान टुकड़े-टुकड़े कर डाले.

या बानीके कारने, कै संधान सारे ।
या बानीके कारने, कै देह जारे ॥ ९९

इस वाणीके लिए कई लोगोंने शरीरके अङ्ग-प्रत्यङ्गोंको सलाखों (बाण) से छलनी किया तथा कई लोगोंने अपनी देहको जलाकर भस्म कर दिया.

या बानीके कारने, करे कै विध ताब ।
सो मुखथें केते कहूं, हुए जो बिना हिसाब ॥ १००

इस बेहद वाणीके लिए कई तपस्वीजनोंने अपनी वासनाओंका दमन किया. ऐसे साधकोंकी साधनाओंका वर्णन इस मुखसे कैसे करूँ ? इस मार्ग पर चलने वाले साधक तो असंख्य हुए हैं.

किन एक बूंद न पाइया, रसना भी बचन ।
ब्रह्मांड धनियों देखिया, जो कहावे त्रगुन ॥ १०१

इस बेहद वाणीके रसकी एक बूँद मात्र भी किसीको प्राप्त नहीं हुई और जिह्वा द्वारा उसके विषयमें एक भी शब्दका उच्चारण नहीं हुआ. ब्रह्माण्डके अधिपति ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी उसके विषयमें कुछ नहीं कह सके फिर सामान्य जीवोंकी तो बात ही क्या रही ?

और भी नाम अनेक हैं, पर लेऊं कहा के ।
ब्रह्मांड के धनियों ऊपर, लिए जाए न ताके ॥ १०२

इस संसारमें और भी विज्ञजनोंके नाम प्रसिद्ध हैं, किन्तु किन-किनका नाम लिया जाए ? ब्रह्माण्डके अधिपतियोंके नाम लेनेके बाद अब उनका नाम लिया नहीं जा सकता.

सो रस सागर इत हुआ, लेहेरें उछलें ।
साथ सबे हम विलसहीं, बाहेर पूर भी चलें ॥ १०३

यह अमूल्य ब्रह्मानन्द रस सागरके समान उमड़ रहा है और उसकी लहरें चारों ओर उछलने लगीं. हम सब ब्रह्मात्माएँ इस अमृतरसको पीकर धनीके साथ विलसित हो रहीं हैं और यह रस छलककर अन्य लोगोंमें भी फैलने लगा है.

पेहेले बीज उदे हुआ, पुरी जहां नौतन ।
सब पुरियोंमें उतम, हुई जो धन धन ॥ १०४

इस ब्रह्मज्ञान (तारतमज्ञान) का बीज सर्व प्रथम श्री ५ नवतनपुरीधाम, जामनगरमें उदय हुआ. इस लिए नवतनपुरी सब पुरियोंमें उत्तम होकर धन्य धन्य हो गई.

फेर कहूं विध सकल, जासों सब समझाए ।
संसा कोई साथ को, मैं राख्यो न जाए ॥ १०५

यह ब्रह्मानन्द रस परमधामसे किस प्रकार अवतरित हुआ अब मैं इसका वर्णन करती हूँ, जिससे यह रहस्य सबकी समझमें आ जाए. अभी तक मैंने अपने सुन्दरसाथके मनमें कोई संशय शेष रहने नहीं दिया है.

जो रस गोकल प्रगट्या, सो तो सुख अलेखे ।
बिन जाने सुख विलसिया, घर कोई न देखे ॥ १०६

सर्वप्रथम गोकुल व्रजमण्डलमें श्रीकृष्ण अवतरणके साथ जो ब्रह्मानन्दरस प्रकट हुआ उसके सुख अपरिमित हैं. उस समय ब्रह्मात्माओंने स्वयंकी वास्तविक पहचान बिना ही प्रेमानन्द-लीला विलास किया. इसलिए उन्हें परमधामका साक्षात् अनुभव नहीं हुआ.

ए सुख सुपने विलसिया, साथ पीउ संघातें ।
घर देखे भागे सुपना, ना देखाए ताथें ॥ १०७

प्रियतम श्रीकृष्णके साथ ब्रह्मात्माओंने स्वप्नमें खेले गए खेलकी भाँति व्रजलीलाका आनन्द प्राप्त किया. यदि उन्हें परमधामका अनुभव हो जाता तो उनका स्वप्न टूट जाता, वे जागृत हो जातीं, फिर दुःख देखनेकी चाहना पूरी न होती. इसलिए उन्हें परमधामका अनुभव नहीं करवाया.

सुपन भागे सुख क्यों होए, खेल क्यों देखाए ।
जब सुख वतन लीजिए, नींद उडके जाए ॥ १०८

यदि स्वप्न मिट जाता तो स्वप्नका सुख कैसे प्राप्त होता तथा मायावी जगतका खेल कैसे देखा जा सकता ? जब परमधामका अखण्ड सुख लेने लगते तो उनकी निद्रा भी उसी समय उड़ जाती.

नींद उडे भागे सुपना, तब फेर फेरा होए ।
सुख सुपन और वतन, लिए जाए ना दोए ॥ १०९

नींदके उड़ते ही स्वप्न भी टूट जाता, जिससे मायावी खेल देखनेकी चाह पूरी नहीं होती और पुनः यहाँ आना पड़ता. स्वप्न जगतके सुख और

परमधामके अखण्ड सुख, दोनों एक साथ नहीं लिए जाते.

या विध साथ समझियो, सुख साथको दियो ।
यों बिन जाने ब्रजमें, सुख सुपने लियो ॥ ११०

हे सुन्दरसाथजी ! उस समय तुम्हें दिया हुआ सुख इस प्रकार समझना. इस प्रकार ब्रह्मात्माओंने व्रज लीलामें धामधनी श्रीकृष्णके अखण्ड प्रेमका आनन्द अनजानेमें ही प्राप्त किया.

अब सुख रास कहा कहूं, जाने निज सुख होए ।
ए सुख साथ पीउ बिना, न जाने कोए ॥ १११

अब योगमायाके चिन्मय ब्रह्माण्डमें हुई रास लीलाके अखण्ड सुखोंका वर्णन मैं कैसे करूँ ? मानों वे तो परमधामके ही निज सुख हों. इसलिए उस सुखको प्रियतम श्रीकृष्णजी तथा ब्रह्मांगनाओंके बिना अन्य कोई जान नहीं सकता.

ए पीउ सरूप नौतन, नौतन सिनगार ।
नेह हमारा नौतन, नौतन आकार ॥ ११२

रासलीलामें श्रीकृष्ण नूतन स्वरूपमें प्रकट हुए थे. उनका शृङ्गार भी नूतन प्रकारका था. उनसे हमारा स्नेह भी नवीन प्रकारका था और हमारा शरीर भी नूतन प्रकारका था.

ए बन सुन्दर नौतन, नौतन वाओ वाए ।
जल जमुना नौतन, लेहेरां लेवें बनराए ॥ ११३

वृन्दावन भी नवीन ऐश्वर्योंसे युक्त होनेके कारण अत्यधिक सुन्दर दिखाई दे रहा था. शीतल वायु भी नूतन प्रकारसे बह रहा था. श्री यमुनाजीका जल भी नवीन शोभायुक्त था. अलौकिक शोभायुक्त वन और वनस्पति भी लहरा रही थीं.

सुगंध बेलियां नौतन, जिमी रेत सेत प्रकास ।
नेहेकलंक चंद्रमा नौतन, सकल कला उजास ॥ ११४

पुष्प और वेलोंकी मोहक सुगन्धी भी नूतन लग रही थी, भूमिकी रेतमेंसे

उज्ज्वल प्रकाश निकल रहा था. निष्कलङ्क चन्द्रमा अपनी समस्त कलाओंसे धवल चाँदनी विखेर रहा था.

नौतन रंग पसु पंखी, बानी नई रसाल ।
नौतन बेन बजावहीं, नए सुख देवें लाल ॥ ११५

नूतन रङ्गके पशु-पक्षी नूतन मधुर स्वरोंमें कलरव कर रहे थे. प्रियतम श्रीकृष्णजी विभिन्न प्रकारके नए-नए सुख देनेके लिए नूतन वंशी बजा रहे थे.

या रस सुख केते कहूं, कै रेहेस प्रकार ।
साथ पीउ संग विलास, हम किए अपार ॥ ११६

इस ब्रह्मानन्द रससे प्राप्त आनन्दकी बात कहाँ तक करूँ ? यह रस बड़ा रहस्यमय है. हम ब्रह्मात्माओंने प्रियतम श्रीकृष्णजीके साथ विलासका अपरिमित सुख प्राप्त किया.

कै बातें या सुख की, जीव हिरदें जाने ।
ए सुख पेहेलेथें अलेखें, अति अधिकाने ॥ ११७

श्रीकृष्णजीके साथ खेली गई रास लीलाका आनन्द मेरी अन्तरात्मा ही जानती है. व्रजलीलाके सुखोंसे रासका यह आनन्द अनन्तगुणा और असीम था.

तेज सबोंमें मूलका, सबहीं चेतन ।
थिर चर चेतन ए लीला, ऐसी उतपन ॥ ११८

सभी ब्रह्मात्माओंमें भी मूल परमधामका ही तेज विद्यमान था एवं वृन्दावनकी सारी सामग्री चिन्मय थी. वहाँ पर स्थावर जंगम प्रकृति भी चेतन थी. ऐसी अलौकिक रासलीला प्रकट हुई थी.

पर ए सुख सबे सुपनमें, नेठ नींद जो मांहिं ।
ए सुख जोगमाया मिने, द्रष्ट ना घर तांहिं ॥ ११९

किन्तु ये सारे सुख स्वप्नके थे और ब्रह्मात्माओंने भी नींदमें ही इन सुखोंका अनुभव किया. इसलिए योगमायामें अखण्ड सुख लेते हुए भी परमधामकी

ओर उनकी दृष्टि नहीं पड़ी.

एक सुख कहे गोकल के, और सुख रास सुपन ।
सुख दोऊं क्यों होवहीं, बिचारियो मन ॥ १२०

एक ओर गोकुलकी व्रजलीला और योगमायाकी रासलीलाओंके सुख स्वप्नके कहे हैं. दूसरी ओर परमधामके सुख अखण्ड हैं. ये दोनों सुख एक साथ कैसे प्राप्त हो सकते हैं ? इस पर मनमें विचार कर देखो.

जब लीजे सुख सुपन, नहीं वतन द्रष्ट ।
जब सुख वतन देखिए, नहीं सुपनकी स्रष्ट ॥ १२१

जब तक हम स्वप्न जगतके सुखोंमें मग्न रहेंगे, तब तक परमधाम हमारी दृष्टिमें नहीं आएगा. जब परमधामके अखण्ड सुखकी ओर देखें तो स्वप्न जगतका अस्तित्व नहीं रहेगा.

यों सुख सुपने लिए, कछुए नहीं खबर ।
इन दोऊं लीला मिने, सुध नाहीं घर ॥ १२२

इस प्रकार व्रज तथा रासलीलामें स्वप्नके सुखका अनुभव किया. जिसमें परमधामकी कुछ भी सुधि नहीं रही. इन दोनों लीलाओंमें ब्रह्मात्माओंको परमधामकी जानकारी नहीं थी.

या विध लीला दोऊं करी, सिधारे वतन ।
ए ब्रह्मांड जो तीसरा, ले आए आपन ॥ १२३

इस प्रकार व्रज और रास दोनों लीलाओंमें खेलकर हमारी सुरता परमधाम लौटी. फिर इस तीसरे ब्रह्माण्डमें हम सब माया देखनेकी शेष इच्छाओंको लेकर आए हैं.

जो मनोरथ मूल का, हुआ नहीं पूरन ।
बिन सुध बिरह विलास किए, यों रही धाख मन ॥ १२४

मायाके दुःख देखनेकी हमारी मूल परमधामकी अभिलाषा व्रज और रासमें पूर्ण नहीं हुई. विरह और विलासके दुःख-सुख भी अनजानेमें ही प्राप्त हुए. इसलिए वह मनोरथ पूरा न हो सका.

धाख क्यों रहे अपनी, ए किया इंड फेर ।
साथें आए पीउजी, इत दूजी बेर ॥ १२५

हमारी दुःख देखनेकी इच्छा अधूरी न रहे, इसलिए यह कालमायाका ब्रह्माण्ड पुनः रचा गया. धामधनी श्रीकृष्णजी (श्रीराजजी) निजानन्द स्वामी सद्गुरुके रूपमें हमारे साथ पुनः इस जगतमें अवतरित हुए.

लीला दोऊं पेहेले करी, दूजे फेरे भी दोए ।
बिना तारतम ए माएने, न जाने कोए ॥ १२६

जिस प्रकार प्रथम अवतरणमें व्रज और रासकी दो लीलाएँ हुईं, उसी प्रकार दूसरी बार इस जागनीके ब्रह्माण्डमें भी दो प्रकारकी लीलाएँ (जागनी व्रज-श्रीसुन्दरबाई और जागनी रास-श्रीइन्द्रावतीके द्वारा) सम्पन्न हुई, किन्तु तारतम ज्ञान पाए बिना इन अर्थोंको कोई नहीं समझ सकता.

एक में उपज्या तारतम, दूजे मिने उजास ।
सब विध जाहेर होएसी, जागनी प्रकास ॥ १२७

प्रथम स्वरूप निजानन्द स्वामी श्री देवचन्द्रजीमें यह तारतम ज्ञान उदय हुआ एवं दूसरे स्वरूप श्री प्राणनाथजीसे इसका प्रकाश फैल गया. इस प्रकार जागनी लीलाका यह प्रकाश सब प्रकारसे विस्तृत होगा.

तारतम जोत उदोत है, तिनथें कहा होए ।
एक सुपन दूजा वतन, जीव देखे दोए ॥ १२८

तारतम ज्ञानका प्रखर प्रकाश सर्वत्र चमक रहा है, तो उससे क्या होगा ? इसके प्रकाशमें ब्रह्मात्माएँ एक ओर स्वप्नवत् ब्रह्माण्ड एवं दूसरी ओर अखण्ड परमधामको एक ही साथ देख सकेंगी.

वतन देखत जाहेर, दूजी दोए लीला जो करी ।
ए सब याद आवहीं, इत दोए दूसरी ॥ १२९

इस तारतम ज्ञानके कारण संसारमें बैठी हुई भी ब्रह्मात्माएँ परमधामको प्रत्यक्ष देख रहीं हैं और दूसरी ओर व्रज और रास दोनों लीलाओंका भी प्रत्यक्ष अनुभव कर रहीं हैं. यह सब कुछ याद करते हुए इस जागनी लीलामें

भी (सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी और श्री प्राणनाथजीके साथ हुई) दो लीलाओंका आनन्द प्राप्त कर रहीं हैं.

याद आवे सारे सुख, और जीव नैनों भी देखे ।
तारतम सब सुख देवहीं, विध विध अलेखे ॥ १३०

परमधामसे लेकर तीसरी जागनी लीला तकके सब सुख ब्रह्मात्माओंकी स्मृतिमें उभरकर आ रहे हैं और वे अपनी अन्तर्दृष्टिसे देख भी रहीं हैं. इस प्रकार तारतमज्ञान सब प्रकारके असंख्य सुख प्रदान करता है.

या लीला की बातें इत, जुबां कही न जाए ।
सुख दोऊ इत लीजिए, मनोरथ पुराए ॥ १३१

जागनी लीलाकी ये बातें इस नश्वर जिह्वासे कही नहीं जा सकतीं. इसलिए हे सुन्दरसाथजी ! तारतम ज्ञानके द्वारा दोनों (परमधाम और संसार) प्रकारके सुख प्राप्त करो, ताकि तुम्हारे सभी मनोरथ पूर्ण हो जाएँ.

या लीला को जो बल, बचन सब केहेसी ।
बचन माएने देखके, सबे सुख लेसी ॥ १३२

तारतम ज्ञानके ये वचन जागनी लीलाका सामर्थ्य बता देंगे. इन वचनोंका रहस्य समझकर संसारके सभी लोग आनन्द प्राप्त करेंगे.

धन धन ब्रह्मांड ए हुआ, धन धन भरथ खंड ।
धन धन जुग सो कलजुग, जहां लीला प्रचंड ॥ १३३

तारतम ज्ञानके उदय होनेसे यह ब्रह्माण्ड धन्य हुआ और भरत खण्ड भी धन्य हो गया. सभी युगोंमें कलियुग धन्य हुआ क्योंकि इसीमें जागनी लीलाका विस्तार हुआ है.

धन धन पुरी नौतन, जहां लीला उदे हुई ।
केताक साथ आइया, दूजिएं सब कोई ॥ १३४

यह नवतनपुरीधाम (जामनगर) धन्य है जहाँ पर जागनी लीला (अक्षरातीतकी पहचान करवाने वाली तारतम ज्ञानकी लीला) उदय हुई. इस जागनी लीलाके प्रथम चरणमें (श्रीदेवचन्द्रजीके सान्निध्यमें) कुछ ब्रह्मात्माएँ

सम्मिलित हुईं और दूसरे चरणमें (श्रीप्राणनाथजीके साथ) ब्रह्मसृष्टि, ईश्वरीयसृष्टि और जीवसृष्टि–ये सब आत्माएँ सम्मिलित हुईं.

धन धन धनी साथसों, धन धन तारतम ।
पूरन प्रकास ल्याए के, सुख दिए हम ॥ १३५

इस तीसरे ब्रह्माण्डमें सुन्दरसाथके साथ पधारे हुए सद्गुरु धनी धन्य हैं और उनके द्वारा लाया गया यह तारतम ज्ञान भी धन्य है. इस प्रकार सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी महाराजने परमधामका पूर्ण प्रकाश दिखाकर हम सब सुन्दरसाथको अपूर्व सुख दिया.

तारतम रस बेहद का, सब जाहेर किया ।
बोहोत विधें सुख साथ कों, खेल देखते दिया ॥ १३६

इस प्रकार सद्गुरुने तारतम ज्ञानके द्वारा व्रजरास और परमधामके पच्चीस पक्षोंका वर्णन करके बेहद भूमिकाका रस पान करवाया तथा संसारका खेल दिखाते हुए भी ब्रह्मात्माओंको अनेक प्रकारसे सुख प्रदान किया.

तारतम रस बानी कर, पिलाइए जाको ।
जेहेर चढ्या होए जिमीका, सुख होवे ताको ॥ १३७

तारतम ज्ञानका रस वाणीके रूपमें जिसको पिला दिया जाए, यदि उस पर मायावी जगतका विष चढ़ा हो तो वह भी उतर जाता है और उसे अखण्ड सुखकी प्राप्ति भी हो जाती है.

जो जीव नींद छोडे नहीं, पिलाइए बानी ।
ल्याए पीउ वतनथें, बल माया जानी ॥ १३८

जो जीव भ्रमकी निद्राको छोड़ नहीं रहे हैं, उन्हें भी तारतम वाणीका रस पिला दिया जाए. क्योंकि मायाकी शक्तिको पहचानकर ही सद्गुरु परमधामसे यह ज्ञान ले आए हैं.

जेहेर उतारने साथको, ल्याए तारतम ।
बेहद का रस श्रवने, पिलावें हम ॥ १३९

ब्रह्मात्माओं पर चढ़े हुए मायाके विषको उतारनेके लिए सद्गुरु श्रीदेवचन्द्रजी

तारतम ज्ञान लेकर आए हैं, जिसके द्वारा अब हम बेहदका अखण्ड रस अपने सुन्दरसाथको श्रवण पुटोंके द्वारा पिला रहे हैं.

ए रस श्रवनो जाके झरे, ताए कहा करे जेहेर ।
सुपन ना होवे जागते, देखीतां बेर ॥ १४०

यह तारतमका रस जिसके कानोंमें प्रवेश कर हृदयमें उतर जाएगा, उस पर मायाका विष क्या असर कर सकेगा ? जिस प्रकार जाग जाने पर स्वप्नका अस्तित्व नहीं रहता (तुरन्त उड़ जाता है), दोनोंका प्रत्यक्ष बैर है, उसी प्रकार तारतमका रस प्राप्त होते ही मायावी विष तत्काल उतर जाता है.

सुपन होवे नींदथें, कै इंड अलेखे ।
जिन छिन आंखा खोलिए, तब कछुए ना देखे ॥ १४१

एही रस तारतम का, चढ्या जेहेर उतारे ।
निरविष काया करे, जीव जागे करारे ॥ १४२

निद्राके कारण ही स्वप्न दिखाई देता है और उस स्वप्नमें हम असंख्य ब्रह्माण्ड देखते हैं. परन्तु जिस क्षण आँख खुल जाती है, तब सामने कुछ भी दिखाई नहीं देता. इसी प्रकार यह तारतमका रस अन्तःकरणमें चढ़े हुए मायाके विषको उतार देता है और शरीर (अन्तःकरण) को निर्विष (निर्विकार) बना देता है, जिससे जीव जागृत होकर शान्ति (अखण्ड सुख) प्राप्त करता है.

जागे सुख अनेक हैं, इतहीं अलेखे ।
वतन सुख लीजिए, जीव नैनों भी देखे ॥ १४३

जागृत हो जाने पर जीवको इस संसारमें भी अनेक प्रकारके सुख प्राप्त होते हैं. परमधामके अखण्ड सुखोंका यहीं पर अनुभव करते हुए आत्म-दृष्टिसे मूल घरका साक्षात्कार भी हो जाता है.

सुख बडे तारतम के, क्यों जाहेर कीजे ।
बानी मायने देखके, जीव जगाए लीजे ॥ १४४

तारतम ज्ञानके सुख अपार हैं, उन्हें कैसे प्रकट किया जाए ? इस तारतम

वाणीके रहस्य (अर्थ) को समझकर तुम अपने जीवको जागृत कर लो.

ए बचन साथ के कारने, मैं तो बाहेर पाडे ।
दरवाजे बेहद के, अनेक उघाडे ॥ १४५

तारतम ज्ञानके ये अमूल्य वचन मैंने सुन्दरसाथके लिए ही प्रकट किए हैं. इस प्रकार बेहद भूमिकाके अनेक बन्द द्वार खोल दिए हैं.

आधे अक्षरका पाओ लुगा, कबूं ना बाहेर ।
श्री धाम थें ल्याए धनी, तो हुए जाहेर ॥ १४६

बेहदका ज्ञान आधे अक्षरका चौथाई भाग जितना भी कभी प्रकट नहीं हुआ था. सद्गुरु धनी स्वयं परमधामसे यह निधि (तारतम ज्ञान) ले आए हैं. इसलिए बेहद वाणी प्रकट हुई है.

या खेल साथ देखहीं, जुदे जुदे होए ।
तो सुख ऐसा पसरया, नाहीं सुख बिना कोए ॥ १४७

इस संसारमें ब्रह्मात्माएँ अलग-अलग होकर इस खेलको देख रहीं हैं. इसलिए यह ज्ञान भी इस प्रकार विस्तृत हुआ जिससे अब कोई भी अखण्ड सुखके बिना रह नहीं जाएगा.

ऐसा खेल छलका, छोडाए नहीं ।
ब्रह्मांड की कारीगरी, सारी करी सही ॥ १४८

यह मायावी खेल ऐसा बनाया गया है कि इसे छोड़ा नहीं जा सकता. अक्षरब्रह्मने इस ब्रह्माण्डको बड़ी कुशलतासे बनाया है.

कबूतर बाजीगर के, जैसे कडिया भरिया ।
तबहीं देखे फूंक देएके, तुरत खाली करिया ॥ १४९

ऐसी बाजी इन छलकी, ब्रह्मांड जो रचियो ।
देख बाजी कबूतर, साथ मांहें मचियो ॥ १५०

जिस प्रकार बाजीगर जादूके कबूतर बनाकर खाली टोकरी भर देता है और देखते-देखते फूँक मारकर तत्काल टोकरीको खाली कर देता है, उसी प्रकार जादूगरके खेलकी भाँति यह ब्रह्माण्ड रचा गया है. ब्रह्मात्माएँ अक्षरब्रह्मरूपी

जादूगरके मायावी खेल (संसार) को देखकर इसी खेलमें मस्त हो गईं.

आंबो बोए जल सींचियो, तबहीं फूले फलियो ।
विध विध की रंग बेलियां, बन ऊपर चढियो ॥ १५१

एह देख चित भरमिया, सुध नहीं सरीर ।
विकल भई रंग बेलियां, चित नाहीं धीर ॥ १५२

ततछिन कछू न देखिए, बाजीगर हाथ ।
आंबो ना कछू बेलियां, या रंग बांध्यो साथ ॥ १५३

जिस प्रकार जादूगर अपनी जादूकी शक्तिसे एक आमके बीजको बो देता है और सींचकर तुरन्त फलता फूलता हुआ वृक्ष बना देता है एवं उस पर विविध रंगोंकी लताएँ भी चढ़ा देता है, ऐसे चमत्कारको देखकर दर्शकका मन भ्रमित हो जाता है. उसे अपने शरीर तककी सुधि नहीं रहती. उसकी समझमें यह नहीं आता कि ये विविध रंगोंकी लताएँ, वृक्ष आदि कहाँसे प्रकट हो गए, इस संकल्प विकल्पमें मन स्थिर नहीं रहता. उसी क्षण देखते हैं तो जादूगरके हाथमें कुछ नहीं होता. न तो आम ही दिखाई देता है और न ही उसपर चढ़ी हुई लताएँ, दिखाई देतीं हैं. ठीक इसी प्रकार जादूगरका खेल (यह संसार) देखकर ब्रह्मात्माओंका चित्त भ्रमित हो गया है तथा वे मायावी रङ्गमें रङ्गकर बँध गईं हैं.

बिसरी सुध सरीर की, बिसर गए घर ।
चीटी कुंजर निगलियां, अचरज या पर ॥ १५४

इस प्रकार मायावी खेल देखकर ब्रह्मात्माएँ अपने मूल शरीर (परात्मस्वरूप) और मूल घर परमधामको भी भूल गईं. आश्चर्य तो इस बातका है कि चींटी जैसी माया हाथीके समान शक्तिशाली ब्रह्म-आत्माओंको निगल गई (उन्हें वशीभूत किया).

अचरज एक बडो सखी, देखो दिल मांहिं ।
वस्त खरी को ले गई, जो कछुए नाहिं ॥ १५५

हे ब्रह्मात्माओ ! यह बड़ा आश्चर्य है. अपने दिलमें विचार कर देखो. जिसका

कुछ अस्तित्व ही नहीं है, ऐसी माया सच्ची वस्तु (आत्मा) को ही खींचकर ले गई.

जोर हुई नींद साथको, यों सुपन बाढ्या ।
खेल मिनेथें बल कर, न जाए काढ्या ॥ १५६

ब्रह्मात्माओंको गहरी नींदने घेर लिया जिससे स्वप्न बढ़ता चला गया. इसलिए प्रयत्न करने पर भी उन्हें इस स्वप्नके खेलसे बाहर निकाला नहीं जा सका.

ता कारन बानी बेहद, केहे नींद टालों ।
ना देऊं सुपन पसरने, चढ्या जेहेर उतारों ॥ १५७

इसलिए, हे सुन्दरसाथजी ! मैं बेहद वाणी (तारतमज्ञान) कह (सुना) कर तुम्हारी निद्रा उड़ा दूँगी. इस स्वप्नको और अधिक फैलने नहीं दूँगी और तुम पर चढ़े हुए मायाके विषको भी उतार दूँगी.

कुंजर काढों चींटी मुख, सुध आनों सरीर ।
तारतम केहे जुदे जुदे, करों खीर और नीर ॥ १५८

इस प्रकार चींटीरूपी मायाके मुखसे हाथीरूपी ब्रह्मात्माओंको निकाल कर उन्हें मूल स्वरूपकी स्मृति दिला दूँगी. तारतम ज्ञानको कहकर मैं दूध और पानी (ब्रह्म और माया) को अलग कर दूँगी.

झूठे को झूठा करूं, सांचा सागर तारूं ।
ए रस श्रवनों पिलाएके, साथ के कारज सारूं ॥ १५९

ब्रह्माण्डकी नश्वरता बताकर सच्ची ब्रह्मात्माओंको भवसागरसे पार उतार दूँ. इस प्रकार तारतम ज्ञानका अमृत पिलाकर सुन्दरसाथके सभी कार्य सिद्ध कर दूँ.

मोह जेहेर ऐसा जानके, ल्याए तारतम ।
सब विध का ए औषद, प्रकासे खसम ॥ १६०

इस मोह सागरका यह विष इतना प्रबल है, ऐसा जानकर (उसे दूर करनेके लिए) सद्गुरु निजानन्द स्वामी तारतम ज्ञान लेकर आए हैं. सब प्रकारके

विकारोंको दूर करनेकी यह अचूक औषधि है. सद्गुरुने इसको प्रकाशित किया है.

सब किया उजाला खेल में, साथ देखन आया ।
और जीव बंधाने या विध, विध विध की माया ॥ १६१

ब्रह्मात्माएँ जिस खेलको देखनेके लिए आई हैं, उसे तारतम ज्ञानने सब प्रकारसे प्रकाशित कर दिया. जगतके अन्य जीव अब भी मायाके अनेक बन्धनोंमें बँधे हुए हैं.

दूजे तीजे मैं तो कहे, जो साथ को माया भारी ।
तुम देखो सुपना सत कर, तो मैं कह्या बिचारी ॥ १६२

ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त भी दूसरे जीव हैं, यह मैंने इसलिए कहा कि सुन्दरसाथने मायाको अधिक महत्त्व दिया है. तुम इस स्वप्न जगतको यथार्थ मान रहे हो. इसलिए मैंने विचारपूर्वक ऐसा कहा है.

बिचार के छल छोडिए, तो होवे दोऊ पर ।
सुपने भी सुख लीजिए, हरषें जागिए घर ॥ १६३

तारतम ज्ञान पर विचार करके इस छल (माया) को छोड़ देंगे तो दोनों प्रकारके (इस संसारके एवं परमधामके) सुख प्राप्त होंगे. इस प्रकार संसारमें भी (द्रष्टा भावसे) सुखोंका अनुभव करो और अपने मूल घरमें भी हर्ष पूर्वक जागृत हो जाओ.

तारतम पख दूजा कोई नहीं, बिना साथ सब सुपन ।
जो जगाऊं माया झूठी कर, धाख रहे जिन मन ॥ १६४

तारतम ज्ञानके समान जानने योग्य दूसरा कोई यथार्थ मार्ग (पक्ष) नहीं है. उसी प्रकार ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त मायाके सब जीव भी स्वप्नवत् हैं. अब यदि मैं मायाकी नश्वरता समझाकर ब्रह्मात्माओंको जगाऊँ तो उनके मनमें इसे पुनः देखनेकी इच्छा नहीं रहेगी.

हद के पार बेहद है, बेहद पार अक्षर ।
अक्षर पार वतन है, जागिए इन घर ॥ १६५

इस नश्वर संसारके पार अविनाशी बेहद भूमिका है, जिसके पार अक्षरब्रह्म

है. अक्षरधामके भी पार परमधाम है, आप इस परमधाममें जागृत हो जाइए.

ए दोऊ विध मैं तो कही, सुपन हरषें उडाऊं ।
कहे इन्द्रावती उछरंगे, साथ जुगतें जगाऊं ॥ १६६

मैंने इसलिए माया और परमधाम दोनोंका यथार्थ स्वरूप कह दिया ताकि यह स्वप्न हर्ष पूर्वक (देखते-देखते) उड़ जाए. इन्द्रावती उमंगमें आकर कहती है कि मैं सुन्दरसाथको युक्तिपूर्वक जगाऊँ.

प्रकरण ३१ चौपाई ९५४

दूध पानीका निबेरा - राग सामेरी

हो वतनी बांधो कमर तुम बांधो, सुरत पियासों साधो ।
तीनों कांडों बडा सुकदेव, ताकी बानी को कहूं भेव ॥ १

इन्द्रावती कहती है, हे परमधामकी आत्माओ ! मायासे लोहा लेनेके लिए कमर कसकर तैयार हो जाओ. धामधनीके चरणोंमें अपनी सुरता (ध्यान) को स्थिर करो. कर्म, उपासना और ज्ञानकाण्डकी चर्चा करनेवालोंमें शुकदेवमुनि बड़े हैं. मैं उनकी वाणी (श्रीमद्भागवत) का एक रहस्य बता रही हूँ.

बिन पूछे कहूं बिचार, निज वतनी जो निरधार ।
जिन कोई संसे तुमें रहे, सो मेरी आतम ना सहे ॥ २

परमधामकी आत्माएँ जानकर बिना पूछे ही मैं तुम्हें यह रहस्य समझा रही हूँ. तुम्हारे मनमें कोई शङ्का रह जाए, यह मेरी आत्मा सहन नहीं कर पाती.

एक बचन इत यों सुनाए, चींटी पांउ कुंजर बंधाए ।
तिनके परवत ढांपिया, सो तो काहूं न देखिया ॥ ३

संसारमें कुछ ऐसे वचन सुनाई देते हैं, जैसे चींटीके पाँवमें हाथी बँध गया, तिनकेने पर्वतको ढँक लिया, किन्तु ऐसा कहीं देखा नहीं है.

चींटी हस्ती को बैठी निगल, ताकी काहूं ना परी कल ।
सनकादिक ब्रह्मा को कहे, जीव मन दोऊं भेलें रहे ॥ ४

चींटी हाथीको निगल गई, इस रहस्यकी जानकारी किसीको न मिली.

ब्रह्माजीके मानस पुत्र सनकादि (सनक, सनन्दन, सनातन, सनतकुमार) ने अपने पिता ब्रह्माजीसे पूछा, क्या इस संसारमें जीव (आत्मा) और मन एक साथ रहते हैं ?

ए भेलें हुए हैं आद, के भेलें है सदा अनाद ।
कहे ब्रह्मा भेलें नाहीं तित, ए आए मिले हैं इत ॥ ५

ये दोनों कुछ समयसे (इस जगतमें) इकठ्ठे हुए हैं या अनादि भूमिकामें भी एक साथ रहते हैं ? ब्रह्माजीने कहा, अनादि भूमिकामें ये साथ नहीं थे इसी नश्वर जगतमें आकर परस्पर मिल गए हैं.

तब सनकादिकें फेर यों कह्यो, तो ए जुदे करके देओ ।
फेर ब्रह्माएं करी फिकर, देखे बचन बिचार चित धर ॥ ६

पुनः सनकादि ऋषियोंने पूछा, आप इन्हें अलग करके इनके गुण दोष बता दें. तब ब्रह्माजीको बड़ी चिन्ता हुई, उन्होंने अपने अन्तर्मनसे विचार किया.

ए समझ मुझसे ना होए, क्यों कर करों जुदे मैं दोए ।
तब सरन विस्नुके गए, अंतरगतें बचन कहे ॥ ७

मुझे यह समझमें नहीं आता कि मैं इन दोनोंको अलग-अलग करके कैसे बताऊँ ? तब चिन्तन (ध्यान) द्वारा वे विष्णु भगवानकी शरणमें गए और उनसे प्रार्थना की.

बैकुंठनाथें सुने बचन, हंस होए आए ततछिन ।
हंसे रूप धर्‌यो सुन्दर, लिए सनकादिक के चित हर ॥ ८

वैकुण्ठनाथने जब यह बात सुनी तो उसी क्षण हंसका रूप धारण कर (दूधको पानीसे अर्थात् आत्माको मनसे अलग करने) आ गए. हंसका रूप इतना सुन्दर था कि उसने चारों ऋषियोंका मन हर लिया (मनका आवरण हट जानेसे चारोंके जीव निर्मल अवस्थामें आ गए).

जीवें हंससों करी पेहेचान, चारों चरन लगे भगवान ।
फेर मने यों कियो बिचार, ले नजरों देख्या आकार ॥ ९

चारों ऋषिजनोंके शुद्ध जीवने हंसरूपमें आए भगवान विष्णुको पहचान

लिया और उनके चरणोंमें प्रणाम किया. किन्तु पुनः जीव पर मनका प्रभाव पड़नेसे मनसे विचार करने लगे कि यह तो हंस ही दिखाई दे रहा है.

जो जीवे करी पेहेचान, सो मनें तबहीं दै भान ।
फेर सनकादिकें यों पूछिया, तुम कौन हो यों कर कह्या ॥ १०

जीवने भगवानको पहचाना किन्तु मनने भ्रमित करके उनकी बुद्धिको हर लिया. तब सनकादि ऋषियोंने पूछा कि आप कौन हैं ?

तब हंसे कियो जवाब, समझे सनकादिक भान्यो वाद ।
चित किये चारों के धीर, पर ना हुए जुदे खीर नीर ॥ ११

तब हंसरूप विष्णु भगवानने इसके उत्तरमें मन और जीवकी भिन्नता बता दी. उसे समझकर सनकादिकी भ्रान्ति मिट गई. उन चारोंके मन शान्त तो हुए किन्तु क्षीर नीर, ब्रह्म और मायाका अलग-अलग निरूपण नहीं हुआ.

आ ओ हंस या और कोए, ए जुदे कर ना देवे कोई दोए ।
दोऊ के जुदे वासन, यों कबहूं ना किए किन ॥ १२

हंसरूप भगवान हों या कोई अन्य किन्तु जीव और मनको किसीने अलग-अलग रूपमें स्पष्ट नहीं किया. इन दोनोंके उद्‌गम स्थान ही अलग हैं, ऐसा स्पष्ट किसीने नहीं बताया.

अब याकी कहूं समझन, जुदे कर देऊं जीव और मन ।
समझ के पेहेचानो जीव, निज वतन जो अपना पीव ॥ १३

अब मैं इन दोनोंकी पहचान बताकर जीव और मनका अलग-अलग स्वरूप स्पष्ट कर दूँ. इसे समझकर अपनी आत्मा, अपना मूलघर परमधाम एवं अपने धाम धनीको पहचान लो.

नहीं राखों तुमें संदेह, इन चारोंका अरथ जो एह ।
जो कोई साध पूछे क्यों, ताए सास्त्र सब केहेवे यों ॥ १४

तुम्हारे मनमें कोई भी सन्देह न रहने दूँ, उपर्युक्त चारों रहस्यमय वाक्योंका यही स्पष्टीकरण है. कोई साधुपुरुष पूछे कि यह कैसे सत्य है ? तो उसका उत्तर सब शास्त्र इस प्रकार देते हैं.

[ये चारों वाक्य इस प्रकार हैं – १. चींटीके पैरमें हाथीका बँध जाना. २. चींटीका हाथीको निगलजाना. ३. तिनकेसे पर्वतका ढँक जाना. ४. सुईके छेदमेंसे हाथीका निकल जाना.]

अकल अगम बैकुंठ का धनी, ए थोडी अजूं करें घनी ।
इन करते सब कछू होए, पर ए अरथ ना देवे कोए ॥ १५

वैकुण्ठनाथ असीम (अगम्य) बुद्धिके स्वामी हैं. इस प्रकार हंस बनकर उन्होंने अपना थोड़ा ही सामर्थ्य बताया है, वैसे तो वे बहुत कुछ कर सकते हैं. इनके प्रयत्नसे सबकुछ हो सकता है किन्तु इतने मात्रसे जीव और मनका सामर्थ्य अर्थात् माया और ब्रह्मका निरूपण न हो सका.

यों धोखा रह्या सब मांहिं, समझ काहूं ना परी क्यांहिं ।
अब समझाऊं देखो बानी, दूध बिछोडा कर देऊं पानी ॥ १६

इस प्रकार सभी शास्त्र वेत्ताओंके मनमें भी जीव और मनके स्वरूप (गुणदोष) का भ्रम (धोखा) बना ही रह गया. किसीको यह रहस्य समझमें नहीं आया. अब मैं सद्गुरुकी वाणी (तारतमज्ञान) के द्वारा इसे समझाऊँ और दूधको पानीसे (आत्माको मनसे) अलग कर दूँ.

जो तुमें साख देवे आतम, तो सत मायने जानो तारतम ।
इन अंतर देखो उजास, या जीव को बडो प्रकास ॥ १७

यदि तुम्हें अपनी आत्मा साक्षी दे, तो तारतम ज्ञानके इन रहस्यों (अर्थ) को सत्य समझना. तारतम ज्ञानके अन्दर ज्ञानका अथाह प्रकाश भरा हुआ है, जिसको ग्रहण कर यह जीव अधिक प्रकाशित करेगा.

चौदे लोक उजाला करे, जो निज वतन द्रष्टे धरे ।
याको नूर सदा नेहेचल, नेक कहूंगी याको आगे बल ॥ १८

जो परमधामकी ओर अपनी दृष्टि बनाए रखते हैं, वे तारतमके द्वारा चौदह लोकोंमें प्रकाश फैला सकते हैं. तारतमकी यह ज्योति सर्वदा अखण्ड है. इसकी क्षमताके बारेमें भविष्यमें कुछ प्रकाश डालूँगी.

ए उजाला इंड न समाए, सो इन जुबां कह्यो न जाए ।
या मन को नाहीं कछू मूल, याथें बडा कहिए आंकका तूल ॥ १९

तारतम ज्ञानका प्रकाश इस ब्रह्माण्डमें समा नहीं सकता, इसलिए झूठी जिह्वासे उसका वर्णन नहीं किया जा सकता. इस मायावी मनका तो कोई मूल (अस्तित्व) ही नहीं है. इससे बड़ा तो आकके फूलका एक रेसा ही होता है.

तूलका भी कोटमा हिसा, मन एता भी नहीं ऐसा ।
सो गया जीव को निगल, यों सब पर बैठा चंचल ॥ २०

उस अति महीन रेसेका करोड़वाँ भाग होना भी सम्भव है किन्तु मनका अस्तित्व तो उतना भी नहीं है. ऐसा नगण्य मन जीवको निगल गया. इस प्रकार यह चंचल मन सब जीवोंके सिर पर चढ़ बैठा है.

यों तिनके परवत ढांपिया, यों गज चींटी पांउ बांधिया ।
जो जीव करे उजास, तो मन को आगे ही होए नास ॥ २१

इस प्रकार तिनकेके समान मनने पर्वतके समान जीवको ढक लिया. इसी भाँति चींटीरूप मनके पाँवमें हाथीरूपी जीव बँध गया. यदि जीव तारतमका प्रकाश ग्रहण कर स्वयं प्रकाशित हो जाए तो मनका तो मानों पहलेसे ही अस्तित्व मिट जाएगा.

अब या पर एक कहूं द्रष्टांत, देखो आपनमें व्रतांत ।
सुकजी के कहे परवान, सात सागर को काढ्यो निरमान ॥ २२

अब इसके उपरान्त एक और दृष्टान्त देती हूँ, उसे (व्रजसे रासके लिए जाते हुए) अपने वृत्तान्तसे जोड़कर देखना. श्रीशुकदेवमुनिके वचनोंके अनुसार उन्होंने सातों सागरोंका निरूपण किया.

भवसागर को नाहीं छेह, सुकजी यों मुख जाहेर कहे ।
पेहेले पांउ भरे तुम जेह, कर सांचा मूल सनेह ॥ २३

शुकदेवजीने यह भी स्पष्ट कहा कि भवसागरका अन्त (पार) नहीं पाया जा सकता. किन्तु आपने पहले अवतरणमें व्रजसे रास लीलाके लिए जाते समय

(प्रियतम श्रीकृष्णजीके साथ सच्चा स्नेह जोड़कर) कैसे कदम उठाए थे ?

सखी बेन सुन ना रही कोई पल, देखो एह जीवको बल ।
इन आडा था मन संसार, पर जीव निकस्या वार के पार ॥ २४

उस समय श्रीकृष्णजीकी वंशी-ध्वनि सुनकर गोपिकाएँ एक पल भर भी नहीं रुकी थीं. देखो यही तो आत्माका बल है. उनकी राहमें यह मन और संसार भवसागर बनकर रुकावट बने, किन्तु उनकी आत्मा इसे पार कर आगे निकल गई.

देखो पांउ जीवने भरे, भवसागर ए क्यों कर तरे ।
जाको ना निकसे निरमान, सुकजीकी बानी परमान ॥ २५

देखो, आत्माने कैसे कदम उठाए ! इतने बड़े भवसागरको कैसे पार किया जिसका निरूपण ही नहीं हो सकता है, इस प्रकार शुकदेवजीकी वाणी कहती है.

सो फेर कह्यो गौपद बछ, यों भवसागर हो गयो तुछ ।
एता भी ना द्रष्टे आया, पर लिखने को नाम धराया ॥ २६

फिर उन्होंने ही स्वयं कह दिया कि गोपिकाओंके लिए यह भवसागर बछड़ेके चरणचिह्नोंमें भरे जलके समान तुच्छ और नगण्य हो गया. वास्तवमें उनकी दृष्टिमें भवसागर इतना बड़ा भी नहीं था, यह तो मुनिजीने लिखने मात्रके लिए गोवत्स पद लिखा है.

भवसागर क्यों एता भया, जो जीव खरे जीवनजी ग्रह्या ।
यों मन जीव थें जुदा टल्या, तब झूठा मन झूठेमें मिल्या ॥ २७

भवसागर इतना छोटा-सा कैसे हो गया ? इसलिए कि जीवने अपने जीवन (प्रियतम धनी) के चरण ग्रहण कर लिए. इस प्रकार मनसे जीव अलग हुआ तो झूठा मन झूठे ब्रह्माण्डमें मिल गया.

खीर नीर देखो बिचार, एक धनी दूजा संसार ।
दोऊ बासनमें दोऊ जुदे, यों नीके कर देखो हिरदे ॥ २८

क्षीर और नीर (दूध और पानी) अर्थात् ब्रह्म और माया पर विचार कर

इस प्रकार देखो कि परमात्मा एक हैं बाकी सब संसार माया है. दोनों पात्रोंमें (जीवमें परमात्माको और मनमें मायाको) दोनोंको अलग-अलग कर इस प्रकार हृदय पूर्वक भलीभाँति समझो.

अंतरगत बैठे हैं सही, अंतर उडावने बानी कही ।
बिचार देखो तो इतहीं पीउ, सागर तबहीं तूल करे जीउ ॥ २९

धामधनी सद्गुरु मेरे अन्तरमें विराजमान हुए हैं. धामधनी और अपनी आत्माके बीच पड़े हुए मायाके पर्देको दूर करनेके लिए ही यह वाणी कह रहे हैं. यदि इस पर विचार करके देखो तो प्रियतम धनी यहीं हैं. तब जीव संसार सागरको तूलके समान नगण्य समझ लेगा.

तब इतहीं जो वतन पीउ पार, सखी भाव भजिए भरतार ।
आतम महामत है सूर धीर, प्रेमें देखाए जुदे खीर नीर ॥ ३०

तब यहीं (इसी जगतमें) बैठे पार परमधाम एवं पूर्णब्रह्म परमात्माका साक्षात्कार होगा. उसके लिए प्रियतम परमात्माको सखी भावसे भजना चाहिए. महामतिकी आत्मा महाशक्तिशालिनी है. उसने प्रेम पूर्वक दूध और पानी (आत्मा और मन) को अलग कर दिखा दिया है.

श्री भागवत को सार

सुनियो साथ कहूं बिचार, फल वस्त जो अपनों सार ।
सोए देखके आओ वतन, माया अमल से राखो जतन ॥ १

हे सुन्दरसाथजी ! मैं विचार पूर्वक मूल सम्बन्धकी बात कह रही हूँ, समस्त शास्त्रोंके फल स्वरूप सार वस्तु श्रीमद्भागवतके अन्तर्गत श्रीकृष्णजीकी ब्राह्मी लीला है. इस सारको देख (समझ) कर परमधामकी ओर आओ. मायाके नशीले प्रभावसे स्वयंको यत्न पूर्वक बचाओ.

इन अमल को बडो विस्तार, सोए देखना नहीं निरधार ।
पेहेले आपन को बरजे सही, श्री मुखबानी धनिएं कही ॥ २

इस मायावी नशेका विस्तार बड़ा प्रबल है, निश्चय ही इसकी ओर मत देखो.

पहले भी धामधनी सद्गुरुने अपने श्रीमुखसे वाणी कहकर इसके प्रभावमें आनेसे हमें रोका था.

तिन कारन तुमें देखाऊं सार, मूल वतन के सब प्रकार ।
धनी अपनों धनीको विलास, जिनथें उपज अखंड हुओ रास ॥ ३

इसलिए मैं तुम्हें सार तत्त्व दिखा दूँ एवं अपने मूल घर (परमधाम) की लीलाओंको सब प्रकारसे प्रकट कर दूँ. अपने धामधनी परब्रह्म परमात्मा और उनके नित्य विहारसे रास लीलाका उदय हुआ और वह लीला भी अखण्ड हो गई.

ए सुनिओ आतम के श्रवन, सो नाहीं जो सुनिए ऊपर के मन ।
वेद को सार कह्यो भागवत, ए फल उपज्यो सास्त्रों के अंत ॥ ४

अखण्ड रास लीलाके इस रहस्यको आत्माके श्रवणोंसे सुनना. यह कोई ऊपरी मनसे सुनने वाली बात नहीं है. वेद आदि ग्रन्थोंका सार श्रीमद्भागवत कहलाता है, क्योंकि वेदादि ग्रन्थोंके फल स्वरूप यह ग्रन्थ सभी पुराणोंके अन्तमें प्रकट हुआ है.

सो फल सार सुकजीएं लियो, सींच के अमृत पकव कियो ।
ए फल सार जो भागवत भयो, ताको सार दसम स्कंध कह्यो ॥ ५

इस साररूप फल (श्रीमद्भागवत) को श्रीशुकदेवमुनिने ग्रहण किया और प्रेमामृतसे सींच कर उसे परिपक्व किया. इसलिए सभी शास्त्रोंका सार श्रीमद्भागवत कहलाया और भागवतका भी सार दशवाँ स्कन्ध माना गया.

दसम के नबे अध्या, तिनका सार भी जुदा कह्या ।
ताको सार अध्या पैंतीस, जो ब्रजलीला करी जगदीस ॥ ६

दशमस्कन्धमें नब्बे अध्याय हैं, उनका सार भी अलग बताया गया है. उनका सार आरम्भके पैंतीस अध्याय हैं, जिनमें विश्व ब्रह्माण्डके स्वामी श्रीकृष्णजीकी व्रज लीलाका वर्णन है.

जगदीस नाम विस्नुका होए, यों न कहूं तो समझे क्यों कोए ।
ए जो प्रेम लीला श्रीकृष्णजीएं करी, सो गोपन में गोपियों चित धरी ॥ ७

वैसे तो जगत (इस दुनियाँ) के ईश–जगदीश नाम विष्णु भगवानका है (परब्रह्म श्रीकृष्णको जगदीश नहीं कहा जा सकता) किन्तु ऐसा न कहें तो संसारके लोग कैस समझेंगे ? परब्रह्म श्रीकृष्णजीने व्रजमें (ग्यारह वर्ष बावन दिन तक) जो प्रेमलीला की, उसे गोपवंशकी गोपियोंने हृदयमें धारण किया.

ए ब्रह्मलीला भै जो दोए, ब्रजलीला रासलीला सोए ।
तामें तीस अध्या जो बाल चरित्र, ए ब्रह्मलीला उतम पवित्र ॥ ८

गोकुल और वृन्दावनमें व्रज और रासके रूपमें दो ब्रह्म लीलाएँ हुईं हैं. श्रीमद्भागवतमें श्रीकृष्णजीकी बाल लीलाका वर्णन तीस अध्यायोंमें है. परब्रह्मकी लीला होनेसे यह उत्तम और पवित्र मानी गई है.

पंच अध्याई ताको सार, किसोरलीला जोगमाया विस्तार ।
ब्रजलीला को जो ब्रह्मांड, रात दिन जित होत अखंड ॥ ९

श्रीमद्भागवतके दशमस्कन्धके पैंतीस अध्यायोंमें भी साररूपमें श्रीरास लीलाके पाँच अध्याय माने जाते हैं. योगमाया रचित चिन्मय वृन्दावनमें श्रीकृष्णजीकी यह किशोर लीला सम्पन्न हुई है. व्रज लीला जिस कालमायाके ब्रह्माण्डमें हुई, उसके भी रात दिन अखण्ड हुए हैं.

जोगमाया जो लीला रास, रात अखंड सब चेतन विलास ।
ए लीला सुके आवेसमें कही, राजा परीछतें सही ना गई ॥ १०

योगमायाके चिन्मय ब्रह्माण्डमें जो रास लीला हुई है वह रात्रिकी लीला अक्षर ब्रह्मके हृदयमें अखण्ड हो गई. इस विलास लीलाका वर्णन श्रीशुकदेवमुनिने आवेशमें किया इसलिए राजा परीक्षित उसे सहन (ग्रहण) न कर पाए.

ए लीला क्यों सही जाए, बैकुंठ को अधिकारी राए ।
सुक के अंग हुओ उलास, जानूं बरनन करूंगो रास ॥ ११

राजा परीक्षित वैकुण्ठ धामके अधिकारी थे, इसलिए वे अखण्ड रास लीलाको सहन (ग्रहण) कैसे कर सकते ? शुकदेवमुनिका मन तो अखण्ड

रासका वर्णन करनेके लिए अत्यधिक उत्सुक था.

या समे प्रस्न कियो राजन, सुक को जोस दियो तिन भान ।
प्रस्न चूक्यो भयो अजान, रास लीला ना बरनवी परवान ॥ १२

इसी समय राजा परीक्षितने प्रश्न कर शुकदेवजीके जोश आवेशको भंग कर दिया. भूलकर प्रश्न कर देनेसे राजा रासलीलाके आनन्दसे वञ्चित (अनजाने) रह गए. इस प्रकार रासलीलाका वर्णन पूरा न हो सका.

तब हाथ निलाटें दियो सही, सुकें दुख पाए के कही ।
मैं जोगी तें राजा भयो, रास को सुख न जाए कह्यो ॥ १३

तब शुकदेवजीने अपना सिर पीटा और अत्यन्त दुःखी होकर कहा, हे राजन् ! अब मैं पहलेकी भाँति योगीका योगी ही रह गया और तू भी मात्र राजा ही रह गया. इस प्रकार रासलीलाके सुख (आनन्द) का वर्णन नहीं किया जा सका.

ए बानी मेरे मुखथें ना पडे, ना तेरे श्रवना संचरे ।
ए जोग आपन नाहीं दोए, तो इन लीला को सुख क्यों होए ॥ १४

यह अखण्ड वाणी अब मेरे मुखसे कही नहीं जा सकेगी और न ही तेरे कान इसे सुन पाएँगे. हम दोनों ही इसके योग्य पात्र नहीं हैं. इसलिए इस अखण्ड लीलाका सुख कैसे प्राप्त कर सकते ?

याके पात्र होसी इन जोग, या लीला को सो लेसी भोग ।
केसरी दूध ना रहे रज मात्र, उतम कनक बिना जो पात्र ॥ १५

अखण्ड रासलीलाके अधिकारी (योग्य पात्र) ही इस लीलाका आनन्द ले पाएँगे. केसरी (शेरनी) का दूध उत्तम सोनेके पात्र बिना रह नहीं सकता.

एह बचन सुनके राए, पड्यो भोम खाए मुरछाए ।
कंपमान होए कलकले, रोए बोहोत अंतस्करन गले ॥ १६

ये वचन सुनकर राजा मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़े. घबराहटके कारण वे काँपने लगे,रोते-रोते उनका मन (अन्तःकरण) ही द्रवित हो गया.

तलफ तलफ दुख पावे मन, अंग मांहें लागी अगिन ।
तब सुकजीएं दिलासा दिया, आंसू पोंछ के बैठा किया ॥ १७

उनका मन तड़प-तड़पकर व्याकुल हो गया. उनके अङ्गोंमें पश्चात्तापकी अग्नि जलने लगी. तब शुकदेवमुनिने उन्हें सान्त्वना दी और आँसू पोंछते हुए उठा कर बैठाया.

सुन हो राजा द्रढ कर मन, अंतरगत केहेता बचन ।
सो केहेने वाला उठके गया, मैं अकेला बैठा रह्या ॥ १८

हे राजन् ! मनको दृढ़ कर सुनो, मेरी अन्तरात्मामें विराजमान होकर कोई शक्ति मुझसे ये वचन कहला रही थी. अब वह शक्ति चली गई और मैं यहाँ अकेला ही बैठा रह गया.

अब राजा पूछत मोहे कहा, तुझ सरीखा मैं हो रह्या ।
तब परीछत चरन पकड के कहे, स्वामी ए दाझ जिन अंगमें रहे ॥ १९

हे राजन ! अब तुम मुझसे क्या पूछोगे ? मैं भी तुम्हारे जैसा ही हो गया हूँ. तब राजा परीक्षितने उनके चरण पकड़ कर कहा, हे स्वामी ! इस वाणीको सुननेकी उत्कण्ठा मेरे मनमें शेष रहने मत दीजिए.

मुनीजी मैं बोहोत दुख पांउं, एह दाझ जिन लिए जांउं ।
तब भागे जोस कही पंच अध्याई, रास बरनन ना हुओ तिन तांई ॥ २०

हे मुनिवर ! मैं बहुत ही दुःखी हूँ. कहीं यह उत्कण्ठा लेकर ही न चला जाऊँ. तब जोश उतर जाने पर भी शुकदेवजीने पाँच अध्यायोंमें ही रासकी लीला पूरी कर दी, किन्तु इतने मात्रसे रासलीलाका पूरा वर्णन न हो सका.

ना तो पंच अध्याई क्यों कहे सुक मुन, रासलीला अखंड बरनन ।
ए लीला क्यों अधबीच रहे, एकादस द्वादस स्कंध कहे ॥ २१

अन्यथा अखण्ड रास लीलाके वर्णनमें, शुकदेव मुनि मात्र पाँच ही अध्याय क्यों कहते ? ऐसी रासलीलाको बीचमें ही छोड़कर वे ग्यारहवें और बारहवें स्कन्ध तक क्यों चले जाते ?

ए रास लीला को छोड के सुख, आधा लुगा न निकसे मुख ।
पर ए केहेवाए धनीके जोस, सो उतर गया बचनके रोस ॥ २२

श्रीरासलीलाके परमानन्दको छोड़कर अन्य विषय पर उनके मुखसे आधा शब्द भी नहीं निकलता. रासलीलाका वर्णन तो परब्रह्म परमात्माके आवेशसे हो रहा था, वह आवेश परीक्षितके प्रश्नके कारण शुकदेवमुनिके क्षुब्ध हो जाने पर उतर गया.

क्या करे अधबीचमें लिया, अखंड सुख पूरा केहेने ना दिया ।
दोष नहीं राजा को इत, ब्रह्मसृष्टि बिना ना पोहोंचे तित ॥ २३

वे भी क्या करते ? परीक्षितने बीचमें ही प्रश्न कर दिया और अखण्ड रासका वर्णन पूरा करने ही नहीं दिया. किन्तु यहाँ राजा परीक्षितका भी क्या दोष, ब्रह्मात्माओंके बिना उस लीला विलासमें कोई पहुँच ही नहीं सकता.

जाको जाना बैकुंठ वास, सो क्यों सहे अखंड प्रकास ।
तो पार दरवाजे मूंदे रहे, हद के संगी खोलने ना दिए ॥ २४

जिन जीवोंका वास वैकुण्ठ धाम ही निश्चित है, वे परब्रह्मकी अखण्ड लीलाके प्रकाशको कैसे सहन कर सकते हैं ? यही कारण है कि पार (बेहद) के द्वार बन्द ही रह गए. हद (इह लोक) के साथी (राजा परीक्षित) ने उन्हें खोलने ही नहीं दिया.

अब सुकजीके केती कहूं बान, सार काढने ग्रह्यो पुरान ।
सबको सार कह्यो ए जो रास, ए जो इन्द्रावती मुख हुओ प्रकास ॥ २५

शुकदेवजीकी वाणीकी अब मैं कितनी चर्चा करूँ ? उसका सार निकालनेके लिए ही मैंने श्रीमद्भागवतकी चर्चा की है और पूरे भागवत ग्रन्थका सार यह रासलीला है जिसका प्रकाश (विस्तरण) इन्द्रावतीके मुखसे (श्रीरासग्रन्थके माध्यमसे) हुआ.

अब कहूं इन रासको सार, जो तारतम बचन है निरधार ।
तारतम सार जागनी बिचार, सबको अरथ करसी निरवार ॥ २६

अब मैं सार स्वरूप इस रास ग्रन्थका भी सार बता रही हूँ निश्चय ही वह

सार तारतम ज्ञानके वचन हैं. तारतम ज्ञानका सार आत्म-जागृति है. यही ज्ञान सारे धर्मग्रन्थोंके गूढ़ार्थको स्पष्ट कर देगा.

निराकार के पार के पार, तारतम को जागनी भयो सार ।
अक्षर पार घर अक्षरातीत, धामके यामें सबे चरित ॥ २७

क्षर जगतके पार शून्य निराकार आदिसे परे अक्षर ब्रह्म और उससे भी परे परमधाममें जागृत होना यही तारतम ज्ञानका सार है. अक्षरधामके भी पार अक्षरातीत धामकी सभी लीलाएँ इसी तारतम ज्ञानमें निहित हैं.

इत ब्रह्मलीला को बडो विस्तार, या मुखथें कहा कहूं प्रकार ।
ए तारतम को बडो उजास, धनी आएके कियो प्रकास ॥ २८

परमधाममें होनेवाली ब्रह्मलीलाका विस्तार बहुत बड़ा है, इस मुखसे उसका किस प्रकार वर्णन करूँ ? तारतम ज्ञानका तेज बहुत बड़ा है, जिसको सद्गुरुने यहाँ आकर प्रकाशित किया है.

संसे काहूं ना रेहेवे कोए, ए उजाला त्रैलोकी में होए ।
प्रगट भई पर आतमा, सो सबको साख देवे आतमा ॥ २९

तीनों लोकों (स्वर्गादि, मृत्यु, पाताल) में तारतमका प्रकाश फैल जानेसे किसीके भी मनमें कोई संशय शेष नहीं रहेंगे. ब्रह्मधाममें विराजमान ब्रह्मात्माओंका परात्मस्वरूप प्रकट होगा जिनकी साक्षी (सुरता स्वरूप) आत्माएँ देंगी (कि यही हमारा मूल स्वरूप है).

उड्यो अंधेर काढयो बिकार, निरमल सब होसी संसार ।
ए प्रकास ले धनी आए इत, साथ लीजो तुम मांहें चित ॥ ३०

तारतमके तेजके कारण अज्ञानान्धकार उड़ गया और सबके मनके विकार दूर हो गए. अब इससे समस्त संसार (के लोगोंका हृदय) निर्मल हो जाएगा. ऐसा ज्ञानरूपी प्रकाश लेकर सद्गुरु धनी यहाँ आए हैं. हे सुन्दरसाथजी ! तुम इसे चित्तमें ग्रहण करो.

इन घर बुलावें ए धनी, ब्रह्मसृष्टि जो हैं अपनी ।
खेल किया सो तुम कारन, ए बिचार देखो प्रकास बचन ॥ ३१

ऐसे धामधनी अपनी आत्माओंको अखण्ड परमधाममें बुला रहे हैं. तुम्हारे लिए ही इस नश्वर खेलकी रचना की है, देखो, प्रकाशके वचनों पर विचार कर यह बात समझो.

देख्यो खेल मिल्यो सब साथ, जागनी रास बडो विलास ।
खेलते हंसते चले वतन, धनी साथ सब होए परसन ॥ ३२

जगतके नश्वर खेल देखकर सब सुन्दरसाथ एकत्र हुए हैं. जागनी रासमें बड़ा आनन्द (विलास) प्राप्त होगा. सब सुन्दरसाथ हँसते खेलते हुए परमधाम चलेंगे (अपनी सुरताको परमधाममें लौटाएँगे) जिससे धामधनी एवं ब्रह्मात्माएँ सब आनन्दित (प्रसन्न) होंगी.

इतहीं बैठे जागे घर धाम, पूरन मनोरथ हुए सब काम ।
उड्यो अग्यान सबों खुली नजर, उठ बैठे सब घर के घर ॥ ३३

यहीं (इसी संसारमें) बैठे हुए ही हमें अपने मूल घर परमधाममें (अपने परात्म स्वरूपमें) जागृत होना है. सबकी सभी मनोकामनाएँ पूर्ण होंगीं. अज्ञानके मिट जानेसे सब ब्रह्मात्माओंकी आत्मदृष्टि खुल गई. सब अपने मूलघर-परमधाममें ही उठकर बैठ गए, अर्थात् सब परमधाममें ही थे मात्र उनकी सुरता इस दुनियाँमें आई थी. अब सद्गुरुके ज्ञानसे जागृत होकर सब परमधाममें ही बैठ गए.

हांसी ना रहे पकरी, धनिएं जो साथ पर करी ।
हंसते ताली देकर उठे, धनी महामत साथ एकठे ॥ ३४

धामधनीने सुन्दरसाथके साथ (उन्हें सुरता रूपसे खेलमें भेजकर) जो हँसी की उसका कोई पारावार नहीं होगा. महामति कहते हैं, सभी सुन्दरसाथ हँसते हुए ताली देकर धनीके चरणोंमें एक साथ जागृत होंगे.

प्रकरण ३३ चौपाई १०१८

अब कहूं सो हिरदे रख, अठोतर सौ जो है पख ।
एह बिचार सुनियो परवान, याको सार काढूं निरवान ॥ १

अब मैं भक्ति मार्ग (आत्म-सोपान) के एक सौ आठ पक्षोंको हृदयमें धारण कर उनका विवरण देती हूँ. इस प्रामाणिक विचारको सुनो और समझो, अब मैं निश्चित इनका सार निकालती हूँ.

माया जीव कोई है समरथ, दौड करत है कारन अरथ ।
निसंक आपोपा डारया जिन, निहकर्म पैंडा लिया तिन ॥ २

मायामें ऐसे कई समर्थ जीव हैं जो अपने लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए प्रयत्नशील रहते हैं. जिन्होंने निःसंकोच होकर स्वयंको समर्पित किया है, वे ही निष्काम कर्मयोगके पथ पर चल पाए हैं.

पुष्ट मरजाद जो प्रवाह पख, याको सार बताऊं लख ।
ताके हिसे किए नौ, चढे सीढी भगत जल भौ ॥ ३

पुष्ट, प्रवाह और मर्यादा इन तीन भावोंको पक्ष कहा जाता है. इनका सार बता रही हूँ. नवधा भक्तिके द्वारा इन तीनोंके नौ-नौ भाग कर भक्तजन इस सीढ़ीसे भवसागरके पार हुए हैं.

भी ताके बांटे किए सताइस, चढे ऊंचे सुरत बांध जगदीस ।
सो बांटे किए असी और एक, पोहोंचे बैकुंठ चढे इन बिवेक ॥ ४

वे तीनों भाव नवधा भक्तिसे गुणा करने पर सत्ताईस हो जाते हैं. इन्हींके द्वारा भक्त जन अपने चिन्तनको जगतके ईश (जगदीश) तक पहुँचाते हैं. अब पुनः सत्व, रज, तम इन तीन गुणोंसे उन भावोंको गुणा करने पर एक्यासी भाव (पक्ष) होते हैं. इन सोपानों पर विवेकके साथ चढ़ कर वैकुण्ठ तक पहुँचा जाता है.

चार विध की कही मुगत, करनी माफक पावे इत ।
इतथें जो कोई आगे जाए, निराकार से ना निकसे पाए ॥ ५

वैकुण्ठ धाममें चार प्रकारकी मुक्ति (सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य एवं

सायुज्य) कही गई है जिन्हें भक्त जन अपनी करनी (अपने अपने कर्मोंकी उच्चता) के अनुसार प्राप्त करते हैं. इससे आगे जो कोई भी जाते हैं वे निराकारसे आगे निकल नहीं पाते.

पख बयासिमां जो कह्या, वल्लभाचारज तहां पोहोंचिया ।
स्यामा वल्लभी यों करी बडी दौर, ए भी आए रहे इन ठौर ॥ ६

बयासीवाँ पक्ष इससे भी आगे कहा गया है, श्रीवल्लभाचार्यजी (प्रेमभक्तिमार्गके कारण) वहाँ तक पहुँचे हैं. श्याम (राधा) वल्लभी भी अपने प्रयत्नोंसे यहाँ तक पहुँच पाए.

छेद इंड में कियो सही, पर अखंड द्रष्टे आया नहीं ।
आडी सुंन भई निराकार, पोहोंच ना सके ताके पार ॥ ७

कई आत्माएँ ब्रह्माण्डको भी भेदकर आगे निकलीं किन्तु उन्हें अखण्ड वस्तु दृष्टिगोचर नहीं हुई. शून्य और निराकारका व्यवधान आ जानेसे वे उससे आगे नहीं जा सकीं.

इनों की तो एह सनंध, पीछे फेर पकड्या प्रतिबिम्ब ।
और साध अलेखे केते कहूं, निसंक दौड करी जिनहूं ॥ ८

इन लोगोंकी ऐसी स्थिति हुई जिससे पीछे मुड़कर उन्होंने (व्रजरासकी) प्रतिबिम्ब लीलाको ग्रहण किया. ऐसे अनेकों साधक हुए हैं जिन्होंने अपनी साधनाके द्वारा पार पहुँचनेका प्रयत्न किया.

ग्यानी अनेक कथें बहु ग्यान, ध्यानी कै विध धरें ध्यान ।
पर ए सबही सुंन के दरम्यान, छूट्या न काहूं संसे उनमान ॥ ९

ज्ञानी जन ज्ञानकी अनेक चर्चाएँ करते हैं. ध्यान करने वाले भी विभिन्न प्रकारसे ध्यान करते हैं, किन्तु वे सब शून्यके अन्तर्गत ही रह गए हैं. मात्र अनुमानके कारण उनमेंसे किसीके भी संशय नहीं छूटे.

उपासनी निरगुन या निरंजन, किन उलंघ्यो न जाए विस्नुको कारन ।
या सास्त्र या साधू जन, द्वैत सबे समानी सुन ॥ १०

निर्गुण या निरंजनकी उपासना करने वाले भी भगवान विष्णुके कारण स्वरूप

(इच्छा शक्ति, सात शून्य) का उलंघन नहीं कर पाए. शास्त्रों या साधु जनोंके उपदेश भी द्वैतके कारण शून्यमें ही समा गए.

इन ऊपर पख है एक, सुनियो ताको कहूं बिवेक ।
पुरुष प्रकृति उलंघ के गए, जाए अखंड सुख मांहें रहे ॥ ११

इनके ऊपर और एक पक्ष है,विवेक पूर्वक उनका विवरण सुनो. जो लोग प्रकृति और पुरुषका भी उलंघन कर आगे बढ़ते हैं, वे उस पक्षमें पहुँचकर अखण्ड सुख प्राप्त करते हैं.

त्रासिमा पख परवान, जो वासना पांचों लिया निरवान ।
ए पांचो कहूं अपनाइत कर, देखाऊं सबदातीत घर ॥ १२

यह वही तिरासीवाँ पक्ष है जिसे पञ्च वासनाओं (विष्णु भगवान, शिवजी, सनकादि, शुकदेव एवं सन्त कबीर) ने ग्रहण किया है. अब मैं तुम्हें अपना समझकर इन पाँचोंका विवरण देते हुए शब्दातीत अखण्ड घर (परमधाम) के दर्शन कराती हूँ.

ना तो प्रमोध काहे को कहूं, चरन पिया के प्रेमें ग्रहूं ।
पर साथ कारन कहूं फेर फेर, ए पांचों नाम लीजो चित धर ॥ १३

अन्यथा मुझे उपदेश देनेकी आवश्यकता ही क्या है ? प्रेम पूर्वक धनीके चरणोंमें ही न रह जाऊँ, परन्तु सुन्दरसाथके लिए वारंवार कह रही हूँ. इन पाँचोंके नाम अपने हृदयमें याद रखो.

एक भगवानजी बैकुंठ को नाथ, महादेवजी भी इनके साथ ।
सुकजी और सनकादिक दोए, कबीर भी इत पोहोंचा सोए ॥ १४

एक तो वैकुण्ठ नाथ भगवान विष्णु हैं. दूसरे उनके साथ महादेव (भगवान शिव) हैं. शुकदेवजी, सनकादि तथा सन्त कबीर भी इसी भूमिकामें पहुँचे हैं.

लखमीनारायन जुदे ना अंग, सो तो भेले विस्नु के संग ।
ए पांचो कहे मैं तिन कारन, चित ल्याए देखो याके बचन ॥ १५

लक्ष्मी नारायण ये भगवान विष्णुसे भिन्न नहीं हैं. इन पाँचोंके नाम इसलिए

लिए हैं कि इनके वचनों पर तुम्हें ध्यान देना है.

देखो सबद इनोंकी रोसनी, पर जानेगा बडी मतका धनी ।
पख पचीस या ऊपर होए, तारतम के बचन हैं सोए ॥ १६

इनके उपदेश (वचनों) का प्रकाश तो देखो (वह अपरम्पार है) किन्तु बड़ी मतके धनी (तारतम्य दृष्टि वाले) ही इसे समझ पाएँगे. इसके ऊपर पच्चीस पक्ष कहे गए हैं. वे तो तारतमके वचन द्वारा ही कहे जाएँगे.

इन बचनों में अक्षरातीत, श्री धामधनी साथ सहित ।
ए देखो तारतम को उजास, धनी ल्याए कारन साथ ॥ १७

तारतमके इन वचनोंमें धामधनी (परब्रह्म परमात्मा) अक्षरातीतके साथ साथ ब्रह्मात्माओंका भी वर्णन है. तारतम ज्ञानके इस प्रकाशको देखो जिसे सद्गुरु धनी सुन्दरसाथके लिए ले आए हैं.

तुम आपको ना करो पेहेचान, बोहोत ताए कहिए जो होए अजान ।
तुम जो हो इन घर के परवान, सुनते क्यों ना होत गलतान ॥ १८

हे सुन्दरसाथजी ! तुम स्वयंको पहचानते नहीं हो. अज्ञानी व्यक्तिको ही ज्यादा कहना पड़ता है. तुम तो निश्चय ही परमधामकी आत्माएँ हो, इन वचनोंको सुनकर क्यों द्रवित नहीं होते हो ?

सनेहसों सेवा कीजो धनी, घरकी पेहेचान देखो अपनी ।
तुम प्रेम सेवाए पाओगे पार, ए बचन धनीके कहे निरधार ॥ १९

धामधनीको पहचानकर स्नेह पूर्वक उनकी सेवा करो और अपने घरको भी पहचानो. प्रेम और सेवाके द्वारा ही तुम भवसागरसे पार हो सकते हो. ये निश्चय ही सद्गुरु धनीके कहे हुए वचन हैं.

पीछला साथ आवेगा क्योंकर, प्रकास बचन हिरदे में धर ।
चरने हैं सो तो आए सही, पर पिछले कारन ए बानी कही ॥ २०

(सद्गुरुके अन्तर्धान होनेके) बादमें आनेवाली आत्माएँ कैसे जागृत होंगी ? (यह शंका हो सकती है किन्तु) वे इस प्रकाश ग्रन्थके वचनोंको हृदयमें

धारण कर जागृत होंगी. क्योंकि जो आत्माएँ सद्गुरुके चरणोंमें हैं वे तो आईं (जागृत) ही हैं परन्तु बादमें आने वाली आत्माओंके लिए यह वाणी कही गई है.

आवसी साथ ए देख प्रकास, अंधकार सब कियो नास ।
एह बचन अब केते कहूं, इन लीला को पार ना लहूं ॥ २१

आत्माएँ इस प्रकाश वाणीको देखकर आएँगी. इस तारतम ज्ञानने सब अन्धकारको मिटा दिया है. मैं इन वचनोंको कितना कहूँ ? इन लीलाओंका पार ही पाया नहीं जा सकता.

या बानी को नाहीं पार, साथ केता करसी बिचार ।
तिन कारन बोहोत कह्यो न जाए, ए तो पूर बहे दरियाए ॥ २२

इस वाणीका कोई पारावार ही नहीं है किन्तु (यह देखना है कि) सुन्दरसाथ इस पर कितना विचार करते हैं. इसलिए बहुत कुछ कहा नहीं जाता परन्तु यह तो समुद्रके प्रवाहकी भाँति वाणी प्रवाहित हो रही है.

याको नेक विचारे जो एक बचन, ताए घर पेहेचान होवे मिने खिन ।
जो बासना होसी इन घर, सो एह बचन छोडे क्यों कर ॥ २३

जो इनमेंसे एक वचनका भी थोड़ा-सा विचार कर ले तो उसे क्षण भरमें ही अपने मूलघर (परमधाम)की पहचान हो जाती है. जो परमधामकी आत्माएँ होंगीं वे इन वचनोंको कैसे छोड़ सकेंगी ?

ए बचन सुनते बाढे बल, सोई लेसी तारतम को फल ।
तारतम फल जागिए इन घर, कहे महामति ए हिरदें धर ॥ २४

इन वचनोंको सुनने मात्रसे जिनका बल बढ़ जाता है, ऐसी आत्माएँ ही तारतमका फल प्राप्त करती हैं. परमधाममें जागृत हो जाना ही तारतमका फल है. महामति इन वचनोंको हृदयमें धारण कर विश्वासपूर्वक कहते हैं.

प्रकरण ३४ चौपाई १०४२

अब कछुक मैं अपनी करूं, ना तो तुमें बोहोतक ओचरूं ।
भी एक कहूं बचन, तुमको संसे रेहेवे जिन ॥ १

अब मैं कुछ अपनी ओरसे स्पष्ट कर रही हूँ, अन्यथा तुम पूछते तो अधिक कहती. फिर भी ये वचन इसलिए कह रही हूँ कि तुम्हारे मनमें कोई संशय शेष न रह जाए.

मैं धाम धनी गुन लिखे सही, एक आसंका मेरे मनमें रही ।
मैं गेहेरे सबद कहे निरधार, सो साथ क्यों करसी बिचार ॥ २

मैंने धामधनी (सद्गुरु) के गुण गिनकर लिख दिए किन्तु मेरे मनमें एक शंका रह गई. निश्चय ही मैंने इस प्रसङ्गमें (गुण गिनते हुए) गहन शब्द कहे हैं, उन पर सुन्दरसाथ कैसे विचार करेंगे ?

जोलों आतम ना देवे साख, तोलों परमोध भले दीजे दस लाख ।
पर सो क्योंए ना लगे एक बचन, जोलों ना समझे आतम बुध मन ॥ ३

जब तक आत्मा साक्षी न दे तब तक बोधके लिए भले दस लाख उपदेश ही क्यों न दिए जाएँ (उनसे कुछ लाभ नहीं होगा). जब तक आत्मा, बुद्धि और मनसे किसी बातको समझ नहीं लेती, तब तक एक वचनका भी प्रभाव नहीं पड़ता.

ताथें यों दिल आई हमको, जिन कोई संसे रहे तुमको ।
एक प्रवाही बचन यों कहे, मुखथें कहे पर अरथ ना लहे ॥ ४

इसलिए मेरे मनमें ऐसा विचार आया कि तुम्हारे मनमें कोई सन्देह न रह जाए. प्रवाह (आवेश) में बोलने वाले कभी-कभी वैसे ही बहुत महत्त्वपूर्ण वचन तो कह देते हैं, किन्तु उनका अर्थ नहीं समझते.

सूईके नाके मंझार, कुंजर कै निकसे हजार ।
ए अरथ भी होसी इतहीं, तारतम आसंका राखे नहीं ॥ ५

दूसरी एक महत्त्वपूर्ण उक्ति है कि सुईकी छेदमें-से हजारों हाथी निकल जाते

हैं. इन वचनोंकी स्पष्टता भी मैं यहीं पर कर रही हूँ, क्योंकि तारतम ज्ञान किसीकी भी कोई शंका रहने नहीं देता है.

मैं गुन लिखते कही लेखन अनी, ए आसंका जिन होसी घनी ।
कथुए के पाउं परवान, कलमे गढिया हाथ सुजान ॥ ६

मैंने सद्गुरु धनीके गुण लिखते समय लेखनी (कलम) की नोंककी बात कही थी, इसकी भी किसीको आशङ्का न हो. (इसलिए यहाँ इसका स्पष्टीकरण करना है) मैंने कहा कि कथुएके पाँवके नापसे मैंने बड़ी सावधानीसे कलम गढ़ा है.

तिनकी भी मैं करी चीर, गुन जेती उतारी लीर ।
अब जिन किनको संसे रहे, तारतम संसे कछू ना सहे ॥ ७

कलमकी उस नोंकको भी चीरकर मैंने उसके उतने ही भाग किए, जितने मैंने धनीके गुण कहे थे. अब किसीके भी मनमें कोई संशय न रह जाए, क्योंकि तारतमके वचन कोई सन्देह शेष नहीं रखेंगे.

या पर एक कहूं बिचार, सुनियो ब्रह्मसृष्टि सिरदार ।
ए चौदे भवन देखो आकार, याके मूलको करो बिचार ॥ ८

इस पर भी एक और विचार कहती हूँ उसे शिरोमणि ब्रह्मात्माएँ सुनें. इन चौदह लोकोंका आकार (विस्तार) देखकर इनके मूलका विचार कर लो.

याको सास्त्र सुपनातर कहे, कोई याको जीव याको ना लहे ।
ए सुपन मूल तो है समरथ, याके मूल को देखो अरथ ॥ ९

शास्त्रोंने इसे स्वप्नके समान कहा है. इस संसारके कोई भी जीव इस तथ्यका यथार्थ समझ नहीं पाते. इस स्वप्नका मूल तो अवश्य ही सामर्थ्यवान् नींद (माया) है. उसके मूलका रहस्य भी समझ लो.

सुपन मूल तो नींद जो भई, जब जाग उठे तब कछुए नहीं ।
याको पेड कछू ना रह्यो लगार, कथुए के पाउं का तो मैं कह्या आकार ॥ १०

स्वप्नका मूल तो नींद ही होती है, जब जागृत हो गए तो नींद कुछ भी नहीं

रहती. वस्तुतः इस स्वप्नके ब्रह्माण्डका मूल तो कुछ है ही नहीं किन्तु मैंने फिर भी कथुएके पाँवका तो आकार बता दिया.

बिना पेड देखो विस्तार, ए ता बडा किया आकार ।
एतो पेड कह्या आकार, ताको क्यों न होए विस्तार ॥ ११

बिना मूल (पेड़) के ही इस ब्रह्माण्डका विस्तार तो देखो, इसका आकार कितना विस्तृत हो गया है. फिर कथुएके पाँवका तो मैंने आकार कहा है, उसका विस्तार क्यों नहीं हो सकता ?

यों सूई के नाके मांहे, कै लाखों ब्रह्मांड निकसे जांए ।
अब ए नीके लीजो अरथ, गुन लिखने वालो समरथ ॥ १२

इस प्रकार अक्षरब्रह्मकी पलकरूपी सुईके छिद्रमेंसे लाखों हाथीरूपी ब्रह्माण्ड निकल जाएँगे (बनेंगे और मिटेंगे भी). अब इस अर्थको भली भाँति समझ लो कि जिनके गुण लिखे जा रहे हैं, वे तो समर्थ सद्गुरुके हैं.

अब केता कहूं तुमको विस्तार, एक एह सबद लीजो निरधार ।
फेर फेर कहूं मेरे साथ, नीके पेहेचानो प्रान को नाथ ॥ १३

अब मैं इसका विस्तार कितना कहूँ ? इस एक शब्दको ही निश्चित रूपमें ग्रहण कर लो. हे मेरे सुन्दरसाथजी ! मैं तुम्हें वारंवार कह रही हूँ कि अपने प्राणनाथ सद्गुरुको भली प्रकारसे पहचान लो.

गुन लिखने वालो सो एह, आपन मांहें बैठा जेह ।
इन्द्रावती कहे दिल दे रे दे, जिन गुन किए सो ए रे ए ॥ १४

गुण लिखने वालेके साथ भी वे ही हैं जो हमारी आत्मामें विराजमान हैं. इन्द्रावती कहती है कि अपना दिल उन्हें समर्पित करो जिन्होंने हम पर इतने अनुग्रह किए हैं.

तेरे केहेना होए सो केहे रे केहे, लाभ लेना होए सो ले रे ले ।
तारतम केहेत है आ रे आ, हजार बार कहूं हां रे हां ॥ १५

तुम्हें उनसे जो कहना हो वह कह दो और मायामें जीवन धारण करनेका

लाभ लेना हो तो ले लो. तारतमके वचन उनके चरणोंमें आनेके लिए आह्वान करते हैं. इसलिए मैं भी हजार बार यह बात स्वीकारती हूँ.

मायासों कीजो ना रे ना, नाबूद फेरा जिन खा रे खा ।
धनी के चरने जा रे जा, ऐसा ना पावे दा रे दा ॥ १६

इसलिए मायाके आग्रहोंको टाल दो और जन्म-मरणके चक्करोंमें व्यर्थ ही मत पड़ो. सद्गुरु धनीके चरणोंमें चले आओ. पुनः ऐसा अवसर हाथमें नहीं आएगा.

जो चूक्या अब को ता रे ता, तो सिर में लगसी घा रे घा ।
संसार में नहीं कछू सा रे सा, श्री धामधनी गुन गा रे गा ॥ १७

जो ऐसे अमूल्य अवसरको खो देंगे तो निश्चित ही उनके सिर पर चोट लगेगी. इस संसारमें कुछ भी सार नहीं है. इस लिए धामधनी (परब्रह्म परमात्मा) के गुण गाते रहो.

लीजो मूल को भाओ रे भाओ, जिन छोडे अपनो चाहो रे चाहो ।
प्रेमें पकड पीउके पाए रे पाए, ज्यों सब कोई कहे तोको वाहे रे वाहे ॥ १८

मूल परमधामके भावको ग्रहण करो और अपनी चाह (स्नेह) भी मत छोड़ो. प्रेम पूर्वक धनीके चरणोंको ग्रहण कर लो, जिससे सब कोई तुम्हें वाह वाह कहेंगे.

प्रकरण ३५ चौपाई १०६०

गुन केते कहूं मेरे पीउजी, जो हमसों किए अनेक जी ।
ए बुध इन आकार की, क्यों कर कहे जुबां बिवेक जी ॥ १

हे सद्गुरुधनी ! आपके गुणोंका वर्णन कितना करूँ ? आपने हमसे अनेक बार गुण किए हैं. यह बुद्धि तो नश्वर देहकी है, फिर यह सीमित जिह्वा उनका विवेकपूर्ण वर्णन कैसे कर सकती है ?

माया मांगी सो देखाए के, भानी मन की भ्रांत जी ।
सब सुख दिए जगाए के, कै विध के द्रष्टांत जी ॥ २

हमारी माँगके अनुसार मायाके खेल दिखाकर धनीने हमारे मनकी भ्रान्तियाँ

मिटा दीं. भ्रम (निद्रा) से हमें जगाकर सब प्रकारके सुख दिए. हमें जागृत करनेके लिए उन्होंने अनेक प्रकारके दृष्टान्त भी दिए.

ब्रज के सुख इत आएके, हमको अलेखे दिए जी ।
रासके सुख इत देएके, आप सरीखे किए जी ॥ ३

इस नश्वर संसारमें पुनः आकर उन्होंने हमें व्रजलीलाके असंख्य सुख दिए और अखण्ड रासलीलाका अनुभव करवाकर हमें अपने जैसा बना लिया है.

कै विध विध के सुख धाम के, जो हमको दिए इत जी ।
तारतम करके रोसनी, कई विध करी प्रापत जी ॥ ४

इस मायावी जगतमें भी सद्गुरुने हमें परमधामके कई सुख प्रदान किए. तारतमका प्रकाश फैलाकर हमें अनेक सुखोंका अनुभव करवाया.

सेहेजल सुखमें झीलते, काहूं दुख न सुनिया नाम जी ।
सो मायामें इत आए के, सुख अखंड देखाया धाम जी ॥ ५

परमधामके सहज और अखण्ड सुखोंमें लीला विहार करते हुए हमने दुःखका नाम भी नहीं सुना था. इस दुःखरूपी मायामें आकर उन्होंने हमें परमधामके अखण्ड सुखोंका साक्षात्कार करा दिया.

कहे इन्द्रावती अति उछरंगे, हमको लाड लडाए जी ।
निरमल नेत्र किए जो आतम के, परदे दिए उडाए जी ॥ ६

इन्द्रावती अति उमङ्गमें आकर कहती है कि हमारे सद्गुरुने यहाँ आकर हमें अनेक प्रकारसे लाड़-प्यार दिया. हमारी आत्म-दृष्टिको निर्मल बनाकर उन्होंने मायाके परदे हटा दिए.

आप पेहेचान कराई अपनी, लई अपने पास जगाए जी ।
बडी बडाई दई आपथें, लई इन्द्रावती कंठ लगाए जी ॥ ७

धामधनीने स्वयं ही अपनी पहचान करवाई और हमें जागृत कर अपने पास बुला लिया. अपने जैसा ही बड़प्पन देते हुए उन्होंने इन्द्रावतीको गलेसे लगा लिया.

निजनाम श्रीकृस्नजी, अनादि अक्षरातीत ।
सो तो अब जाहेर भए, सब विध वतन सहीत ॥ १

श्री स्यामाजी वर सत्य हैं, सदा सत सुखके दातार ।
बिनती एक जो वल्लभा, मो अंगनाकी अविधार ॥ २

बानी मेरे पीउकी, न्यारी जो संसार ।
निराकार के पारथें, तिन पार के भी पार ॥ ३

अंग उत्कंठा उपजी, मेरे करना एह विचार ।
ए सत बानी मथके, लेऊं जो इनको सार ॥ ४

इन सार में कै सतसुख, सो मैं निरने करूं निरधार ।
ए सुख देऊं ब्रह्मसृष्टिको, तो मैं अंगना नार ॥ ५

जब ए सुख अंग में आवहीं, तब छूट जाए विकार ।
आयो आनंद अखंड घर को, श्री अक्षरातीत भरतार ॥ ६

निजनाम (तारतम) महामन्त्र असीम होनेसे यहाँ पर इन शब्दोंके द्वारा उसका भावमात्र व्यक्त करनेका प्रयत्न किया है:-पूर्णब्रह्म परमात्मा अनादि अक्षरातीत श्रीकृष्ण अपने नाम, स्वरूप, लीला और धामके साथ प्रकट हुए हैं. उन्होंने अपनी अर्धांगिनी-श्यामाजीको सद्गुरुके रूपमें प्रकट कर शून्यनिराकारसे परे अक्षर और अक्षरातीतकी बात प्रकाशित की है, उसे तारतम ज्ञान-तारतम वाणी कहा गया है. इसका मन्थन कर सार तत्त्व ग्रहण करने पर अखण्ड सुखका अनुभव होता है. जब यह अखण्ड सुख ब्रह्मात्माओंके अङ्ग प्रत्यङ्गोमें सञ्चरित होगा तब मायाके सम्पूर्ण विकार छूट जाएँगे और उन्हें मायाका आभास होने पर भी अपने अक्षरातीत धामधनीके अखण्ड आनन्दका अनुभव होगा.

श्री प्रगटबानी

अब लीला हम जाहेर करें, ज्यों सुख सैयां हिरदे धरें ।
पीछे सुख होसी सबन, पसरसी चौदे भवन ॥ १

अब हम परमधामकी आनन्दमयी लीलाएँ प्रकट कर रहे हैं, जिनको हृदयमें

धारण करने पर ब्रह्मात्माओंको अखण्ड सुखका अनुभव होगा. इसके पश्चात् संसारके सभी लोगोंको भी आनन्द प्राप्त होगा. इस प्रकार इन लीलाओंका प्रकाश चौदह लोकोंमें फैल जाएगा.

अब सुनियो ब्रह्मसृष्ट बिचार, जो कोई निज वतनी सिरदार ।
अपने धनी श्री स्यामा स्याम, अपना बासा है निजधाम ॥ २

हे परमधामकी शिरोमणि आत्माओ ! विचार पूर्वक सुनो. अपने धनी (आत्माके स्वामी) श्यामा-श्याम (श्यामावर श्याम) अक्षरातीत श्रीकृष्ण हैं और अपना मूल घर निजधाम - (परमधाम) है.

सोई अखंड अक्षरातीत घर, नित बैकुंठ मिने अक्षर ।
अब ए गुझ करूं प्रकास, ब्रह्मानंद ब्रह्मसृष्टि विलास ॥ ३

वही घर अखण्ड और अक्षरातीत कहलाता है और अक्षरब्रह्मके अन्तर्गत नित्य वैकुण्ठ माना गया है. अब मैं ब्रह्मसृष्टियोंके ब्रह्मानन्दमय नित्य विलासके गुह्य रहस्यको प्रकाशित करता हूँ.

ए बानी चित दे सुनियो साथ, कृपा कर कहें प्राणनाथ ।
ए किव कर जिन जानो मन, श्रीधनीजी ल्याए धामथें बचन ॥ ४

हे सुन्दरसाथजी ! इन वचनोंको ध्यान देकर सुनिए, क्योंकि हमारे प्राणोंके नाथ सद्गुरु कृपा पूर्वक ये वचन कह रहे हैं. इनको कविताएँ मत समझना. साक्षात् धामधनी परमधामसे इन वचनोंको लेकर सद्गुरुके रूपमें पधारे हैं.

सो केहेती हूं प्रगट कर, पट टालूं आडा अंतर ।
तेज तारतम जोत प्रकास, करूं अंधेरी सबको नास ॥ ५

उन्हीं बातोंको प्रकट कर मैं यहाँ कह रहा हूँ. तुम्हारे हृदयके अज्ञानरूपी आवरणको दूर करता हूँ. तारतम ज्ञानकी ज्योति जलाकर उसके प्रकाशसे सबके हृदयमें व्याप्त अज्ञानरूपी अन्धकारको नष्ट करता हूँ.

अब खेल उपजे के कहूं कारन, ए दोऊ इछा भई उतपन ।
बिना कारन कारज नहीं होए, सो कहूं याके कारन दोए ॥ ६

अब सृष्टि रचनाके कारण कह रहा हूँ. यह सृष्टि दो प्रकारकी इच्छाओंके

कारण उत्पन्न हुई है. क्योंकि कारणके बिना कार्य नहीं होता है. इसलिए इस रचनाके भी दो कारण बताए गए हैं.

ए उपजाई हमारे धनी, सो तो बातें हैं अति घनी ।
नेक तामें करूं रोसन, संसे भान देऊं सबन ॥ ७

उपरोक्त दोनों इच्छाएँ हमारे धामधनीने ही उत्पन्न करवाई हैं. यह रहस्यपूर्ण प्रसंग है. उसको थोड़ा-सा प्रकाशित (स्पष्ट) कर सबके हृदयके संशयका निवारण कर देता हूँ.

अब सुनियो मूल बचन प्रकार, जब नहीं उपज्यो मोह अहंकार ।
नाहीं निराकार नाहीं सुन, ना निरगुन ना निरंजन ॥ ८

ना ईस्वर ना मूल प्रकृति, ता दिनकी कहूं आपाबीती ।
निज लीला ब्रह्म बाल चरित, जाकी इछा मूल प्रकृत ॥ ९

अब सृष्टि रचनासे पूर्वकी मुख्य लीलाको ध्यान पूर्वक सुनो. जब मोह और अहंकारकी उत्पत्ति नहीं हुई थी और शून्य, निराकार, निर्गुण तथा निरंजनकी भी उत्पत्ति नहीं हुई थी, न ईश्वर ही थे और न ही मूल प्रकृति उत्पन्न हुई थी, उस समय हम ब्रह्मात्माओंके साथ क्या घटना घटी (हुई) उसकी आपबीती कहता हूँ. सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म परमात्माके सत्य अंग स्वरूप अक्षरब्रह्म बाल स्वभाव प्रेरित लीलाएँ करते हैं. संसार रचनाकी उनकी इच्छा मूल प्रकृति कहलाती है.

नैन की पाओ पलमें इसारत, कै कोट ब्रह्मांड उपजत खपत ।
इत खेल पैदा इन रवेस, त्रैलोकी ब्रह्मा विस्नु महेस ॥ १०

(इसी मूल प्रकृतिके द्वारा) अक्षर ब्रह्म पाव पलक (एक पलके चतुर्थ अंश मात्र समय) में संकेत मात्रसे करोड़ों ब्रह्माण्डोंको बनाकर मिटा देते हैं. वे इस प्रकारके खेल बनाते रहते हैं जिसमें त्रिलोकाधिपति ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देव होते हैं.

कै विध खेले यों प्रकृत, आप अपनी इछासों खेलत ।
या समे श्री बैकुंठनाथ, इछा दरसन करने साथ ॥ ११

अक्षरब्रह्म स्वेच्छासे ही इस प्रकारकी प्राकृत लीलाएँ करते रहते हैं. नित्य

वैकुण्ठके स्वामी अक्षरब्रह्म नित्य प्रति अक्षरातीतके दर्शन करते हैं. इसबार उन्हें ब्रह्मात्माओंके भी दर्शन करनेकी अभिलाषा हुई.

अक्षर मन उपजी ए आस, देखों धनीजी को प्रेम विलास ।
तब सखियों मन उपजी एह, खेल देखें अक्षर का जेह ॥ १२

अक्षरब्रह्मको यह अभिलाषा हुई कि अक्षरातीत धामधनीके प्रेम विलासका दर्शन करूँ. उसी समय ब्रह्मात्माओंके मनमें भी इच्छा उत्पन्न हुई कि अक्षरब्रह्मका (मायावी) खेल देख लिया जाए.

तब हम जाए पियासों कही, खेल अक्षर का देखें सही ।
जब एह बात पियाने सुनी, तब बरजे हांसी करने घनी ॥ १३

तब हम सब ब्रह्मात्माओंने जाकर धामधनीसे कहा कि हम अक्षरब्रह्मका खेल देखना चाहतीं हैं. जब यह बात धनीने सुनी तो हमारी हँसी करनेके लिए वे हमें रोकने लगे.

मने किए हमको तीन बेर, तब हम मांग्या फेर फेर फेर ।
धनी कहे घरकी ना रेहेसी सुध, भूलसी आप ना रेहेसी ए बुध ॥ १४

उन्होंने हमें तीन-तीन बार इसके लिए रोका. तब उत्सुकतावश हमने भी बार-बार खेल देखनेकी माँग की. तब धनीजीने कहा, तुम्हें अपने घरकी भी सुधि नहीं रहेगी. तुम स्वयंको भी भूल जाओगी और यहाँ जैसी बुद्धि भी तुम्हारे पास नहीं रहेगी.

तो मने करत हैं हम, हमको भी भूलोगे तुम ।
तब हम फेर धनीसों कह्या, कहा करसी हमको माया ॥ १५

मैं इसलिए मना कर रहा हूँ कि तुम मुझे भी भूल जाओगी. तब हम लोगोंने धामधनीसे पुनः कहा कि यह माया हमारा क्या बिगाड़ सकेगी ?

तब हम मिलके कियो बिचार, कह्या एक दूजीको हूजो हुसियार ।
खेल देखनकी हम पियासों कही, तब हम दोऊ पर आग्या भई ॥ १६

पुनः हम सभीने मिलकर विचार किया और एक दूसरेको सचेत रहनेके लिए कहा. जैसे ही हमने धामधनीसे खेल देखनेकी अपनी तैयारी बताई तब हम

दोनोंको (अक्षरब्रह्मको सृष्टि रचनाके लिए और हमें उसे देखनेके लिए) आज्ञा हुई.

ए कहे दोऊ भिंन भिंन, खेल देखन के दोऊ कारन ।
उपज्यो मोह सुरत संचरी, खेल हुआ माया विस्तरी ॥ १७

इस प्रकार सृष्टि रचनाके दोनों अलग-अलग कारण कहे गए हैं. (धनीजीकी आज्ञा होते ही) सर्वप्रथम मोहतत्त्व उत्पन्न हुआ और उसमें अक्षर ब्रह्मकी सुरताका संचार हुआ, फिर मायाका विस्तार होते ही सृष्टिकी रचना हुई.

इत अक्षर को विलस्यो मन, पांच तत्त्व चौदे भवन ।
यामें महाविस्नु मन मनथें त्रैगुन, ताथें थिर चर सब उतपन ॥ १८

इधर अक्षरब्रह्मका मन विलसित हुआ कि मायासे पाँच तत्त्व और उनसे चौदह लोकोंकी रचना हुई. इस खेलमें अक्षर ब्रह्मका मन महाविष्णुके रूपमें प्रकट हुआ और उससे तीन गुण (सत, रज, तम और उनके देवता-ब्रह्मा, विष्णु महेश) उत्पन्न हुए एवं उनसे स्थावर एवं जंगम सृष्टिकी उत्पत्ति हुई.

या विध उपज्यो सब संसार, देखलावने हमको विस्तार ।
जो आग्या भई हम पर, तब हम जान्या गोकल घर ॥ १९

हमें अक्षरब्रह्मकी लीलाका विस्तार दिखानेके लिए इस प्रकार सृष्टिकी रचना हुई. जैसे ही हमें खेल देखनेकी आज्ञा हुई (तो हमारी सुरता जगतके उत्तम जीवों पर उतर आई) तब हमें ज्ञात हुआ कि हमारा घर गोकुल है.

ज्यों नींदेमें देखिए सुपन, यों उपजे हम ब्रजबधू जन ।
उपजत हीं मन आसा घनी, हम कब मिलसी अपने धनी ॥ २०

जैसे नींदमें स्वप्न देखा जाता है उसी प्रकार हम सभी आत्माएँ व्रज वनिताओंके रूपमें व्रजमें उत्पन्न हुई. व्रजमें आते ही मनमें बड़ी अभिलाषा हुई कि हम सब अपने धामधनीसे कब मिलेंगी.

जेती कोई हैं ब्रह्मसृष्ट, प्रेम पूरन धनी पर द्रष्ट ।
कंसके बंध वसुदेव देवकी, इत आई सुरत चत्रभुज की ॥ २१

जितनी भी ब्रह्मात्माएँ हैं उन सबकी प्रेमपूर्ण दृष्टि अपने प्रियतम धनी पर

टिकी रहती है. (उधर) कंसके कारागृहमें वसुदेव देवकीके सामने चतुर्भुज स्वरूप भगवान विष्णुकी सुरत प्रकट हुई.

सुरत विस्नुकी चत्रभुज जोए, दियो दरसन वसुदेव को सोए ।
पीछे फिरे केहेके हकीकत, अब दोए भुजा की कहूं विगत ॥ २२

भगवान विष्णुके इस चतुर्भुज स्वरूपने वसुदेव देवकीको दर्शन दिया एवं आने वाले दिव्य बाल स्वरूपका बोध करवाया और उन्हें गोकुल पहुँचानेकी बात कहकर वे अन्तर्धान हो गए. अब द्विभुज स्वरूपका विवरण कहते हैं.

मूल सुरत अक्षर की जेह, जिन चाह्या देखों प्रेम सनेह ।
सो सुरत धनीको ले आवेस, नंद घर कियो प्रवेस ॥ २३

जिन अक्षरब्रह्मकी मूल सुरता (चित्तवृत्ति) ने पूर्णब्रह्म परमात्मा एवं ब्रह्मात्माओंकी विलास लीला देखनेकी इच्छा की थी, उसी (सुरता) ने परब्रह्म परमात्माकी आवेश शक्ति लेकर नन्दजीके घरमें प्रवेश किया.

दो भुजा सरूप जो स्याम, आतम अक्षर जोस धनी धाम ।
ए खेल देख्या सैयां सबन, हम खेले धनी भेले आनंद घन ॥ २४

दो भुजा स्वरूप श्याम (श्रीकृष्णजी) के अन्दर अक्षरब्रह्मकी आत्मा और धामधनीका जोश विद्यमान था. इन धामधनीके साथ हम सब ब्रह्मात्माओंने आनन्दमयी लीला की और संसारका खेल भी देखा.

बाल चरित्र लीला जोवन, कै विध सनेह किए सैयन ।
कै लिए प्रेम विलास जो सुख, सो केते कहूं या मुख ॥ २५

बाल चरित्र एवं यौवन लीलाओंके द्वारा उन्होंने (श्रीकृष्णजीने) ब्रह्मात्माओंको विभिन्न प्रकारसे स्नेह प्रदान किया. इस प्रेम विलासमें इतना सुख प्राप्त हुआ कि इस जिह्वासे उसका वर्णन नहीं हो सकता.

ए कालमायामें विलास जो करे, सो पूरी नींदमें सब विसरे ।
पूरी नींद को जो सुपन, कालमाया नाम धराया तिन ॥ २६

कालमायासे प्रभावित इस व्रज मंडलमें जितनी विलास पूर्ण लीलाएँ हुईं, उसमें पूरी नींद (अज्ञान) के कारण हमें अपने सम्बन्धोंका कुछ भी भान

नहीं रहा. गहरी नींदमें स्वप्नके समान की गई इस लीलाको कालमाया कहा गया है.

तब धाम धनिएं कियो बिचार, ए दोऊ मगन हुए खेले नर नार ।
मूल बचन की नाहीं सुध, ए दोऊ खेले सुपने की बुध ॥ २७

ऐसी स्थितिमें धामधनीने विचार किया कि ये दोनों (अक्षरब्रह्म एवं ब्रह्मात्माएँ) मग्न होकर खेल रहे हैं. ये दोनों स्वप्नकी बुद्धिसे खेल रहे हैं, इसलिए इन्हें मूल वचन (सृष्टिपूर्वके वार्तालाप) की सुधी नहीं है.

एह बात धनी चितसों ल्याए, आधी नींद तब दई उडाए ।
अग्यारे बरस और बावन दिन, ता पीछे पोहोंचे वृन्दावन ॥ २८

ऐसा मनमें सोचकर धामधनीने नींदका आधा आवरण दूर कर (हटा) दिया. उस समय व्रज मण्डलमें ग्यारह वर्ष और बावन दिन बीत चुके थे. अब वे दोनों (रासलीलाके लिए) वृन्दावन चले गए.

तहां जाए के बेन बजाई, सखियां सबे लई बुलाई ।
तामसियां राजसियां चलीं, स्वांतसियां सरीर छोडके मिलीं ॥ २९

वृन्दावनमें जाकर श्रीकृष्णजीने वंशी बजाई और सभी ब्रह्मात्माओंको अपने पास बुला लिया. वंशीकी आवाज सुनते ही तामस स्वभाव एवं राजस स्वभावकी सखियाँ तत्काल चल पड़ीं, (विलम्ब होने पर) सात्विक (स्वातस) स्वभावकी सखियाँ अपना शरीर छोड़कर (सुरताके रूपमें) अपने प्रियतमसे जा मिलीं.

और कुमारका ब्रज बधू संग जेह, सुरत सबे अक्षर की एह ।
जो व्रत करके मिली संग स्याम, मूल अंग याके नाहीं धाम ॥ ३०

व्रजमण्डलमें गोपियोंके साथ जो कुमारिका सखियाँ थीं वे अक्षर ब्रह्मकी सुरतासे उत्पन्न हुई थीं. (उन्होंने कात्यायनीका व्रतकर श्रीकृष्णलीलामें सम्मिलित होनेका वार माँगा था) वे भी सुरताके रूपमें ब्रह्मात्माओंके साथ जाकर श्यामसुन्दरसे मिलीं. इनके मूल अंग (परात्म) परमधाममें नहीं हैं.

बेन सुनके चली कुमार, भवसागर यों उतरी पार ।
इनकी सुरत मिली सब सखियों मांहि, अंग याके रासमें नांहिं ॥ ३१

वंशीकी ध्वनि सुनते ही कुमारिकाएँ भी चल पड़ीं. उन्होंने इस प्रकार भवसागर पार किया. उनकी सुरताएँ ब्रह्मात्माओंके साथ सम्मिलित हुईं. रासलीलामें उन्हें दिव्य शरीर नहीं मिले.

या विध मुक्त इनों की भई, कुमारका सखियां जो कही ।
ए जो अग्यारे बरस लों लीला करी, कालमाया तितहीं परहरी ॥ ३२

इस प्रकार कुमारिका सखियोंकी मुक्ति हुई है. श्रीकृष्णने ग्यारह वर्ष तक व्रजमण्डलमें लीलाएँ की और तत्काल ही कालमायाका परित्याग किया (अर्थात् कालमाया जनित ब्रह्माण्डको अक्षर ब्रह्मने अपने हृदयमें अंकित किया).

कछू नींद कछू जाग्रत भए, जोगामाया के सिनगार जो कहे ।
जोगमाया में खेले जो रास, आनन्द मन आनी उलास ॥ ३३

ब्रह्मात्माओंने योगमाया द्वारा निर्मित ब्रह्माण्डमें योगमायाके ही शृङ्गार धारण कर कुछ नींद और कुछ जागृत अवस्थामें रासकी लीलाएँ की. इस प्रकार ब्रह्मात्माओंने योगमायामें आनन्द और उल्लासके साथ लीलाएँ कीं.

जोगमाया में खेल जो खेले, संग जोस धनी के भेले ।
जोगमाया में बाढ्यो आवेस, सुध नहीं दुख सुख लवलेस ॥ ३४

योगमायाके ब्रह्माण्डकी इस रास लीलामें ब्रह्मात्माओंने पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णके आवेश स्वरूप श्रीकृष्णके साथ विभिन्न प्रकारकी लीलाएँ की. योगमायामें प्रेमका आवेग इतना बढ़ गया कि उनको दुःख और सुखकी थोड़ी-सी भी अनुभूति नहीं हुई.

फेर मूल सरूपें देख्या तित, ए दोउ मगन हुए खेलत ।
जब जोस लियो खेंच कर, तब चित चौंक भई अक्षर ॥ ३५

मूल स्वरूप पूर्णब्रह्म परमात्माने पुनः देखा कि अक्षरब्रह्म एवं ब्रह्मात्माएँ दोनों ही आनन्दमें मग्न होकर लीला कर रहे हैं. उन्होंने अपना जोश खींच लिया, तब अक्षरब्रह्मका चित्त एकाएक चौंक गया.

कौन वन कौन सखियां कौन हम, यों चौंकके फिरी आतम ।
रास आया मिने जाग्रत बुध, चूभ रही हिरदे में सुध ॥ ३६

अरे ! यह कौन-सा वन है ? ये कौन-सी सखियाँ हैं ? इनके साथ खेलनेवाला मैं कौन हूँ ? इस प्रकार चौंक कर विचार करते ही अक्षरब्रह्मकी सुरता (आत्मा) स्वयंमें लौट आई. तब उनकी जागृत बुद्धिमें रासलीला अंकित हुई और उनके हृदयमें जाकर समाहित हो गई.

कै सुख रास में खेले रंग, सो हिरदे में भए अभंग ।
या विध रास भयो अखंड, थिर चर जोगमाया को ब्रह्मांड ॥ ३७

रास लीलामें आनन्द मग्न होकर खेले गए सभी खेल अक्षरब्रह्मके हृदय पट पर अमिट रूपसे अंकित हो गए. इस प्रकार रास लीला सहित सचराचर योगमायाका ब्रह्माण्ड अक्षर ब्रह्मके हृदयमें अंकित हुआ.

तब इत भए अंतरध्यान, सब सखियां भईं मृतक समान ।
जीव ना निकसे बांधी आस, करने धनीसों प्रेम विलास ॥ ३८

तब इधर वृन्दावनमें श्रीकृष्ण अन्तर्धान हुए और सभी सखियाँ उनके वियोगमें मृतप्रायः हो गईं. अपने धनीके साथ प्रेम विलासकी आशा बँधी हुई होनेके कारण (प्रिय मिलनकी आशामें) उनकी आत्माने देहका परित्याग नहीं किया.

बिरह सैयोंने कियो अत, धनी दियो आवेस फेर आई सुरत ।
तब सैयों को उपज्यो आनंद, सब बिरहा को कियो निकंद ॥ ३९

इस प्रकार सखियोंने अतिशय विरह विलाप किया. तब धामधनीने पुनः अपना आवेश दिया और अक्षरब्रह्मकी सुरता श्रीकृष्णके साथ पुनः प्रकट हुई. तब ब्रह्मात्माओंको अतिशय आनन्द प्राप्त हुआ. इस प्रकार श्रीकृष्णजीने सबके विरहको मिटा दिया.

आया सरूप कर नए सिनगार, भजनानंद सुख लिए अपार ।
दोऊ आतम खेले मिने खांत, सुख जोस दियो कै भांत ॥ ४०

श्रीकृष्णजीका यह नया स्वरूप नूतन शृङ्गारके साथ प्रकट हुआ है, जिनसे

ब्रह्मात्माओंने भजनानन्दके अपार सुख प्राप्त किए. दोनों आत्माएँ (अक्षरब्रह्म एवं ब्रह्मात्माएँ) अति चाहसे खेलते रहे. धामधनीने उन्हें अपना जोश प्रदान कर अनेक प्रकारके सुख दिए.

कै बिरह विलास लिए मिने रात, अंग आनंद भयो जोलों प्रात ।
रास खेल के फिरे सब एह, साथ सकल मन अधिक सनेह ॥ ४१

रास रात्रिमें संयोग और वियोग दोनों प्रकारकी लीलाओंका आनन्द प्राप्त किया. इस प्रकार प्रातः होने तक आनन्दलीलामें विहार करते रहे. रास खेलकर सभी ब्रह्मात्माओंकी सुरता परमधाम लौटी. उस समय सब ब्रह्मात्माओंके मनमें अत्यधिक स्नेह था.

पीछे जोगमाया को भयो पतन, तब नींद रही अक्षर सैयन ।
व्रज लीलासों बांधी सुरत, अखंड भई चढि आई चित ॥ ४२

उसके उपरान्त (उनके लौट जाने पर) योगमायाका संवरण हुआ. तब अक्षर ब्रह्म और ब्रह्मात्माओंकी नींद बनी रही अर्थात् इस लीलाके प्रति उनका लगाव अभी भी बना रहा. इसलिए व्रज लीलामें उनकी सुरता बँध गई और व्रजलीला उनके चित्तमें स्थिर होकर अखण्ड हुई.

अक्षर चितमें ऐसो भयो, ताको नाम सदासिव कह्यो ।
ब्रज रास दोऊं ब्रह्मांड, ए ब्रह्मलीला भई अखंड ॥ ४३

अक्षरब्रह्मकी ऐसी चित्तवृत्तिको सदाशिव कहा गया है. व्रज और रास इन दोनों ब्रह्माण्डोंमें सम्पन्न हुई ब्रह्मलीला इस प्रकार अखण्ड हो गई.

ब्रज रास लीला दोऊं मांहिं, दुख तामसियों देख्या नाहिं ।
प्रेम पियासों ना करे अंतर, तो ए दुख देखे क्यों कर ॥ ४४

व्रज और रास इन दोनों लीलाओंमें तामस स्वभाववाली ब्रह्मात्माओंने अधिक दुःख नहीं देखा था, क्योंकि अपने प्रियतमके प्रेममें उन्होंने कुछ भी अन्तर (कमी) होने नहीं दिया. इसलिए वे अधिक दुःख देखती ही कैसे ? (क्योंकि संयोग एवं वियोग दोनोंमें प्रेमी आनन्दका ही अनुभव करता है.)

कछुक हमको रह्यो अंदेस, सो राखे नहीं धनी लवलेस ।
ता कारन ए भयो सुपन, हुए हुकमें चौदे भवन ॥ ४५

दु:ख देखनेकी हमारी कुछ चाहना शेष रह गई थी किन्तु धामधनी हमारी इच्छाको लेशमात्र भी अधूरी रहने नहीं देते, इसलिए पुन: स्वप्नकी सृष्टि रची गई. धनीकी आज्ञाके कारण अक्षरब्रह्म द्वारा इस ब्रह्माण्डके चौदह लोक बन गए.

कालमाया को ए जो इंड, उपज्यो और जाने सोई ब्रह्मांड ।
ए तीसरा इंड नया भया जो अब, अक्षर की सुरत का सब ॥ ४६

इस ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति पुन: कालमाया द्वारा हुई, परन्तु सबको लगा कि यह वही (पहलेका ही) ब्रह्माण्ड है. यह तीसरा नया ब्रह्माण्ड अक्षरब्रह्मकी सुरता (इच्छाशक्ति) से ही बना हुआ है.

याही सुरत की सखियां भई, प्रतिबिम्ब वेदरूचा जो कही ।
जाको कह्यो ऊधो ग्यान जोगारंभ, सो क्यों माने प्रेमलीला प्रतिबिम्ब ॥ ४७

अक्षरब्रह्मकी इसी सुरतासे अनेक सखियाँ प्रकट हुईं. प्रतिबिम्बलीलाकी इन सखियोंको वेदऋचा कहा गया है. इन्हीं वेद ऋचाओंको उद्धवने ज्ञान और योगाभ्यासके द्वारा निराकार ब्रह्मकी उपासनाका उपदेश दिया था. ब्रह्मात्माओंकी प्रेमलीलाके प्रतिबिम्बरूप लीलाएँ करने वाली गोपियाँ उन उपदेशोंको कैसे स्वीकार करतीं ?

जो ऊधोने दई सिखापन, सो मुख पर मारे फेर बचन ।
याही बिरह में छोडी देह, सो पोहोंची जहां सरूप सनेह ॥ ४८

उद्धवजीने उन्हें जो भी उपदेश दिया, गोपियोंने उसे उनको ही लौटा दिया. श्रीकृष्णजीके वियोगमें उन्होंने देहको त्याग दिया. उनका स्नेह जिस स्वरूप (प्रतिबिम्ब लीलाके श्रीकृष्ण- अक्षरब्रह्म) के साथ था, वे उन्हींके पास पहुँचीं.

अक्षर हिरदे रास अखंड कह्यो, ए प्रतिबिम्ब साथ तहां पोहोंचयो ।
ए प्रतिबिम्ब लीला जो भई इत, सो कारन ब्रह्मसृष्ट के सत ॥ ४९

अक्षरब्रह्मके हृदयमें रासलीला अखण्ड हुई है. प्रतिबिम्ब लीलाकी ये

गोपिकाएँ भी वहीं जा पहुँचीं. ब्रह्मसृष्टिके साथ हुई अखण्ड लीला सत्य है, यह स्पष्ट करनेके लिए ही यह प्रतिबिम्ब लीला संसारमें प्रकट की गई है.

जो प्रगट लीला न होवे दोए, तो असल नकलकी सुध क्यों होए ।
ता कारन ए भई नकल, सुध करने संसार सकल ॥ ५०

यदि दोनों (अखण्ड और प्रतिबिम्ब) लीलाएँ न हुईं होतीं, तो सत्य और असत्यका अन्तर कैसे स्पष्ट होता ? समस्त संसारके जीवोंको वास्तविक लीलाके माध्यम से ब्रह्मात्माओंका परिचय दिलानेके लिए ही यह प्रतिबिम्ब लीला की गई है.

सारे अरथ तब होवें सत, जो प्रगट लीला दोऊ होवें इत ।
याही इंड में श्री कृस्नजी भए, सो अग्यारे दिन ब्रज मथुरा रहे ॥ ५१

सभी धर्मग्रन्थोंके सम्पूर्ण अर्थ (श्रीकृष्णजीके क्षर, अक्षर और अक्षरातीत स्वरूपोंका रहस्य तथा उनका तारतम्य) तभी सिद्ध होंगे, जब अखण्ड और प्रतिबिम्ब दोनों लीलाएँ इस संसारमें होंगी. कालमायाके इसी ब्रह्माण्डमें श्रीकृष्णजी (अक्षर ब्रह्मके सुरताके स्वरूप) आए, वे ग्यारह दिन तक ब्रज और मथुरामें रहे.

दिन अग्यारे ग्वाला भेस, तिन पर नहीं धनीको आवेस ।
सात दिन गोकल में रहे, चार दिन मथुरा के कहे ॥ ५२

ग्यारह दिनों तक श्रीकृष्णजीने गोकुलमें ग्वाल वेश धारण किया, उन पर अक्षरातीत ब्रह्मका आवेश नहीं था. सात दिन तक वे गोकुलमें रहे और चार दिन तक मथुराके कहलाए.

गज मल कंस को कारज कियो, उग्रसेन को टीका दियो ।
कालाग्रह में दरसन दिए जिन, आए छुडाए बंध थें तिन ॥ ५३

मथुरामें उन्होंने गज (कुबलयापीड हाथी), मल्ल (चाणूर एवं मुष्टिक) और कंसका उद्धार किया एवं उग्रसेनका राज तिलक किया. और कंसके कारागृहमें जिन वसुदेव और देवकीको दर्शन दिया था, उन्हें वहीं जाकर

बन्धन मुक्त किया.

वसुदेव देवकी के लोहे भांन, उतार्‌यो भेष किए अस्नान ।
जब राजबागे को कियो सिनगार, तब बल पराक्रम ना रह्यो लगार ॥ ५४

वसुदेव और देवकीकी हथकड़ी काटकर श्रीकृष्णजीने गोपाल वेष उतार दिया और स्नान करके राजसी वस्त्र धारण किए. अब उनमें अलौकिक बल (अक्षरब्रह्मका आवेश) और पराक्रम दोनों नहीं रहे. (अक्षरब्रह्मकी आवेश शक्ति लौट गई अब केवल योगीराज श्रीकृष्ण ही रह गए, अब उनमें पारकी शक्तिका समावेश नहीं रहा.)

आए जरासिंध मथुरा घेरी सही, तब श्रीकृस्नजीको अति चिंता भई ।
यों याद करते आया बिचार, तब कृस्न बिस्नुमय भए निरधार ॥ ५५

कंसके उद्धारके बाद जब जरासन्धकी सेनाने चारों ओरसे मथुराको घेर लिया, तब श्रीकृष्णजीके मनमें चिन्ता उत्पन्न हुई. चिन्तन करते हुए उन्हें जैसे ही अपने विष्णु स्वरूपका ध्यान आया तब (विष्णु भगवानकी शक्ति उनमें जागृत हुई और) वे विष्णुमय बन गए.

तब बैकुंठमें विस्नु ना कहे, इत सोले कला संपूरन भए ।
या दिन थें भयो अवतार, ए प्रगट बचन देखो बिचार ॥ ५६

तब वैकुण्ठ धाममें भगवान विष्णु नहीं रहे क्योंकि अपनी सोलहों कलाओंके साथ वे इस धरती पर आ गए. यहींसे भगवान विष्णुकी (श्रीकृष्ण) अवतार लीला आरम्भ हुई. इस रहस्यको स्पष्ट करनेवाले वचनों पर विचार करो.

सिसपाल की जोत बैकुंठे गई, समाई श्रीकृस्नमें तित ना रही ।
आउध अपने मगाए के लिए, कै विध जुध असुरोंसों किए ॥ ५७

शिशुपालका वध होने पर उसकी आत्मा (ज्योति) वैकुण्ठ धाम गई. (उस समय भगवान विष्णु तो सोलह कलाओं सहित संसारमें आ गए थे इसलिए) वहाँ विष्णु भगवानको न पाकर वह ज्योति जगतमें लौट आई और श्रीकृष्णमें समा गई. अब विष्णु भगवानके अवतार श्रीकृष्णने वैकुण्ठ धामसे अपने

अस्त्र शस्त्र एवं रथ आदि मँगवा लिए और आसुरी बुद्धि वाले राजाओंसे अनेक युद्ध किए.

मथुरा द्वारका लीला कर, जाए पोहोंचे विस्नु वैकुंठ घर ।
अब मूल सखियां धामकी जेह, तिन फेर आए धरी इत देह ॥ ५८

मथुरा और द्वारिकामें विभिन्न लीलाएँ पूर्ण कर विष्णु भगवान अपने वैकुण्ठ धाम लौट गए. अब परमधामकी आत्माओंने पुनः इस धरती पर आकर शरीर धारण किए. उनका वृत्तान्त इस प्रकार है.

उमेदां तामसियां रही तिन बेर, सो देखन को हम आइयां फेर ।
इन ब्रह्मांड को एह कारन, सुनियो आतम के श्रवन ॥ ५९

रासलीला पूर्ण कर परमधाममें जागृत होते समय तामस स्वभाववाली ब्रह्मात्माओंकी (मायाके सुख-दुःख पूर्ण खेल देखनेकी) इच्छा शेष रह गई थी. उन्हीं इच्छाओंको पूर्ण करने (और खेल देखने) के लिए हम सब ब्रह्मात्माएँ फिर इस मायावी संसारमें आ गईं. इस तृतीय ब्रह्माण्डकी रचनाका यही कारण है. अब आप आत्माके श्रवणोंसे इस वृत्तान्तको सुनिए.

रास खेलते उमेदां रहियां तित, सो ब्रह्मसृष्ट सब आइयां इत ।
यामें सुरत आई स्यामाजी की सार, मतू मेहेता घर अवतार ॥ ६०

रासलीलाके समय (सुख-दुःखको और अधिक अनुभव करनेकी) चाहना शेष रहनेके कारण ब्रह्मात्माएँ पुनः इस संसारमें आईं. इन ब्रह्मात्माओंमें-से सुन्दरबाई सखीकी सुरतामें प्रवेशकर श्रीश्यामाजीने मतुमेहताजीके घरमें (श्रीदेवचन्द्रजीके रूपमें) अवतार लिया.

कुंवरबाई माता को नाम, उतम कायथ उमरकोट गाम ।
आए श्री देवचन्दजी नौतन पुरी, सुख सबों को देने देह धरी ॥ ६१

उनकी माताका नाम कुँवरबाई था. उमरकोट नगरके उत्तम कायस्थ परिवारमें उनका जन्म हुआ था. वहाँसे श्रीदेवचन्द्रजी नवतनपुरी (जामनागर) आए. समस्त संसारको अखण्ड सुख देनेके लिए ही उन्होंने मानव देह धारण किया है.

इन इत आए करी बडी खोज, चाहे धनी को मूल संजोग ।
अंग मूल उपजी ए द्रष्ट, सास्त्र सबद खोजे कै कष्ट ॥ ६२

उन्होंने इस संसारमें आकर परमात्म-तत्त्वकी बड़ी खोज की. वे धामधनीके साथके सम्बन्धकी पहचान करना चाहते थे.उन्होंने शास्त्रों एवं मत-मतान्तरोंमें खोज करते हुए अनेक साधनाएँ की, जिससे उनकी अन्तर्दृष्टि खुल गई.

चौदे बरसलों नेष्ठा बंध, बचन ग्रहे सारी सनंध ।
कै जप तप किए व्रत नेम, सेवा सरूप सनेह अति प्रेम ॥ ६३

नवतनपुरी (जामनगर) में उन्होंने चौदह वर्ष पर्यन्त निष्ठापूर्वक श्रीमद्भागवतका श्रवण किया और उसके सार तत्त्वको आत्मसात् किया. उन्होंने चालीस वर्ष पर्यन्त जप, तप, व्रत एवं नियमोंका पालन किया. मूलस्वरूप परमात्माके प्रति स्नेह रखते हुए प्रेमपूर्वक सेवा की.

कै कसनी कसी अति अंग, प्रेम सेवामें ना कियो भंग ।
कै कसौटी करी दुलहिन, सो कारन हम सब सैयन ॥ ६४

उन्होंने अनेक साधनाओंसे अपनी देहको तपाया किन्तु परमात्माकी प्रेमसेवामें कमी आने नहीं दी. इस प्रकार पूर्णब्रह्म परमात्माकी अर्धाङ्गिनी श्रीश्यामाजीने इस संसारमें आकर कई कसौटियाँ कीं. उन्होंने यह हम ब्रह्मात्माओंके लिए किया है.

पियाजी किए अति प्रसंन, तीन बेर दिए दरसन ।
तारतम बात वतन की कही, आप धाम धनी सब सुध दई ॥ ६५

अपने प्रेम और सेवासे उन्होंने धामधनीको प्रसन्न किया. परब्रह्म परमात्माने उन्हें तीन बार दर्शन दिए और पातालसे लेकर परमधामतकका तारतम्य समझाते हुए तारतम ज्ञान देकर परमधामका रहस्य खोल दिया. उनकी आत्माका स्वरूप बताते हुए 'निजनाम श्रीकृष्णजी' कहकर अपना परिचय दिया और सब प्रकारकी सुधि दी.

धरयो नाम बाई सुन्दर, निज वतन देखाया घर ।
इत दया करी अति घनी, अंदर आए के बैठे धनी ॥ ६६

अक्षरातीत श्रीकृष्णजीने श्रीदेवचन्द्रजीकी परात्मका नाम सुन्दरबाई बताकर उनको मूलघर परमधामका दर्शन करवाया. धामधनीने उन पर बहुत बड़ी दया की और स्वयं उनकी अन्तरात्मामें विराजमान हुए.

दियो जोस खोले दरबार, देखाया सुंन के पार के पार ।
ब्रह्मसृष्टि मिने सुन्दरबाई, ताको धनीजीएं दई बडाई ॥ ६७
सब सैयों मिने सिरदार, अंग याही के हम सब नार ।
श्री धामधनीजी की अरधंग, सब मिल एक सरूप एक अंग ॥ ६८

श्रीकृष्णजीने अपना जोश देकर परमधामके द्वार खोल दिए और शून्य निराकारसे परे अक्षर और उससे भी परे परमधामको अपना घर बताया. इस प्रकार ब्रह्मसृष्टियोंमें सुन्दरबाईको धामधनीने बहुत बड़ा महत्त्व दिया. श्रीश्यामाजीके अवतार स्वरूप होनेसे वे सब ब्रह्मात्माओंकी शिरोमणि (सिरदार) हैं. हम सभी आत्माएँ उनकी ही अङ्गस्वरूपा हैं. श्रीश्यामाजी धामधनीजीकी अर्धांगिनी हैं. पूर्णब्रह्म परमात्मा, श्यामाजी एवं समस्त ब्रह्मात्माएँ सब मिलकर एक ही स्वरूप और एक ही अङ्ग हैं.

श्री धाम लीला बैकुंठ अखंड, ब्रज रास लीला दोऊ ब्रह्मांड ।
ए सब हिरदेमें चढ आए, ज्यों आतम अनभव होत सदाए ॥ ६९

इस प्रकार (श्रीकृष्णजीके हृदयमें बैठने पर) अखण्ड परमधामकी दिव्य लीलाएँ, नित्य वैकुण्ठ, कालमाया तथा योगमाया दोनों ब्रह्माण्डके व्रज तथा रासकी दिव्य लीलाएँ श्रीदेवचन्द्रजीके हृदय पटल पर अङ्कित हो गईं. उनको ऐसा लगा कि मेरी आत्मा इन सबका नित्य अनुभव करती है.

अब ए केते कहूं प्रकार, निजधाम लीला नित बडो विहार ।
अक्षरातीत लीला किसोर, इत सैयां सुख लेवें अति जोर ॥ ७०

परमधामकी लीला एवं वहाँके नित्य विहारका महत्त्व बहुत बड़ा है. उसका वर्णन कहाँ तक करूँ ? वहाँ पर अक्षरातीतकी किशोर लीलाएँ होतीं हैं.

उन लीलाओंमें ब्रह्मात्माएँ अपार आनन्दका अनुभव करतीं हैं.

मोहोल मंदिर को नाहीं पार, धाम लीला अति बडो विस्तार ।
इन लीला की काहूं ना खबर, आज लगे बिना इन घर ॥ ७१

परमधामकी अखण्ड लीलाका विस्तार बहुत बड़ा है. वहाँके भवन एवं मन्दिरोंका पारावार नहीं है. परमधामकी ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त आज तक किसीको भी इन लीलाओंका ज्ञान नहीं था.

ब्रह्मसृष्ट बिना न जाने कोए, ए सृष्ट ब्रह्मथें न्यारी न होए ।
सो निध ब्रह्मसृष्ट ल्याइयां इत, ना तो ए लीला दुनियामें कित ॥ ७२

ब्रह्मात्माओंके बिना इस घरकी रहस्यमयी लीलाको कोई भी जान नहीं सकता और ये ब्रह्मात्माएँ कभी भी अपने धामधनीसे अलग नहीं होतीं. परमधामकी इस अलौकिक निधिको ब्रह्मात्माएँ ही इस संसारमें ले आईं हैं, अन्यथा इस झूठी दुनियामें यह अखण्ड वस्तु कैसे आ सकती थी ?

ए बानी धनी मुखथें कहे, सो ए दुनिया क्यों कर लहे ।
गांगजीभाई मिले इन अवसर, तिन ए बचन लिए चित धर ॥ ७३

इस प्रकारकी वाणी सद्गुरुने अपने श्रीमुखसे कही है, उसे इस संसारके लोग कैसे ग्रहण कर सकते ? ऐसे में श्रीगाङ्गजी भाई सद्गुरुके चरणोंमें पहुँचे. उन्होंने ही सर्वप्रथम इस वाणीको हृदयङ्गम किया.

कर बिचार पूछे बचन, नीके अरथ लिए जो इन ।
जब समझाई पारकी बान, तब धनी की भई पेहेचान ॥ ७४

सद्गुरुके वचनों पर विचार करते हुए उन्होंने अनेक प्रश्न भी पूछे और उनके अर्थको भी हृदयङ्गम किया. जब उन्हें परमधामकी बातें समझमें आईं, तब उन्होंने धामधनीको सद्गुरुके रूपमें पहचाना.

अपने घरों लिए बुलाए, सेवा करी बोहोत चित ल्याए ।
सनेहसों सेवा करी जो घनी, पेहेचान के अपना धामधनी ॥ ७५

गाङ्गजीभाईने सद्गुरुको अपने घरमें बुला लिया और प्रेमपूर्ण हृदयसे उनकी सेवा की. इस प्रकार सद्गुरुको साक्षात् धामधानी (पूर्णब्रह्म परमात्मा)

समझकर गाङ्गजीभाईने स्नेह पूर्वक उनकी सेवा की.

तब श्री मुख बचन कहे प्राणनाथ, ढूंढ काढना अपना साथ ।
माया मिने आई सृष्ट ब्रह्म, सो बुलावन आए हम ॥ ७६

प्राणनाथ स्वरूप सद्गुरुने गाङ्गजीभाईको अपने श्रीमुखसे कहा, हमें सुन्दरसाथ (ब्रह्मात्माओं) को खोज निकालना है. ब्रह्मसृष्टियाँ इस मायामें (खेल देखनेके लिए) आई हैं, इसलिए उन्हें बुलानेके लिए हमारा यहाँ आना हुआ है.

हम आए हैं इतने काम, ब्रह्मसृष्ट लेने घर धाम ।
तब गांगाजीभाई पायो अचरज मन, कौन मानसी पारके बचन ॥ ७७

हमारा यहाँ पर मात्र इसी उद्देश्यसे आना हुआ है कि ब्रह्मात्माओंको अपने घर परमधाम ले जाना है. यह सुनकर गाङ्गजीभाईके मनमें बड़ा आश्चर्य हुआ और वे कहने लगे, पारके इन वचनों पर कौन विश्वास करेगा ?

कह्या ब्रह्मसृष्ट क्यों मिलसी, चाल तुमारी क्यों चलसी ।
मोहजल पूर तीखा अति जोर, नख अंगुरी को ले जाए तोर ॥ ७८

गाङ्गजीभाई पुनः कहने लगे, ब्रह्मात्माएँ इस जगतमें कैसे मिलेंगी और आपका अनुसरण कैसे कर पाएँगी ? क्योंकि यहाँ तो मोहजलका प्रवाह अत्यन्त तीव्र (तीक्ष्ण) है, वह नख मात्रके स्पर्श होने पर भी अँगुलीको तोड़ देता है.

तरंग बडे मेर से होए, इत खडा ना रेहेने पावे कोए ।
लेहेरें पर लेहेरें मारे घेर, मांहें देत भमरियां फेर ॥ ७९

इस मोह सागरमें पर्वतके समान (काम, क्रोध, लोभ, मोह आदिकी) ऊँची-ऊँची लहरें उठा करतीं हैं. इसलिए इनमें कोई भी खड़ा नहीं रह पाता. एक लहरके ऊपर दूसरी लहर प्रहार करती है और बीच-बीचमें (सत्व, रज एवं तम इन गुणोंकी) भँवरी भी फिरती है.

आडे टेढे मांहें बेहेवट, विक्राल जीव मांहें विकट ।
दुखरूपी सागर निपट, किनार बेट न काहूं निकट ॥ ८०

मोहसागरकी ये तेज लहरें कोई ऊँची हैं, कोई तिरछी हैं. इसके अन्दर भयंकर

जीवोंके समान ईर्ष्या, द्वेष आदि मानवको मृत्युकी ओर घसीटते हैं. इस निपट दुःखके महासागरका कोई किनारा तथा टापू (आश्रयदाताके रूपमें सद्गुरु) निकट दिखाई नहीं देता.

ऊंचा नीचा गेहेरा गिरदवाए, कठन समया इत पोहोंचा आए ।
हाथ ना सूझे सिर ना पाए, इन अंधेरी से निकस्यो न जाए ॥ ८१

यह मोह सागर ऊँचा, नीचा, गहरा तथा चारों ओर विशालरूपमें फैला हुआ है (इन चौदहलोकोंमें सर्वत्र मोह व्याप्त है). बड़ा कठिन समय सामने आ गया है. अज्ञानका अन्धकार इतना व्याप्त है कि स्वयंको अपने हाथ पैर तथा सिर भी नहीं सूझते हैं (अज्ञानके कारण आत्माएँ स्वयंको तथा अपने अङ्गी परमात्माको भी पहचान नहीं सकतीं). ऐसे समयमें इस अज्ञानरूपी अन्धकारसे बाहर नहीं निकला जा सकता.

चढ्यो मायाको जोर अमल, भूलियां आप मांहें घर छल ।
ना सुध धनी ना मूल अकल, इन मोहजलको ऐसो बल ॥ ८२

मायाका नशा (अमल) ब्रह्मात्माओंको भी इतने जोरसे चढ़ गया है कि वे स्वयं तथा अपने मूल घर परमधामको भी भूल गईं. उन्हें न अपने धामधनीकी सुधि रही, न ही अपनी मूल (जागृत) बुद्धिकी सुधि रही. वस्तुतः मोहजलका इतना बड़ा प्रभाव है.

बचन बेहद के पार के पार, सो क्यों माने हदको संसार ।
त्रगुन महाविस्नु मोह अहंकार, ए हद सास्त्रों करी पुकार ॥ ८३

आपके वचन बेहदसे परे अक्षर तथा उससे भी परे परमधामके हैं. इस सीमित संसार (हद) के जीव उन्हें कैसे मानेंगे (समझेंगे) ? शास्त्रोंने स्पष्ट रूपसे कहा है कि त्रिगुण (सत्व, रज, तम एवं इन तीनोंके अधिपति ब्रह्मा, विष्णु महेश), महाविष्णु (भगवान नारायण), मोह-अहंकार ये सब हद (नाशवान जगतकी सीमा) के अन्तर्गत आते हैं.

ब्रह्मसृष्ट भी धरे मोहके आकार, सो इत आवसी कौन प्रकार ।
तब श्री धनीजीएं कहे बचन, बेहेर द्रष्ट होसी रोसन ॥ ८४

ब्रह्मात्माओंने भी इसी मोहका शरीर धारण किया है. वे इस मोहमें-से निकल

कर आपके वचनोंकी ओर कैसे आ पाएँगी ? तब धामधनी सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी महाराजने कहा, बाह्य दृष्टि प्रकाशित होगी अर्थात् चमत्कारी (आड़िका) लीलाओंके द्वारा सब ब्रह्मात्माएँ आकर्षित होंगी.

ए बंधेज कियो अति जोर, रात मेटके करसी भोर ।
प्रतछ परमान देसी दरसन, ए लीला चित धरसी जिन ॥ ८५

चमत्कारी लीलाओंका यह विधान (बन्धन) अति प्रबल है. इससे अज्ञानरूपी रात मिटकर ज्ञानका प्रभात उदय होगा. जो लोग यह लीला अपने चित्तमें धारण करेंगे उन्हें श्री कृष्णजी प्रत्यक्ष दर्शन देंगे.

साथ कारन आवसी धनी, घर घर वस्तां देसी घनी ।
साथ मांहें इत आरोगसी, विध विध के सुख उपजावसी ॥ ८६

सुन्दरसाथको प्रेरित करनेके लिए धामधनी श्रीकृष्ण प्रकट होंगे और घर-घरमें अलौकिक वस्तुएँ वितरित करेंगे. वे ब्रह्मात्माओंके बीच विराजमान हो कर भोजन ग्रहण करेंगे तथा विभिन्न प्रकारसे उन्हें आनन्दित करेंगे.

अचरा पकड पीउ देखलावसी, एक दूजीको प्रेम सिखलावसी ।
ए लीला बढसी विस्तार, साथ अंग होसी करार ॥ ८७

जिन आत्माओंको श्रीकृष्णजीके दर्शन होंगे वे उनका आँचल पकड़कर दूसरोंको भी उनके दर्शन करवाएँगीं. इस प्रकार आत्माएँ एक दूसरेको प्रेम सिखाएँगीं. इस लीलाका विस्तार बढ़ता जाएगा जिससे समस्त सुन्दरसाथको आनन्द (शान्ति)मिलेगा.

तब बानी को करसी बिचार, सब माएने होसी निरवार ।
तब आवसी ब्रह्मसृष्ट, जाहेर निसान देखसी द्रष्ट ॥ ८८

तब सभी जन अखण्ड परमधामका बोध करवाने वाली वाणी (तारतम ज्ञान) पर विचार करेंगे उस समय शास्त्रोंके सभी अर्थ स्पष्ट होंगे. तब शास्त्रोंके उन सङ्केतोंको प्रत्यक्ष देखकर ब्रह्मात्माएँ आएँगी.

ए बंधेज कियो उतम, पर धामकी निध सो कही तारतम ।
जिन सेती होवे पेहेचान, नजरों आवे सब निसान ॥ ८९

इस प्रकार धामधनीने चमत्कारी (आड़िका) लीलाओंका उत्तम विधान

(बन्धेज) किया है, किन्तु परमधामकी वास्तविक निधि तो तारतम ज्ञान है. जिन आत्माओंको इस ज्ञानके द्वारा अपनी पहचान होगी, उनकी दृष्टि (स्मृति) में परमधामके सभी सङ्केत स्पष्ट उभर आएँगे.

तब गांगजीभाई पाए मन उछरंग, किए क्रतब अति घने रंग ।
सनेहसों सेवा करी जो अत, पेहेचानके धाम धनी हुए गलित ॥ ९०

सद्गुरुके ये वचन सुनकर श्रीगाङ्गजीभाईका मन उमङ्गसे भर आया और उन्होंने अपने कर्तव्यका पूरा पालन किया. सद्गुरुके रूपमें धामधनीको पहचानकर उन्होंने द्रवित हृदयसे सद्गुरुकी स्नेह पूर्वक सेवा की.

साथसों हेत कियो अपार, सुफल कियो अपनो अवतार ।
मैं श्रीसुन्दरबाई के चरने रहूं, एह दया मुख किन विध कहूं ॥ ९१

गाङ्गजीभाईने सब सुन्दरसाथके साथ भी अपार स्नेह किया और अपना अवतार (जन्म) सफल बनाया. मैंने निश्चय किया कि मैं सदैव श्रीसुन्दरबाई (सद्गुरु) के श्रीचरणोंमें रहूँ. इस झूठी जिह्वासे सद्गुरुकी कृपाका वर्णन कैसे हो सकता है ?

कह्यो ताको इन्द्रावती नाम, ब्रह्मसृष्ट मिने घर धाम ।
मों पर धनी हुए प्रसंन, सोंपे धामके मूल बचन ॥ ९२

परमधामकी ब्रह्मात्माओमेंसे उन्होंने मेरी आत्माका नाम इन्द्रावती कहा. धामधनी सद्गुरु मुझपर अति प्रसन्न हुए और परमधामके मूल वचनके रूपमें उन्होंने मुझे तारतम ज्ञान सौंपा.

आदके द्वार ना खुले आज दिन, ऐसा हुआ ना कोई खोले हम बिन ।
सो कुंजी दई मेरे हाथ, तूं खोल कारन अपने साथ ॥ ९३

उन्होंने बताया कि आज दिन तक परमधामके द्वार नहीं खुले थे (अर्थात् शास्त्रोंके अर्थ स्पष्ट नहीं हुए थे) हमारे बिना ऐसा कोई भी नहीं हुआ कि उन (रहस्यों) को खोल (स्पष्ट कर) सके. उन द्वारोंको खोलनेकी कुञ्जी (तारतम ज्ञान) मेरे हाथमें देते हुए सद्गुरुने मुझे आदेश दिया, 'तुम अपने सुन्दरसाथके लिए उन रहस्योंको खोल दो.'

मोहे करी सरीखी आप, टालने हम सबोंकी ताप ।
आतम संग भई जाग्रत बुध, सुपनथें जगाए करी मोहे सुध ॥ ९४

हम सब ब्रह्मात्माओंका सन्ताप मिटानेके लिए सद्गुरुने मेरे हृदयमें बैठकर मुझे अपने समान बनाया. मेरी अन्तर आत्मामें उनकी जागृत बुद्धिका प्रवेश हुआ. इस स्वप्नवत् संसारमें सोई हुई मेरी आत्माको जगाकर उन्होंने मुझे सब प्रकारकी सुधि दी.

श्रीधनीजीको जोस आतम दुलहिन, नूर हुकम बुध मूल वतन ।
ए पांचों मिल भई महामत, वेद कतेबों पोहोंची सरत ॥ ९५

श्रीधनीजीका जोश, श्रीश्यामाजीकी आत्मा, अक्षरब्रह्मका नूर, श्रीराजजीका आदेश, परमधामकी मूल बुद्धि (तारतम ज्ञान) इन पाँचों शक्तियोंको प्राप्तकर मैं महामति बन गई. वेद शास्त्रों तथा कुरानादिकी भविष्य वाणी (परब्रह्मका ज्ञान संसारमें आएगा ऐसी) का समय आ गया है.

या कुरान या पुरान, ए कागद दोऊ परवान ।
याके मगज माएने हम पास, अंदर आएके खोले प्राणनाथ ॥ ९६

वेद पुराण आदि शास्त्र तथा कुरान आदि कतेब ग्रन्थ पूर्णब्रह्म परमात्माकी पहचानके लिए प्रमाण स्वरूप साक्षी ग्रन्थ हैं. इन सभीका गूढ़ रहस्य (साङ्केतिक अर्थ) हमारे पास है क्योंकि हमारे प्राणनाथ–सद्गुरु मेरे हृदयमें विराजकर, ये सब गूढ़ अर्थ खोल रहे हैं.

आप भी ना खोले दरबार, सो मुझसे खोलाए कियो विस्तार ।
मोहे दई तारतमकी करनवार, सो काहूं न अटकों निरधार ॥ ९७

सद्गुरुने उन शास्त्रों (वचनों) का स्पष्टीकरण कर स्वयं परमधामके द्वार नहीं खोले, अपितु मुझसे खुलवाकर उनका विस्तार करवाया. उन्होंने मुझे तारतम ज्ञान रूपी नौका दी है. अब मैं निश्चयही इस भवसागरमें कहीं भी नहीं रुकूँगा.

सब संसेको कियो निरवार, कोई संसा ना रह्या वार के पार ।
रोसन करूं लेऊं हुकम बजाए, ब्रह्मसृष्ट और दुनिया देऊं जगाए ॥ ९८

सद्गुरुने मेरे सभी संशयोंका निवारण किया. भवसागर तथा परमधामके

विषयमें अब कोई संशय शेष नहीं रहा. इसलिए अब मैं सद्गुरुकी आज्ञाका पालन करते हुए (तारतम ज्ञान द्वारा) पूरे संसारको प्रकाशित कर दूँ एवं ब्रह्मात्माओं तथा दुनियाँके जीवोंको माया मोहरूपी नींदसे जगा दूँ.

द्वार तोबा के खुले हैं अब, पीछे तो दुनियां मिलसी सब ।
जब द्वार तोबा के मूंदयो, रैन गई भोर जो भयो ॥ ९९

अभी प्रायश्चितके लिए द्वार खुले हुए हैं. बादमें तो संसारके सभी लोग एक हो जाएँगे. जब प्रायश्चितके द्वार बन्द होंगे, तब अज्ञानरूपी रात्रिका समापन होकर ज्ञानरूप प्रभातका उदय होगा. (तात्पर्य यह है कि सद्गुरु तथा श्रीजीके समयमें प्रायश्चितका मार्ग खुला रहेगा तत्पश्चातकी भूलोंके लिए दुःखाग्निमें जलकर ही शुद्ध होना पड़ेगा).

या भली या बुरी, जिनहूं जैसी फैल जो करी ।
तब आगूं आई सबोंकी करनी, जिन जैसी करी आप अपनी ॥ १००

भले (अच्छे) या बुरे कार्य जिन्होंने जैसे भी किए हों, उस समय अपनी-अपनी करनी अनुसारका फल सबके सामने आएगा (अर्थात् सबको अपनी करनी अनुसारका परिणाम भोगना पड़ेगा, क्षमा नहीं दी जाएगी.)

तब कोई नहीं किसी के संग, दुख सुख लेवे अपने अंग ।
करूं ब्रह्मसृष्ट को मिलाप, अखंड सूर उदे भयो आप ॥ १०१

(इस जागनी लीलाके समय जो जागृत नहीं होगा) फिर कोई भी उसका साथ नहीं देगा. सबको अपने दुःख - सुख स्वयं भोगने पड़ेंगे. अब अखण्ड ज्ञानका सूर्य उदय हो गया है. अतः इसके प्रकाशमें समस्त ब्रह्मात्माओंको एक सूत्रमें बाँधकर उनका मिलाप करवाता हूँ.

विस्व मिली करने दीदार, पीछे कोई ना रहे मिने संसार ।
ब्रह्मसृष्ट को पिया संग सुख, सो कह्यो न जाए या मुख ॥ १०२

समग्र विश्वके लोग पूर्णब्रह्म परमात्मा (तथा उनके परिचायक ब्रह्मात्माओं) के दर्शन (पहचान) के लिए एकत्र हुए हैं. कोई भी दर्शनसे वञ्चित नहीं रहना चाहता. (जब दुनियाँकी यह स्थिति है तो) ब्रह्मात्माओंको तो अपने

धनीके मिलनसे जो आनन्द प्राप्त हुआ है, उसका वर्णन इस जिह्वासे नहीं हो सकता.

ब्रह्मसृष्ट को ऐसो नूर, जो दुनिया थी बिना अंकूर ।
ताए नए अंकूर जो कर, किए नेहेचल देख नजर ॥ १०३

ब्रह्मसृष्टियोंका ऐसा तेज (ओज) है कि जिन मायावी जीवोंका अंकुर परमधाममें नहीं था, उन्हें नया अंकुर प्रदान कर उन्होंने अपनी कृपा दृष्टिके द्वारा उनको अखण्ड कर दिया.

श्री धनीजीको दीदार सब कोई देख, होए गई दुनिया सब एक ।
किनहूं कछुए ना कह्यो, क्रोध ब्रोध कांहूंको ना रह्यो ॥ १०४

धामधनी पूर्णब्रह्म परमात्माके दर्शन (अनुभव) प्राप्त कर दुनियाँके सभी लोग एकरस हो गए. इस विषयमें कोई भी कुछ कह नहीं पाए. किसीके भी मनमें क्रोध, विरोध (वैमनस्य) इत्यादि नहीं रहे.

श्री धनीजी को ऐसो जस, दुनिया आपे भई एक रस ।
तेज जोत प्रकास जो ऐसो, काहूं संसे ना रह्यो कैसो ॥ १०५

धामधनीकी कीर्ति (महिमा) ही ऐसी है कि सारी दुनियाँ स्वतः एकरस हो गई. उनके दिव्य ज्ञानका तेजस्वी प्रकाश ही ऐसा है कि जिससे किसी भी प्रकारसे संशय शेष नहीं रहते.

सब जातें मिली एक ठौर, कोई ना नकहे धनी मेरा और ।
पियाके बिरहसों निरमल किए, पीछे अखंड सुख सबोंको दिए ॥ १०६

सब जातियाँ एक स्थान पर एकत्र हो गईं. अब कोई भी ऐसा नहीं कहता कि परब्रह्म परमात्माको छोड़कर मेरा कोई दूसरा स्वामी (प्रियतम धनी) है. धामधनीने ब्रह्मात्माओंको अपना विरह देकर उनके अन्तःकरणको निर्मल बना दिया और फिर सबको अखण्ड सुख प्रदान किया.

ए ब्रह्मलीला भई जो इत, सो कबहूं हुई ना होसी कित ।
ना तो कै उपज गए इंड, भी आगे होसी कै ब्रह्मांड ॥ १०७

इस संसारमें यह जो ब्रह्म लीला हुई है वह पहले कभी भी कहीं भी नहीं

हुई थी और भविष्यमें भी नहीं होगी, अन्यथा अक्षरब्रह्मकी कल्पना मात्रसे (पहले भी) अनेक ब्रह्माण्ड उत्पन्न हो गए हैं और भविष्यमें भी होंगे.

ए तीन ब्रह्मांड हुए जो अब, ऐसे हुए ना होसी कब ।
इन तीनोंमें ब्रह्मलीला भई, ब्रज रास और जागनी कही ॥ १०८

ये तीन ब्रह्माण्ड (व्रज, रास और जागनी) इस बार बने हैं, ऐसे कभी भी नहीं हुए थे और भविष्यमें भी नहीं होंगे. इन तीनोंमें ब्रह्मलीला सम्पन्न हुई है जिन्हें व्रज, रास और जागनी कहा गया है.

ज्यों नींद में देखिए सुपन, यों ब्रज को सुख लियो सैयन ।
सुपन जोगमाया को जोए, आधी नींद में देख्या सोए ॥ १०९

जैसे नींदमें स्वप्न देखा जाता है, उसी प्रकार ब्रह्मात्मात्माओंने व्रजलीलाके सुखका अनुभव किया. योगमायाके रास मण्डलका स्वप्न आधी नींद (अर्धजागृति) में देखा.

कछुक नींद कछुक सुध, रास को सुख लियो या विध ।
जागनी को जागते सुख, ए लीला सुख क्यों कहूं या मुख ॥ ११०

कुछ निद्रावस्था (अज्ञान) में तथा कुछ जागते हुए (सुधिमें) ब्रह्मात्माओंने रासका सुख अनुभव किया. (रासलीलाके समय पूर्ण पहचान नहीं थी, इसलिए संयोग वियोग दोनोंका थोड़ा-थोड़ा अनुभव किया) किन्तु जागनी लीलाका सुख तो जागृत अवस्थामें प्राप्त कर रहे हैं. (यह लीला तो पूर्णज्ञानका प्रभात है) अतः इस लीलाका सुख जिह्वासे बताया नहीं जा सकता.

जागनीमें लीला धाम जाहेर, निसान हिरदें लिए चित धर ।
तब उपज्यो आनंद सबों करार, ले नजरों लीला नित विहार ॥ १११

इस जागनीमें परमधाम तथा वहाँकी अखण्ड लीला स्पष्ट (प्रकट)हुई है. सभीने परमधामके संकेत अपने हृदयमें धारण कर लिए.तब सबके हृदयमें परम आनन्द तथा परम शान्तिका अनुभव हुआ. सबने परमधामकी लीलाके नित्य विहारका दर्शन (अनुभव) किया.

इतहीं बैठे घर जागे धाम, पूरन मनोरथ हुए सब काम ।
धनी महामत हंस ताली दें, साथ उठा हंसता सुख लें ॥ ११२

तारतम ज्ञानके प्रतापसे ब्रह्मात्माएँ संसारमें रहती हुई भी परमधाममें जाग्रत हुईं. सबके मनोरथ सब प्रकारसे पूर्ण हो गए. महामति कहते हैं, धामधनीने ब्रह्मात्माओंको जागृत करनेके लिए हँसते हुए ताली दी और समस्त ब्रह्मात्माएँ भी हँसती हुई परमधाममें जागृत हुईं.

प्रकरण ३७ चौपाई ११८५

श्री प्रकाश (हिन्दुस्थानी) सम्पूर्ण

पहले बीज उदय हुआ, पुरी जहां नौतन ।
सब पुरियों में उत्तम, हुई धन धन ॥

ए मधे जे पुरी कहावे, नौतन जेहनुं नाम ।
उत्तम चौदे भवनमां, जिहां वालानो विश्राम ॥

– *महामति श्री प्राणनाथ*

श्री ५ नवतनपुरीधाम, जामनगर